ज्ञान सरोवर

भाग २

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

दिया है। पढे लिखे लोगो की गिनती देश मे बढती जा रही है। अगर उन्हे अच्छी किताबे नही मिलेगी तो पढाई लिखाई के फैलने से देश का बल बढने की जगह हमारी कठिनाइयाँ बढ सकती है। इन नई किताबो के लिखाने मे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जहाँ उन्हे पढकर लोगो को अपनी सामाजिक और आर्थिक हालत सुधारने मे मदद मिले, उनमे बुद्धि और विज्ञान की क़द्र बढे और उनमे वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास हो, वहाँ ऐसा भी न हो कि भारत की पुरानी सभ्यता मे जो अच्छी बाते है उन्हे वे भूल जाएँ।

इस माँग को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने 'जन साधारण के लिए 'ज्ञान सरोवर' नाम से एक विश्व कोश लिखाने की व्यवस्था की है। इस विश्व कोश की तैयारी मे यह ध्यान रक्खा गया है कि आम लोग इसे पढे तो आजकल की दुनिया मे जो नए नए आर्थिक और राजनीतिक विचार पैदा हो रहे है, उनको समझने लगे और विज्ञान तथा तकनीक मे जो दिन दिन बढती हो रही है उसे भी जान ले। इस तरह अपनी जानकारी बढाकर हमारे देश के लोग नए भारत के और अच्छे नागरिक बन सकेंगे। इन सब बातो को इस विश्व कोश मे ऐसी भाषा मे बताने की चेष्टा की गई है, जो आम लोगो की भाषा है और जिसे सब आसानी से समझ सकते है। हमे आशा है कि यह विश्व कोश इन बातो को पूरा करेगा और हमारे देश के लोगो को इस तरह की बाते बताएगा, जिनसे वे अपनी पुरानी सभ्यता की सचाइयों को पूरी तरह समझते हुए आजकल के विज्ञान और वैज्ञानिक ढग की क़द्र करने लगे।

—हुमायूँ कबीर

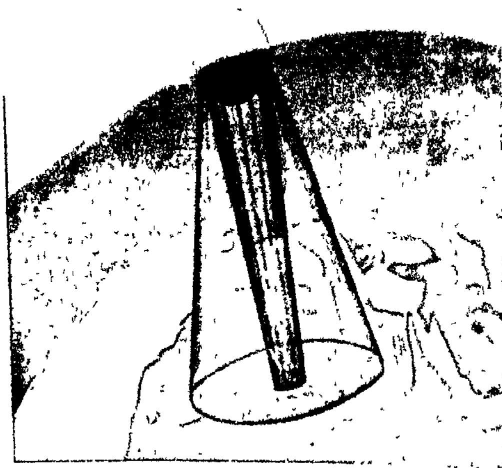
विषय-सूची



सूरज, चाँद और बुध ★

सूरज को हम रोज देखते है। देखने मे वह बहुत छोटा लगता है, पर है बहुत बड़ा। इतना बडा कि अदाजा लगाना कठिन है। वह हमारी पृथ्वी से लगभग १३ लाख गुना बड़ा है और उसके आरपार की लम्बाई पृथ्वी के आरपार की लम्बाई से लगभग सवा सौ गुनी अधिक है। इतना बडा होते हुए भी सूरज हमे छोटा दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि वह हमसे लगभग सवा नौ करोड़ मील दूर है।

बडी बडी दूरबीनों की सहायता से सूरज का फोटो खीचकर उस फोटो को, या गाढे रग का चश्मा लगा कर सूरज को, देखने से मालूम होता है कि उसकी सतह की सफेदी सब जगह एक जैसी नही है। इतना ही नही सतह पर कही कही काले धब्बे भी दिखाई देते है। उन धब्बों को 'सूरज के धब्बे' कहते है।



जब चांद सूर्य और पृथ्वी के बीच में आ जाता है, तब पृथ्वी की सतह पर चांद की छाया पड़ने से सूर्यग्रहण होता है। इस चित्र में यह दिखाया गया है कि शून्य में हजारों मील की दूरी से सूर्यग्रहण कैसा दिखाई देगा।

सूरज के धब्बो को देखने से यह भी पता चलता है कि सूरज अपनी धुरी पर बराबर घूमता रहता है और लगभग २५ दिन मे एक चक्कर लगा लेता है। हमारी पृथ्वी अपनी धुरी पर केवल एक दिन और रात में पूरा चक्कर लगा लेती है।

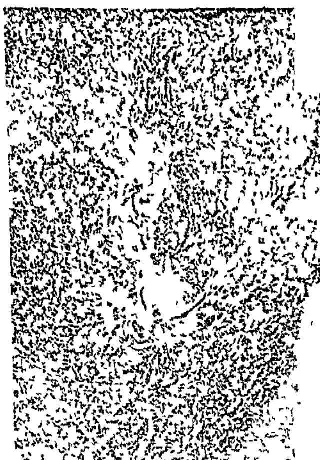
सूरज के धब्बों की सख्या नियमानुसार घटती बढती रहती है। लगभग हर ग्यारहवे बरस उनकी सख्या बहुत बढ जाती है। उस समय कभी कभी कुछ धब्बे इतने बड़े हो जाते है कि नंगी आँख से भी दिखाई देने लगते है। किन्तु खूब गाढे रंग का या कालिख लगा शीशा लगाए विना उन्हें देखना आँखो के लिए बहुत खतरनाक है। गाढे रंग के शीशे के बदले फिल्म के किसी बहुत काले निगेटिव से भी उन्हें देखा जा सकता है। काले निगेटिव किसी भी फोटोगराफर के यहाँ से आसानी से मिल सकते है।

सूर्य-ग्रहण के समय सूरज के गोले पर चद्रमा की छाया पड़ती है। उस समय सूरज के वे हिस्से भी दिखाई देने लगते है जिनमे प्रकाश कम होता है। ग्रहण के समय सूरज के जिस भाग पर चद्रमा की छाया पड़ती है उस भाग से लाल लाल लपटे निकलती दिखाई देती है। उन लपटों को "रक्त-ज्वालाएँ" कहते है। उनके अलावा सूरज के चारों ओर मोतियो के समान झलकती हुई झालर सी दिखाई देती है, जो बहुत सुंदर लगती है। उसे "सूर्य-मुकुट" कहते है। पूरा सूर्य-ग्रहण आम तौर से केवल ऐसी जगहो से दिखाई देता है, जहाँ साधारण लोगो की पहुँच बहुत कठिन होती है। लेकिन दुनिया के बडे बडे ज्योतिषी

हजारो लाखो रुपए खर्च करके वहाँ पहुँचते है, क्योकि उन्ही स्थानो पर पहुँचकर जाँच करने से सूरज के बारे मे नई नई बातें जानी जा सकती है।

सूरज हमे करोडो बरस से गरमी और प्रकाश दे रहा है। फिर भी उसकी गरमी समाप्त नही होती। कुछ विद्वानो ने हिसाब लगाकर बताया है कि यदि सूरज कोयले का ही बना होता तो अधिक से अधिक छ हजार बरस मे जलकर राख हो गया होता। इसलिए वह केवल कोयले का बना हुआ नही हो सकता। विद्वानो की राय है कि सूरज कोयले के साथ साथ लोहे, सीसे, चूने आदि अनेक पदार्थो से मिलकर बना है। सूरज की प्रचड गरमी उन्ही पदार्थो के आपस मे रगड खाने और जलने से पैदा होती है। कुछ लोगो का यह भी कहना है कि चूंकि सूरज धीरे धीरे ठढा होकर सिकुड रहा है, और सिकुडने के कारण उसकी ऊपरी तहे भीतरी तहो से रगड खाती है, इसलिए उस रगड के कारण गरमी पैदा होती है।

सूरज के ऊपर छाई हुई हाइड्रोजन गैस



कुछ भी हो, सूरज के प्रकाश की वैज्ञानिक जाँच से यह निश्चित हो चुका है कि सूरज कई तरह की गैसो का पिड है। उसकी सतह बहुत गरम है। वहाँ हाईड्रोजन (पानी मे पाई जाने वाली गैस) और कैलशियम (चूने

में पाई जाने वाली धातु) बहुत अधिक है। उनके अलावा पृथ्वी पर पाए जानेवाले दूसरे सब पदार्थ भी वहाँ मौजूद है। एक बार सूरज में एक नया पदार्थ पाया गया जो उस समय तक पृथ्वी पर कभी नहीं देखा गया था। उसका नाम 'हीलियम' रखा गया, क्योंकि लैटिन भाषा मे सूरज को 'हीलियस' कहते है। कुछ समय बाद पता चला कि 'हीलियम' एक प्रकार की गैस है जो पृथ्वी पर भी मिलती है। बाद को वह इतनी अधिक पाई जाने लगी कि ज़ेपलिन कहे जानेवाले बड़े बड़े गुब्बारे जैसे हवाई जहाज उससे भरे जाने लगे, क्योंकि हीलियम बहुत हलकी गैस होती है और उसमे आग लगने का डर नही रहता।

इन सारी बातों का निचोड यह है कि सूरज हमारी पृथ्वी से बहुत दूर है। वह सदा अपनी ही धुरी पर घूमता रहता है। उसकी सतह पर कहीं कही काले धब्बे दिखाई देते है जो बनते बिगडते रहते है। उन धब्बो की चाल और बनावट के आधार पर अनुमान किया जाता है कि सूरज पृथ्वी की भाँति ठोस नही है, बल्कि वह तरह तरह की गैसो का एक पिड है, जिसमे उफनते हुए समुन्दर की तरह हलचल मची रहती है। पृथ्वी पर पाए जानेवाले सभी पदार्थ सूरज पर पाए जाते हैं।

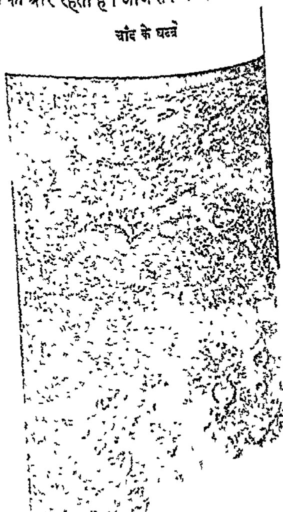
यह सही है कि सूरज के बारे मे ज्योतिषियो और वैज्ञानिको को अभी पूरी जानकारी नही हो पाई है, किंतु उनकी खोज जारी है। वे लोग सूरज की शक्ति से और लाभ उठाने के लिए तरह तरह के प्रयोग कर रहे है। सूरज की किरणों से कई तरह के रोगों का इलाज तो बहुत पहले से होता आया है, अब उनसे भाप और बिजली

भी पैदा करने की कोशिश की जा रही है। इन कोशिशों के सफल हो जाने पर धूप की शक्ति से बड़े बड़े कारखाने और इंजन चलाए जा सकेंगे।

चाँद की ओर जितना हमारा ध्यान जाता है, उतना आकाश के और किसी पिंड की ओर नहीं जाता। चाँद रोज घटता बढ़ता है। उसका जितना हिस्सा रोज घटता या बढ़ता है, उतने हिस्से को एक 'कला' कहते है। उसके घटने को कला-क्षय और बढ़ने को कला-वृद्धि कहते है। सूरज की तरह चाँद एक समान गोल नहीं दिखाई देता। कारण यह है कि चाँद अपनी चमक से नहीं चमकता। हमें उसका केवल उतना ही भाग दिखाई देता है जितने पर सूरज का प्रकाश पड़ता है।

चाँद हमारी पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाता है, परंतु वह इस तरह घूमता है कि हमेशा उसका एक ही रुख पृथ्वी की ओर रहता है। आज तक कोई भी उसका दूसरा रुख नहीं देख सका। पृथ्वी के चारो ओर घूमते समय चाँद की चाल कभी तेज, कभी साधारण और कभी बहुत धीमी हो जाती है। इसका कोई निश्चित नियम नहीं मालूम हो सका है। इसी कारण ज्योतिषी लोग चंद्र-ग्रहण के सर्वग्रास का समय बिल्कुल सही नहीं बता पाते। दो एक पल का फरक रह ही जाता है।

चाँद के धब्बे



सूरज की भांति चांद में भी काले काले धब्बे दिखाई देते है। देश देश के लोगों ने उन धब्बो के आकार के बारे मे अलग अलग धारणाएँ बना रखी हैं। कही उन धब्बों को चरखा कातती हुई बुढिया की परछाई, कहीं हिरन और कहीं ख़रगोश समझा जाता है। पर बडी दूरबीन से देखने पर साफ दिखाई देता है कि वे काले धब्बे वास्तव मे बडे बडे मैदान है, जिनमे बडे बडे गड्ढे और ऊँचे ऊँचे पहाड़ हैं। दूरबीन का आविष्कार करनेवाले गैलीलियो ने उन्हे समुन्दर समझा था, क्योकि उसकी छोटी सी दूरबीन से चॉद की सपाट सतह ही दिखाई देती थी, उस पर उभरे हुए पहाड नही दिखाई देते थे। सुबह और शाम को जब चॉद की चमक फीकी होती है तब उसके धब्बे बहुत साफ़ दिखाई देते हैं।



पहले दूरबीन का आविष्कारक गैलीलि

आँखो से देखने मे चद्रमा सुदर दिखाई देता है। किंतु दूरबीन से देखन में वह और भी सुदर लगता है। दूरबीन से देखने के लिए तीज या चौथ का दिन सबसे अच्छा होता है। इन दो दिनो चॉद के जिस भाग मे रोशनी रहती है, उसके भीतरी छोर पर सूरज की धूप तिरछी पडती है, जिससे वहाँ के ज्वालामुखी पहाडो की परछाइयाँ लम्बी होकर पडती है। उस समय साफ दिखाई देता है कि चाँद की सतह के पहाड उभरे हुए है और ज्वालामुखी पहाड गड्ढो जैसे है।

दूरबीन से देखने पर चाँद में पाँच खास चीजें दिखाई देती हैं,—

(१) काले काले सपाट भाग, जो वास्तव में मैदान हैं; (२) ज्वालामुखी पहाड़, (३) साधारण पहाड़, (४) दरारें, जो मैदानों या पहाड़ों के फट जाने से बनी हैं, और (५) चमकीली धारियाँ, जो ज्वालामुखी या दूसरे पहाड़ों से निकलकर मीलों तक चली गई हैं।



चाँद में दिखाई देनेवाली पाँच खास चीजें

चाँद पृथ्वी से छोटा है। उसका घेरा पृथ्वी के घेरे के लगभग पचासवें भाग के बराबर है। उसके आरपार की लम्बाई २,१६० मील है। यह लम्बाई पृथ्वी के आरपार की लम्बाई के चौथाई से कुछ अधिक है। चाँद का वजन पृथ्वी के वजन के लगभग ८०वें भाग के बराबर है। उसकी आकर्षण-शक्ति भी पृथ्वी के मुकाबले

बहुत कम है। यदि चाँद पर किसी ऐसे आदमी को ले जाकर तौला जाए जिसका वजन पृथ्वी पर दो मन हो, तो चाँद पर उसका वजन लगभग दस सेर ही होगा।

चाँद पर जो पहाड़ हैं वे पृथ्वी के पहाड़ों ही जैसे ऊँचे ऊँचे है। अधिकतर पहाडों की चोटियाँ ५,००० से १२,००० फुट तक ऊँची है। किन्तु कहा जाता है कि कुछ चोटियों की ऊँचाई २६,००० से ३३,००० फुट तक भी है। हिमालय की 'एवरेस्ट' चोटी पृथ्वी की सबसे ऊँची चोटी है, जो केवल २९,१४१ फुट ऊँची है। यह बात अब मान ली गई है कि चाँद पर के ज्वालामुखी जैसे दिखाई देने वाले पहाड़ वास्तव मे ज्वालामुखी नही है, क्योकि उनके भीतर से लावा नही निकलता। पर उनकी शकल को देखकर वैज्ञानिको ने अनुमान किया कि कभी वे ज्वालामुखी पहाड रहे होंगे और उनसे लावा निकलता होगा। पृथ्वी के मुकाबले मे चाँद पर ऐसे पहाड़ कही अधिक है। उनके मुँह आम तौर पर गोल दिखाई देते है, जिनके चारों ओर की चारदीवारियाँ दो हजार फुट तक ऊँची है।

यदि आदमी चाँद पर पहुँच भी जाए तो वह जिन्दा नहीं रह सकता, क्योंकि वहाँ साँस लेने तक के लिए हवा नही है। हवा न होने से वहाँ कुछ सुनाई भी न देगा। हवा की लहरे ही आवाज को हमारे कानों तक पहुँचाती है। चाँद पर पहुँचकर आदमी अगर जिन्दा बच जाए तो हवा का दबाव न होने के कारण उसका वजन बहुत हलका फुलका रहेगा। वह साधारण कदम भी उठाएगा तो उसके डग पंदरह सोलह फुट के होंगे और जरा सी छलाँग में वह पचास फुट की ऊँचाई तक उछल जाएगा। वैज्ञानिको का विचार है कि पानी और हवा न होने के कारण चाँद पर जीव-जंतु न होंगे।

रही। वही टूटा हुआ टुकडा चाँद है, जो पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति मे बँधा हुआ हर घडी पृथ्वी के चारो ओर घूमता रहता है।

आकाश के दूसरे पिंडों के मुकाबले मे चाँद हमारी पृथ्वी के अधिक निकट है। फिर भी वह पृथ्वी से लगभग ढाई लाख मील दूर है। आजकल के साधारण हवाई जहाजो की चाल एक घंटे में तीन सौ मील से कुछ ज्यादा है। यदि वे आकाश की ऊपरी सतहों पर उड़ सकें तो लगभग एक महीने मे चाँद पर पहुँच सकते हैं। यद्यपि हवाई जहाजों का आकाश की ऊपरी सतहों मे उड़ना अभी संभव नही हो पाया है, फिर भी वैज्ञानिक लोगों को आशा है कि वह दिन दूर नही जब मनुष्य के लिए चाँद की सैर करना सभव हो जाएगा।

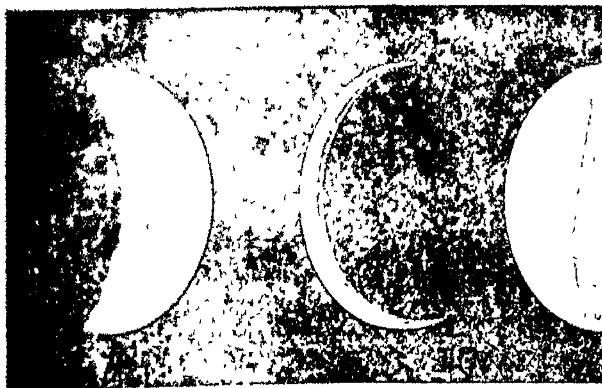
बुध सौर-मंडल का एक ग्रह है। सौर-मंडल के बारे मे 'ज्ञान सरोवर' के पहले भाग मे बताया जा चुका है। सूरज और चाँद के अलावा आकाश मे जो दूसरे अनगिनत चमकते हुए पिंड दिखाई देते है, उन्हे लोग आमतौर से 'तारे' कहते है। मगर ज्योतिषियो और वैज्ञानिको ने सूरज, चाँद और दूसरे पिडों को उनके गुण और काम के अनुसार तीन श्रेणियो में बाँटा है। कुछ पिड ग्रह कहलाते है, कुछ उपग्रह और कुछ तारे।

ग्रहों और तारों मे अतर यह है कि तारे एक दूसरे के आकर्षण के दायरे मे बँधकर नही चलते फिरते। पर ग्रह तारो के आकर्षण के दायरे मे बँधकर चलते फिरते रहते है। वे कभी एक तारे के पास पहुँच जाते है और कभी दूसरे तारे के पास। ग्रहों और तारों मे एक और भी अतर है। तारे हमारे सूरज की तरह तपते रहते है और स्वयं अपनी चमक से चमकते हैं। ग्रह ठंढ होते है और अपनी चमक से नही चमकते। जब उनके ऊपर सूरज का प्रकाश पड़ता है तभी वे हमे दिखाई देते है।

तारे पृथ्वी से बहुत दूर है। दूर तो ग्रह भी है, पर तारों की दूरी को देखते हुए ग्रहों को काफी निकट कहा जा सकता है। मोटे तौर पर समझाने के लिए कहा जा सकता है कि पृथ्वी से ग्रहो की दूरी कुछ ऐसी है जैसे बीस गज पर किसी पडोसी का मकान, और तारों की दूरी जैसे सात समुन्दर पार बसा अमरीका। सूरज तारा है। वह किसी और तारे के आकर्षण मे बँध कर नही चलता है। पृथ्वी ग्रह है क्योंकि वह सूरज के आकर्षण मे बँधकर सूरज के ही चारो ओर घूमती रहती है। चाँद न ग्रह है, न तारा। वह पृथ्वी का ही एक टुकडा है और उसके ही चारों ओर चक्कर लगाता रहता है। इसलिए उसे उपग्रह कहा जाता है। इस तरह आकाश मे जो पिंड चमक रहे है, उनमे से कुछ ग्रह, कुछ उपग्रह और कुछ तारे है।

बुध सौर-मडल के अन्य सभी ग्रहों के मुकाबले सूरज के अधिक पास है। उसके आरपार की लम्बाई ३,००० मील है। सूरज के पास होने के कारण वहाँ गरमी और रोशनी खूब होती है। बुध केवल ८८ दिन मे सूरज का चक्कर लगा लेता है। इस तरह वहाँ का एक बरस हमारे ८८ दिन के बराबर होता है। पृथ्वी की ही भाँति बुध भी अपनी धुरी पर घूमता है। उसे अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाने मे भी ८८ दिन ही लगते है।

बुध का मार्ग बहुत छोटा है। उस मार्ग को ज्योतिषी 'कक्षा' कहते हैं। बुध सूरज से बहुत दूर कभी नही हटता। बुध को देख पाना कठिन है। कारण यह है कि सूरज के बहुत पास होने से वह कभी सूरज से पहले नही निकलता। और निकलने पर सूरज के प्रकाश से वह इतना फीका पड



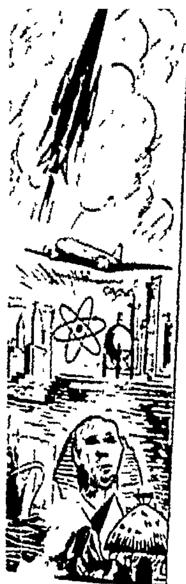
बुध की कलाएं

बुध पर कुछ धब्बे भी दिखाई देते हैं। उन्हे देखते रहने से पता चलता है कि चांद की तरह बुध का भी एक ही रुख सदा सूरज के सामने रहता



है। दूसरा रुख कभी सूरज के सामने नही आता। इसलिए बुध के एक भाग में सदा दिन रहता है और दूसरे में सदा रात। ज्योतिषियों का कहना है कि बुध का जो भाग हमेशा सूरज के सामने रहता है, वहाँ उतनी भीषण गरमी पडती होगी कि सीसा जैसी धातु तक क्षण भर में पिघल जाएगी। इसी प्रकार बुध के जिस भाग मे हमेशा रात रहती है, वहाँ भयानक सरदी पडती होगी। बुध पर हवा नही है। इससे यह अनुमान किया जाता है कि वहाँ भी जीव-जंतु न होगे।





प्राचीन सभ्यताएँ



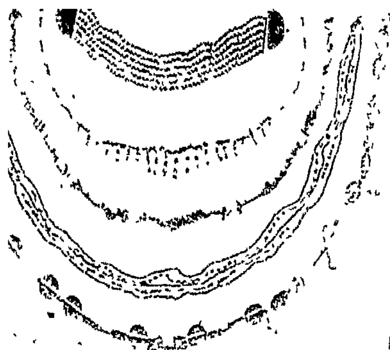
ज्यों ज्यों आवादी बढती है त्यों त्यों रोजी के साधन कम होते जाते है। उस कमी को पूरा करने के लिए मनुष्य परिश्रम करके रोजी के नए साधन पैदा करता है। उसी परिश्रम से मनुष्य के जीवन मे बड़े बडे परिवर्तन हुए हैं और होते रहते है।

जिस युग में पत्थरों के भोंडे और खुरदरे औजारों की जगह बढिया, ने और पालिश किए हुए औजार बनने लगे थे, उस युग को "उत्तर [illegible]ण काल" या पत्थर का नया युग कहते है। उस युग मे मनुष्य छोटी छोटी बस्तियाँ बनाकर रहने लगा था। वह दूध के लिए गाएँ और भेड़े पालने लगा था। शरीर ढकने के लिए घास और पेड के पत्तो के अलावा भेड़ के बाल का भी उपयोग करने लगा था। इस प्रकार मनुष्य ने अपनी बस्ती मे ही अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के साधन जुटा लिए थे।

मगर आराम के साथ साथ आबादी भी बढ़ने लगी, जिससे आवश्यकताओं को पूरा करने के साधन कम पड़ने लगे। तब एक बस्ती के लोगों ने दूसरी बस्ती के लोगो पर हमला करके उनकी जमीन, उनके पालतू जानवर और उनके जमा किए माल को लूटना शुरू किया। इस प्रकार वे अपनी सम्पत्ति बढाने और अपनी बढती हुई आवश्यकताओ को पूरा करने लगे। उन हमलो मे अच्छे सरदारो के कारण जीत होती थी। इसलिए सरदारों का मान और उनका अधिकार बहुत बढ गया। मगर जीत के लिए अच्छे सरदार ही काफी न थे, देवताओ की प्रसन्नता और उनका आशीर्वाद भी आवश्यक माना जाता था। इसलिए देवताओ को प्रसन्न करने के लिए पुजारियो को प्रसन्न करना आवश्यक हो गया और धीरे धीरे पुजारी लोगो का अधिकार सरदारों से भी बढ गया। सरदार लोग आम तौर से पुजारियो के आधीन होते थे। मगर कभी कभी ऐसा भी होता था कि वे पुजारियो को ही अपने आधीन कर लेते थे।

देवताओ को पुजारी और सरदार दोनों ही मानते थे। इस लिए देव-स्थान या मदिर बस्तियो के मुख्य केन्द्र बन गए और मदिरो के इर्द गिर्द आबादी बढने लगी। साथ ही मदिर की जरूरते भी बढी, उनका कारोबार भी बढा, और आगे चलकर मदिरो के आसपास शहर आबाद हो गए। यह अब से कोई छ हजार साल पहले की बात है।

हमे इतने पुराने जमाने का हाल उस जमाने के कुछ टीलो की खुदाई करने से मालूम हुआ है। लगभग हर पुरानी बस्ती के आस पास कुछ पुराने टीले पाए गए हैं। उन्हे देखकर कुछ लोगो ने अनुमान किया कि उनके नीचे पुरानी बस्तियो के खँडहर दबे होगे। इसी लिए उनकी खुदाई का

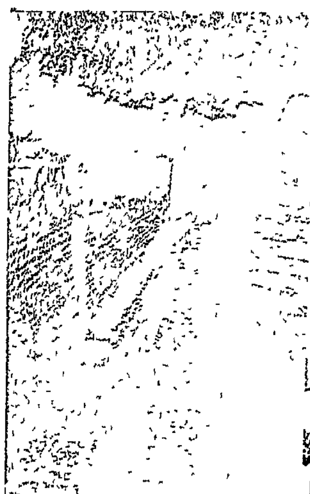


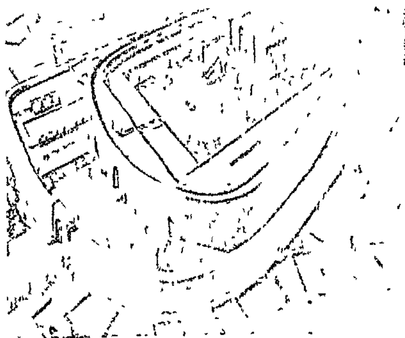
मोहजोदडो में मिले ज़ेवर

काम शुरू हुआ। खँडहरो की खुदाई का अधिक काम नील और फिरात नदियो की घाटियो मे हुआ है। नील मिस्र मे है और फ़िरात ईराक मे। युरोप मे भी यह काम काफी हुआ है।

कुछ काम हमारे देश और पाकिस्तान मे भी हुआ है। सिंध नदी की घाटी मे एक टीले को खोदने से एक बहुत ही प्राचीन नगर के खँडहर मिले है जिसे 'मोहंजोदडो' कहते है। मोहजोदड़ो की खुदाई में मिले जेवर, मिट्टी के बर्तन और दूसरे सामान को देखकर विद्वानो ने यह अनुमान किया है कि वह नगर ईसा से कम से कम २५०० बरस पहले रहा होगा। पृथ्वी के गर्भ मे मिले उस नगर की सडको, तालावो और इमारतो को देखने से मालूम होता है कि वह नगर कुछ बातो मे आजकल के नगरो के समान रहा होगा। मकान एक तरतीब से बनते थे और सफाई का नियमित रूप से प्रबंध था।

मोहजोदडो की एक गली, जिसमें सफाई के लिए दोनो ओर नालियाँ है। नालियो से पता चलता है कि नगर में सफाई थी

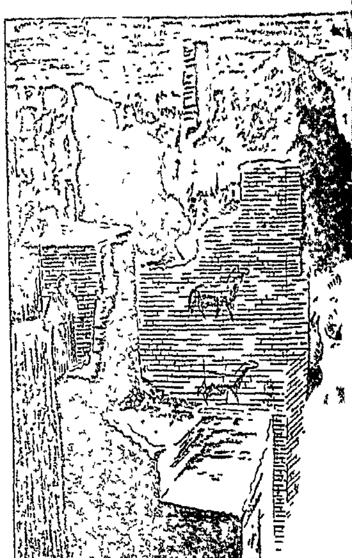


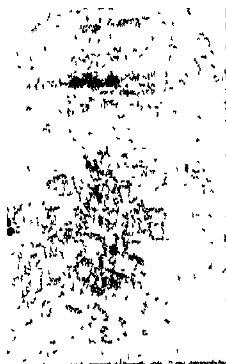


५००० साल पुराना सुमरी नगर। बीच में अडाकार मदिर बना है

फिरात की घाटी में पाए गए सबसे प्राचीन सुमेर नगरी सभ्यता के है जिनसे मालूम होता है कि वहा से पहले नगर किसी मदिर के चारो ओर आबाद हुए होगे। वे मदिर देवताओ के स्थान थे जिनका प्रबध पुजारी करते थे। खेती योग्य सारी जमीन मदिर की सम्पत्ति होती थी और उसके अपने किसान, हर तरह के काम करने वाले कारीगर, और नौकर होते थे। कातने बुनने का काम औरते करती थी। मदिर के आमदनी खर्च का हिसाब रखना पुजारियो का काम था। इसलिए लिखने पढने का सिलसिला भी सबसे पहले मदिरो मे ही शुरू हुआ।

४००० साल पुराने बाबुल नगर के खण्डहर। पीछे दूर पर 'बाबुल की मीनार'





मिस्री राजा की विशाल समाधि या पिरामिड



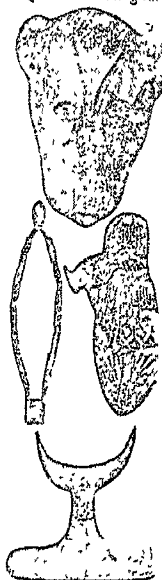
ड़े बड़े पाथरो से बनी समाधि का नजदीकी दृश्य

फिरात की घाटी में बसे नगरो मे मदिरो के साथ मीनारे भी बनती थी। जिन्हे "जिग्गुरत" कहते थे। वे ईंटो के बनाए जाते थे जिनमे ऊपर चढने के लिए चोटी तक सीढियाँ होती थी। वैसी इमारत बनाने के लिए बहुत जानकारी और अभ्यास की आवश्यकता थी।

उसी समय मिस्र मे एक राजा की समाधि बनी जो अब भी ससार के सात आश्चर्यो मे गिनी जाती है। वह समाधि नीचे चौकोर है। उसकी प्रत्येक भुजा ७५० फुट लम्बी और उसकी चोटी ४५० फुट ऊँची है। उसके अदर बडे बड़े कमरे है। वह पत्थर की बहुत बड़ी बडी सिलो से बनी है। सिले बिना चूने गारे के इस तरह चुनी गई है कि कही थोडी भी साँस नही दिखाई देती। इससे हम अनुमान कर सकते है कि सुमेरी और मिस्री लोगो ने सभ्यता मे कितनी उन्नति कर ली होगी।

चीन की पौराणिक कथाओ और हाल की खुदाइयो से पता चलता

समाधि में मिली कुछ चीजें (ऊपर चीते के सिर जैसा बकसुआ, क और लकडी की गुरियो से बना ए काँच की गुरियो के क, बचकाना चप्पल, देवदार का नक्काशीदार सरटेकना, और तथा हाथीदाँत की बनी कुरसी





न अधिक सरदी होती है, न अधिक गरमी और जहाँ जमीन से काफी पैदावार होती है। नील, फ़िरात, दजला, सिंध, याँग्ट्सीक्यांग और ह्वांगहो नदियो की घाटियाँ संसार के ऐसे ही भागो मे है और वही वे परिवर्तन हुए।

नगरो मे बसने का एक नतीजा यह हुआ कि जो काम शुरू किए गए उन्हे जारी रखा जा सका। जो जानकारी प्राप्त हुई उसे शिक्षा द्वारा सुरक्षित रखा जा सका। इसके अलावा मेल जोल और कारोबार के बढने से नए ज्ञान प्राप्त करना भी पहले की अपेक्षा बहुत सरल हो गया।

सामाजिक जीवन के लिए जो व्यवस्थाएँ थी उन्हे कायम रखना आवश्यक था। उन्हे कायम रखने के लिए नियम बने, जिनके अनुसार लोग मिल जुलकर एक दूसरे के सहयोग से काम करते थे। सुमेरिया और मिस्र मे नहरों की देखभाल न की जाती तो खेती-बारी का काम असम्भव हो जाता। इसलिए उसकी देखभाल की जिम्मेदारी उन किसानो को सौंपी गई जिनकी जमीन उन नहरो के पानी से सींची जाती थी।

नगरो मे रहने से जीवन मे एक बहुत बडा परिवर्तन आया। उस समय तक कला-कौशल और व्यापार की अच्छी उन्नति हो चुकी थी। आदमी ने तरह तरह की कच्ची धातुएँ खोज निकाली थी। उन धातुओं को गला कर और साफ करके औजार और हथियार बनाए जा सकते थे। वे औजार और हथियार पत्थर के औजारो और हथियारों से ज्यादा उपयोगी और टिकाऊ होते थे। कच्ची धातुओ और दूसरे कच्चे माल की तलाश में सौदागर दूर दूर तक जाने लगे थे। वे कच्चे माल के बदले तैयार माल देते थे। इस तरह आपसी

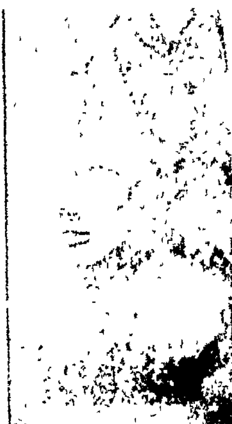
संबंध पैदा हुए। एक दूसरे के बारे में जानकारी बढी और जीवन को बेहतर बनाने की भावना फैलने लगी।

पर जैसे उनके पाषाण-काल में अकाल, बाढ या किसी दूसरी ऐसी विपत्ति से बस्तियों के नष्ट हो जाने का खतरा रहता था, या यह डर बना रहता था कि वे अपनी बढ़ती हुई जन-संख्या की आवश्यकताओं को पूरा न कर सकेंगी, वैसे ही ससार के पहले नगरों के लिए भी खतरे थे। उनमें अमीर और गरीब, राजा और प्रजा के भेद थे। उन भेदों के कारण झगड़े हो सकते थे, जिससे जीवन का सारा संगठन बिगड़ जाता। इसके अतिरिक्त नगरो के चारों ओर जगली जातियो की आबादियाँ होती थी। वे जगली जातियाँ नगरों पर आक्रमण करती रहती थी। शायद नगरो की सबसे बडी कमजोरी यह थी कि वे अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए कच्चे माल के मोहताज थे, जो बाहर से आता था। अगर उनका आना किसी कारण बंद हो जाता तो उनका काम चलना कठिन हो जाता था।

नगरो की जन-संख्या भी बराबर बढती रहती थी। इसलिए धन पैदा करने के साथ साथ दूसरों के धन को लूटने का सिलसिला भी आरभ हो गया। उस समय सभ्यता के केंद्रों मे एक विशेष ढंग के सरदार भी पैदा होने लगे। वे अपनी दौलत को बढाने के लिए अपने असर को फैलाने लगे। उन्हे अपने उद्योग धंधो की उन्नति के लिए कच्चा माल हासिल करना था। इसलिए वे फौजो के जरिए दूसरे इलाकों पर कबजा करने लगे। इस तरह नगरों के हाकिम एक दूसरे के धन पर अधिकार करने के लिए बडी बडी सेनाएँ रखने

लगे और आपस मे लडने लगे। उसका नतीजा यह हुआ कि सैनिको को खिलाने पिलाने और हथियारबद रखने के लिए और अधिक जमीन और धन की आवश्यकता पडने लगी। नगरों के जो सरदार उस आवश्यकता को पूरा करने मे सबसे अधिक सफल हुए, वे राजा बन गए और उन्होने अपने राज स्थापित कर लिए।

ऐसा पहला राजतत्र अब से लगभग ५,००० बरस पहले नील की घाटी मे स्थापित हुआ और फिरात की घाटी मे लगभग ४५०० बरस पहले। इसी प्रकार समार के और भागो मे भी राजतत्र स्थापित हुए। इन राजतंत्रो ने उन्नति की, फिर उनका पतन हुआ, और उनके पतन के बाद और बडे बडे राज्य स्थापित हुए। राजतंत्रों की उन्नति का दूसरा दौर अब से कोई ३,५०० बरस पहले आरम्भ हुआ।



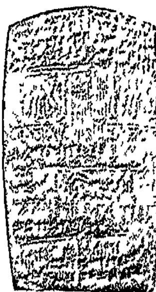
मिस्र के सबसे पुराने राजाओं में से एक राजा

उन्नति के इस दूसरे दौर मे नए आविष्कार कम हुए। पर लोहे के औजार और हथियार बनने लगे, और सोने चाँदी के सिक्को द्वारा लेन देन होने लगा। पहले आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए माल बनते थे और माल के बदले माल लिया दिया जाता था। उसके बजाय उन्नति के इस दूसरे दौर मे बाजार मे बेचने के लिए माल तैयार किया जाने लगा। लोगो को जिस वस्तु की आवश्यकता होती, उसे वे सिक्के देकर बाजार से खरीद लेते थे। इस तरह हर प्रकार के माल का उत्पादन बढ गया हर माल की खपत बढ गई,

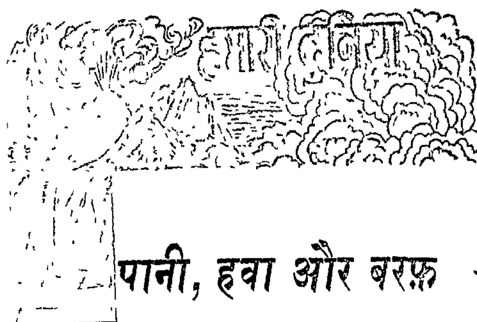
लोगों की आवश्यकताएँ बढ़ गईं और जीवन का स्तर बहुत ऊँचा हो गया। सभ्यता इतनी तेजी से फैली कि भूमध्य सागर के पच्छिमी किनारे से लेकर चीन तक अनेक छोटे बड़े नगर आबाद हो गए।

वह सभ्यता नगरों ही तक सीमित न रहकर गाँवों में भी फैली। किसानों और कारीगरों के अतिरिक्त छोटी बड़ी हैसियत के व्यापारियों, पेशेवर सिपाहियों, पुरोहितों, पुजारियों और धार्मिक नेताओं की संख्या बहुत बढ़ गई। सिक्के के रिवाज के साथ साथ ब्याज का लेन देन भी आरम्भ हुआ, जिसका सामाजिक जीवन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

नगरों की आबादी में भिन्न भिन्न जाति, धर्म और देश के लोग होते थे। उनके आपसी मामलों को सुलझाने के लिए ऐसे कानून बनाने की आवश्यकता हुई जो सब पर लागू हो। सबसे पुराने और प्रसिद्ध कानून वे हैं जिन्हें बाबुल के राजा "हमूरबी" ने अब से ३,७०० बरस पहले जारी किए थे। वे कानून पारिवारिक जीवन, विरासत, लेन देन, उधार ब्याज, दंड-विधान इत्यादि के संबंध में थे। उन कानूनों से पता चलता है कि उस समय सामाजिक जीवन कितना पेचीदा हो गया था और लोगों को संतुष्ट रखने के लिए यह बताने की कितनी आवश्यकता थी कि सत्य और न्याय क्या है।


पत्थर पर खोदे गए हमूरबी के क़ानून

बाबुल के राजा हमूरबी, जिन्होंने आज से ३७०० बरस पहले सबसे पुराने कानून जारी किये थे

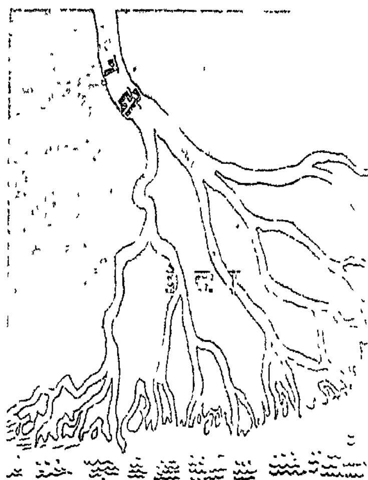


पानी, हवा और बरफ़ ★

पानी, हवा और बरफ का मनुष्य के जीवन और रहन सहन पर बहुत असर पडता है। पृथ्वी का अधिकतर भाग अथाह पानी से ढका है। अथाह पानी के बडे बडे भागो को महासागर कहते है और सूखी धरती के बडे बडे टुकडो को महाद्वीप। महासागरो और महाद्वीपो के रूप सदा एक से नहीं रहते। वे बदलते रहते है, जिसकी वजह से बहुत सी चीजे बनती और बिगडती रहती है। महासागरो और महाद्वीपो के रूप मे वह अदल बदल खास तौर से पानी, हवा और बरफ के कारण होता है।

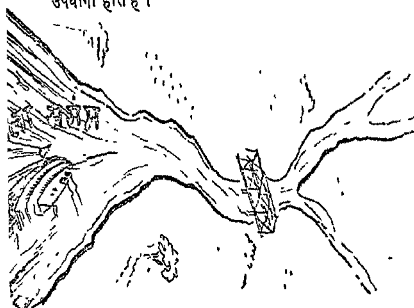
पानी ही वह मुख्य शक्ति है जो धरातल के रूप को बनाने बिगाडने का काम करती है। ससार मे जितना भी जल है वह समुन्दर से आता है और समुन्दर मे ही लौट जाता है। समुन्दर का पानी भाप बनकर उड़ता है। भाप बादल बन जाती है और बादल हवा के साथ उडकर ससार

बनाती हुई जगह जगह घोड़े की नाल या धनुष के आकार की झीलें बना देती है। फिर कई शाखाओं मे बँट जाती है। वे शाखाएँ बीच बीच में जमीन के बड़े बड़े टुकड़े छोडती हुई समुन्दर में मिल जाती है। नदी की शाखाओं के बीच छूटी हुई जमीन के उन टुकडों के आकार ज्यादातर तिकोने होते है और उन्हे डेल्टा कहते है। डेल्टा ग्रीक लिपि का एक अक्षर है, जिसकी शकल तिकोनी (Δ) होती है। डेल्टा की जमीन बहुत उपजाऊ होती है। भारत की गंगा, मिस्र की नील, अमरीका की अमेजन, उत्तरी अमरीका की मिस्सीसिपी और बर्मा की इरावदी नदियों के डेल्टे संसार के बहुत ही उपजाऊ इलाकों में गिने जाते है।



जिन समुन्दरों मं ज्वारभाटे बहुत आते है, उनमे मिलनेवाली नदियाँ डेल्टा नहीं बना पाती, क्योकि ज्वारभाटे के कारण नदियों की लाई हुई मिट्टी के ढेर बहकर समुन्दर मे मिल जाते है। ऐसी नदियों के मुहाने बहुत चौड़े होते है, जिनमे बडे बड़े जहाज आसानी से आ जा

सकते हैं। ऐसे मुहानों को 'वेला संगम' कहते हैं, जो व्यापार के लिए बहुत उपयोगी होते हैं।



बरसात का जो पानी धरती सोख लेती है, वह झरनों, सोतों और कुओं के रास्ते फिर धरातल पर आ जाता है और मनुष्य के बहुत काम आता है। धरती का सोखा हुआ कुछ पानी छेदों और दरारों में होकर कठोर चट्टानों के ऐसे भागों में पहुँच जाता है, जहाँ आदमी किसी प्रकार नहीं पहुँच सकता। यदि ऐसी चट्टानें ढलवाँ हुईं तो पानी झरने के रूप में फिर बाहर निकल आता है।

कभी कभी पानी चट्टानों की गहरी तहों में पहुँच जाता है और वहाँ की गरमी से खौल जाता है। वह खौलता हुआ पानी कभी कभी चट्टानों को फोड़कर गरम झरनों के रूप में बाहर निकल आता है। कभी कभी वह खौलता हुआ पानी बहुत नीचे चट्टान के किसी गड्ढे में जमा हो जाता है। यदि चट्टान के ऊपरी भाग से उस गड्ढे तक कोई सूराख हुआ, तो वह पानी भीतरी गरमी

और भाप के जोर से उबलकर धमाके के साथ फव्वारे के रूप मे बाहर निकल आता है। ऐसे उबलते पानी के फव्वारों को 'गाइसर' कहते है। जब गड्ढे का खौलता पानी चुक जाता है, तब गाइसर थोड़े समय के लिए बन्द हो जाते है। पर जब गड्ढे मे पानी फिर इकट्ठा हो जाता है, तो वह पहले की ही तरह बाहर निकलने लगता है। इस प्रकार गाइसर मे से पानी रुक रुक कर नियमित ढग से कुछ कुछ समय बाद निकलता रहता है।

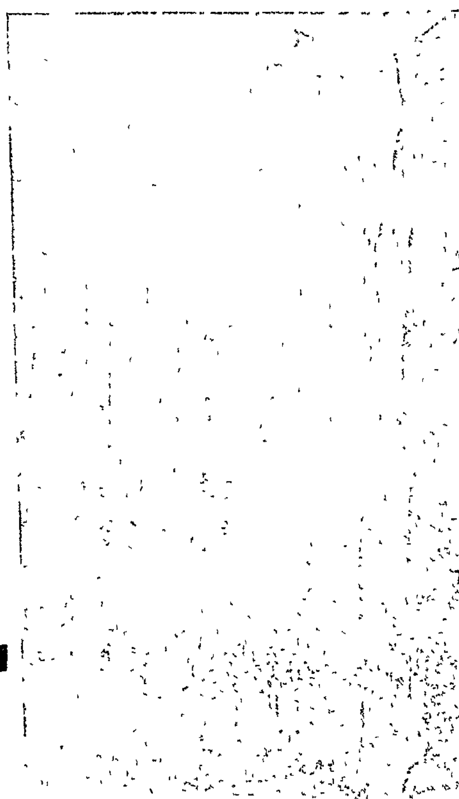
गाइसर खासकर उन इलाको मे पाए जाते है, जहाँ ज्वालामुखी पहाड बहुत होते है। ऐसे गाइसर अमरीका के येलोस्टोन पार्क, आइसलैंड और न्यूजीलैंड में अधिक पाए जाते है। येलोस्टोन पार्क में एक गाइसर है जिसका नाम 'ओल्ड फ़ेथफुल' है। वह हर ६१ मिनट के बाद फूटता रहता है।

येलोस्टोन पार्क का प्रसिद्ध गाइसर 'ओल्ड फेथफुल'

धरती के भीतर पानी का बहाव बहुत धीमा होता है। इसलिए वह चट्टानों को नही तोड़ पाता। वहाँ वह अपना काम दूसरे ढंग से करता है। वह चट्टानो के खनिज पदार्थो को घुलाकर बहाता रहता है जिससे चट्टाने धीरे धीरे पोली होती जाती है और उनमे कही कही तहखाने से बन जाते है। धरती के नीचे के उन तहखानो मे बड़े विचित्र

दृश्य देखने को मिलते हैं। जिस तहखाने की छत चूने से बनी होती है उसकी छत से चूना मिला बहुत गाढा पानी टपकता रहता है। उस गाढे पानी का कुछ हिस्सा छत से ही लटका रह जाता है और कुछ तहखाने के फर्श पर गिर जाता है। फर्श पर गिरा हुआ हिस्सा भाप बनकर उडने लगता है। उधर ऊपर से चूना मिली बूँदें टपकती रहती हैं। इस प्रकार धीरे धीरे ऊपर से टपकता चूना और तले से उठती भाप एक खम्भे का रूप धारण कर लेती है। ऊपर से लटकते हुए ख भा नु मा हिस्से को "स्टेलेक्टाइट" और नीचे से उठे हिस्से को "स्टेलेग्माइट" कहते हैं।

अफ्रीका में कांगो के तहखानों में बने स्टेलेक्टाइट और स्टेलेग्माइट

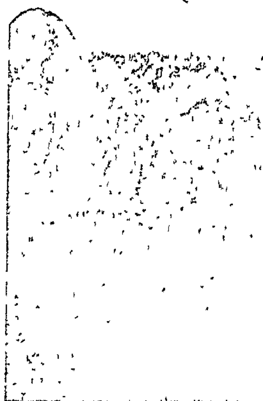


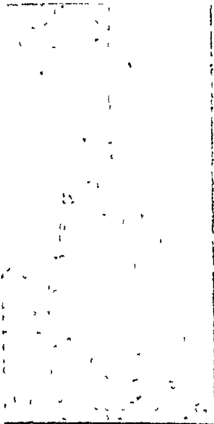
तेज बहनेवाले पानी की धारा तो धरातल को बनाती बिगाड़ती रहती ही है, समुन्दर का पानी भी लगातार वही काम करता रहता है। समुन्दर की लहरे, धाराएँ और ज्वारभाटे लगातार समुन्दर के किनारे या उसके अन्दर की चट्टानों से टकराते रहते है। जब समुन्दर की लहरे तट की चट्टानों से टकराती है, तब सख्त से सख्त चट्टाने भी कट जाती है और उनके अन्दर गुफाएँ बन जाती है। समुन्दर का पानी बरसात के पानी की तरह ही तोड़ फोड के साथ साथ किनारो और बीच मे बने टापुओ पर निर्माण के काम भी करता रहता है।

समुन्दर की लहरो द्वारा कटने से बनी जापान की मत्सूशिमा खाडी में चट्टान की एक मेहराब

हवा वह दूसरी शक्ति है जो धरती की रूप-रेखा को बदलने का काम करती है। वह अपना काम दो प्रकार से करती है। एक तो वह अपनी रगड़ से धरती को काटती है और दूसरे धूल को एक स्थान से

इगलैंड में डोरसेट ललवर्थ के पास 'डर्डल डोर' नाम की प्रसिद्ध मेहराब





हवा द्वारा घिसी गई चट्टान का असमान रूप

दूसरे स्थान पर उड़ाकर ले जाती है। समुन्दर की लहरे भी अपना काम हवा के ही जोर से करती है। हवा ही उनमे गति पैदा करती है, जिससे वे किनारे की चट्टानो को लगातार काटती रहती है। लहरे सागर की तली मे और किनारो पर कूड़ा कर्कट भी जमा करती रहती है।

छोटे छोटे तिनके हवा मे उड़कर आपस में टकराते है और धूल के कण बन जाते है। हवा उन कणो को अपने बहाव मे समेटे हुए तेजी से साथ चट्टानो से टकराती है, जिनसे चट्टानें घिसने और कटने लगती है। चट्टानो का कटना या घिसना उनकी सख्ती और नरमी के साथ साथ हवा की शक्ति पर भी निर्भर होता है।

धीमी चाल से चलनेवाली हवा मे धूल के बारीक कण ही उड़ सकते है। पर तेज हवा अपने साथ बड़े बडे कण उड़ाकर ले जाती है, और बहुत तेज चलनेवाली प्रचड आँधी कूडा कर्कट और ककड ही नही छोटे छोटे पत्थर तक उडा ले जाती है। हवा मे उडनेवाले छोटे बडे कणो के टकराने से चट्टाने उसी प्रकार कट जाती है जिस प्रकार रेती की रगड से लकड़ी। हवा मे उडते धूल के कणो के असर से लोहे जैसी सख्त चीज भी नही बच पाती। उनके कारण रेगिस्तान मे रेल की पटरियाँ तक घिस जाती है।

तेज आँधी की मार से चट्टानो और पहाडो की अजीब अजीब शक्ले निकल आती है। कही चट्टाने और पहाड एक ओर से घिसे हुए दिखाई देते

है तो कही चारो ओर से। कही उनकी शकल गोल हो जाती है तो कहीं नुकीली। कुछ चट्टानो के किनारे बहुत तेज और धारदार हो जाते है। उन्हे देखने से ऐसा लगता है, जैसे किसी कुशल कारीगर ने उन्हे गढ कर तैयार किया हो।

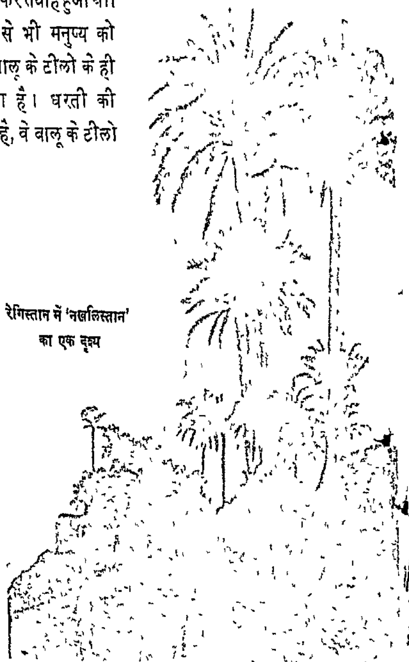
चट्टानो का घिसना या रगडना पृथ्वी के हर भाग मे एक ही तरह नहीं होता। जिन भागो मे बरसात अधिक होती है वहाॅ की मिट्टी अधिक गठी हुई होती है। इसलिए हवा धूल के अधिक कण नही उड़ा पाती। जहाॅ पर घास, पेड़ और पौधे पृथ्वी को ढके रहते है, वहाँ भी हवा धूल के अधिक कण नही उड़ा पाती। हवा अपना काम उन्ही स्थानो पर विशेष रूप से करती है, जहाॅ की जमीन नगी, मुलायम और रेतीली होती है। रेगिस्तानो में तो प्रचंड हवा के जोर से रेत के बवंडर समुन्दर की लहरो की भाँति उठते, गिरते और उलटते पलटते रहते है। हवा मे उडती हुई रेत जहाॅ कही जरा भी रुकावट पाती है वहाँ बैठ रहती है। झाड़ झंखाड़ की कौन कहे, कहीं थोड़ा सा गोबर भी रास्ते मे पडा मिल जाए तो उसी के सहारे जमा होने लगती है। वहाँ रेत का ढेर बढ़ने लगता है और धीरे धीरे वह एक बडे टीले का रूप धारण कर लेता है।

जिन रेगिस्तानो की सतह बलुआ पत्थर (सैंड स्टोन) की होती है, उनमे बालू बहुत होता है। वहाँ बालू के टीले भी अधिक और ऊँचे ऊँचे होते है। पर जहाॅ सतह चूने के पत्थर की होती है, वहाॅ बालू कम होता है और बालू के टीले भी सख्या और ऊँचाई मे कम होते है। यही कारण है कि अरब और सहारा के रेगिस्तानों मे अधिक और ऊँचे ऊँचे बालू के टीले है, और हमारे राजपूताने के रेगिस्तानो मे कम और छोटे छोटे। सहारा के

रगिस्तानो मे बालू के टीले ४०० फुट तक ऊँचे है, जब कि भारत में उनकी ऊँचाई १५० फुट से अधिक नही होती।

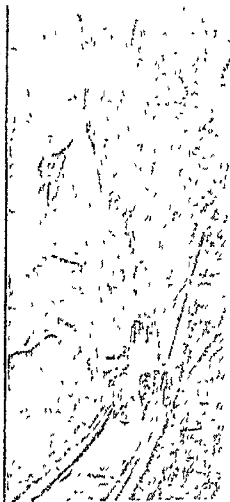
बालू के टीले खेतो, मैदानो, जगलो और गाँवो को अपने नीचे दबाते हुए आगे बढते रहते है। उनका हमला बाढ के हमले से भी अधिक भयानक होता है। एक जमाने मे मिस्र और सीरिया के कई बडे नगर रेत के नीचे दब गए थे। समुन्दरी बालू की बाढ से फ्रास के पच्छिमी तट पर भी गाँव के गाँव नष्ट हो चुके है। सिन्धु नदी की घाटी मे धरती के खोदने से एक बहुत पुराने नगर के खँडहर मिले है, जिन्हे मोहनजोदडो के खँडहर कहते है। वे खँडहर भारत की पुरानी सभ्यता के चिन्ह है। विद्वानो का विचार है कि मोहनजोदडो भी बालू के ही नीचे दबकर तबाह हुआ था।

हवा के तोड़ फोड के काम से भी मनुष्य को लाभ पहुँचता है। रेगिस्तान मे बालू के टीलो के ही कारण लोगो को पानी मिलता है। धरती की गहराई मे जो पानी के सोते होते है, वे बालू के टीलो के नीचे दबकर ऊपर उठ आते है। इसलिए उन टीलो के आस पास थोडा ही खोदने पर पानी निकल आता है जिससे वहाँ पेड़ पौधे पैदा हो जाते है, और वह जगह हरी भरी हो जाती है। ऐसे ही स्थानो को "नखलिस्तान" कहते है।



रेगिस्तान में 'नखलिस्तान' का एक दृश्य

सैकडों साल से लगातार चलनेवाली आँधियों मे उड़कर आए मिट्टी के कण मध्य युरोप, मिस्सीसिपी की घाटी और उत्तरी चीन के निचले भागों मे विछ गए है। हवा द्वारा जमा हुई उस मिट्टी को 'लोयस' कहते है। लोयस की तहों की मोटाई अलग अलग स्थानो पर अलग अलग है। कही वे २० फुट से ४० फुट तक और कही १०० फ़ुट तक मोटी है। उत्तरी चीन मे तो लोयस की तह २०० फुट तक मोटी है। अलग अलग स्थानों पर लोयस का रंग भी अलग अलग है। वहुत सी जगहों पर उसका रग भूरा है। पर चीन की अधिकतर उपजाऊ भूमि पीली लोयस से वनी है। इसी कारण उत्तरी चीन की ह्वागहो नदी "पीली नदी" कहलाती है। वह जिस समुन्दर मे गिरती है उसे भी "पीला सागर" कहते हैं।



चीन में 'लोयस' मिट्टी की ऊँचाई का उसको काट कर बनाए गए दर्रे लगाया जा सकता है

बरफ से भी धरती पर ऐसे उलट फेर होते रहते है जिनका मनुष्य के जीवन पर गहरा प्रभाव पडता है। उत्तरी और दक्खिनी ध्रुवो के आस पास बहुत अधिक ठढक होने से वहाँ पानी नही बरसता। ऊँचे पहाडों पर भी पानी नही बरसता। उन जगहों पर सदा बरफ ही गिरती है। एक खास ऊँचाई के बाद बरफ कभी नही पिघलती। उस ऊँचाई को 'हिमरेखा' कहते है। हिमरेखा संसार

के अलग अलग हिस्सो मे अलग अलग ऊँचाइयों पर होती है। ध्रुवों के इलाके मे वह समुन्दर की सतह पर ही होती है, पर भूमध्य रेखा के पास ८,००० फुट की ऊँचाई पर। हिमरेखा से ऊपर बरफ बराबर अधिक होती जाती है। वहाँ इतनी ठढ होती है कि गरमी मे भी बरफ नही पिघलती। जब बरफ गिरती है तो वह ताजी धुनी हुई रूई की तरह नरम होती है। लेकिन एक तह पर दूसरी तह का भार बढते जाने से वह ठोस बन जाती है। पर कुछ समय बाद बरफ की निचली तहे ऊपरी तहों के भार से अन्दर ही अन्दर गलने लगती है, जिसके कारण मोटी तहे धीरे धीरे खिसकने लगती है, और उनका एक सिलसिला बन जाता है। बरफ की मोटी

एन्टार्कटिका में 'हिमावरण' का एक दृश्य

तहो के उस खिसकते हुए सिलसिल को "हिमनदी", "हिमानी" या "ग्लेशियर" कहते है।

हिमालय पर्वत पर हजारो हिमनदियाँ पाई जाती है। वहाँ दो या तीन मील लम्बी हिमनदियाँ तो बहुत सी है, पर अधिक लम्बी हिमनदियो की सख्या भी कम नही है। सिआचन नाम की हिमनदी तो ४५ मील लम्बी है।

हिमनदी शुरू मे काफी चौड़ी होती है, परतु ज्यों ज्यो वह आगे बढती है पतली होती जाती है। हिमनदी की चाल आम तौर से बहुत धीमी होती है। वह दिन भर में एक या दो फुट की चाल से बहती है। पर कभी कभी उसमे तेजी भी आ जाती है। जहाँ धरती अधिक ढलवाँ होती है और गरमी अधिक पड़ती है वहाँ जमी हुई बरफ की निचली तह अधिक पिघलती है। इसलिए हिम का वहाव तेज हो जाता है।



स्विट्जरलैंड में 'फिशर' नाम का प्रसिद्ध ग्लेशियर। सतह पर दिखाई देने वाली काली रेखाएँ 'मोरेन' है।

हिमनदी के काम मामूली नदियो के काम के मुकाबले मे छोटे होते है। पानी की नदी की तरह हिमनदी भी रास्ते की चट्टानो को घिसती, काटती



हिमनदी द्वारा घिसी और रगड़ी गई चट्टानें

और तोड़ती जाती है। वह चट्टानों के टुकड़ो को अपने साथ वहाकर ले जाती है और रास्ते में चूरे, रोड़े और पत्थर के टुकड़े जमा करती जाती है। फिर भी रोडो और पत्थर के टुकडों का एक बड़ा ढेर हिमनदी के साथ बहता हुआ अत तक चला जाता है, और उसके अतिम सिरे पर जमा हो जाता है। हिमनदी के किनारे और अत मे जमा होनेवाली चीजो को 'मोरेन' कहते है। केवल बरफ किसी प्रकार की तोड फोड नही कर सकती। बरफ मे जमे हुए रोड़े, कंकड़ और पत्थर के टुकडे हिमनदी के साथ बहते चलते है, और वे ही रास्ते की तली और किनारे की चट्टानो को घिसते और तोडते फोडते है।

चट्टान तथा पत्थर के जो बडे बडे टुकडे पहाड़ो पर से पानी के वहाव के साथ साथ गिरते है, वे पानी की नदी मे वहने लगते है और उसकी तली और किनारो से टकरा कर टूट फूट जाते है। पर जब वे हिमनदी मे गिरते है, तो बरफ मे अटक जाते है और ज्यो के त्यो वहुत दूर पहुँच जाते है। हिमनदी

जैसे जैसे आगे बढ़ती जाती है, उसकी घाटी गहरी और चौडी होती जाती है। हिमनदी दूसरी नदियों की तरह नई घाटी नही बना सकती, पर दूसरी नदियो की बनाई सँकरी और गहरी घाटियों को काट और घिसकर चौड़ी और गहरी अवश्य कर देती है।

जिस घाटी मे हिमनदी एक बार बह चुकी हो उसे पहचानना बहुत सरल है। ऐसी घाटी चौड़ी और घिसी हुई होती है। उसके शुरु वाले छोर पर बहुत बड़ा खड्ड होता है, जिसे 'हिमागार' कहते है। उसमे तेज मोड़ नही होते और उसके तल की सतह ढालू और सीढी-नुमा होती है।

हिमनदियो की बरफ को भी एक न एक दिन पानी या भाप बनना पड़ता है। गरम घाटियों मे पहुँचने पर उसकी बरफ पिघलने लगती है, और उसके पानी से झीले और नदियाँ फूट पड़ती हैं।

न्यूज़ीलैंड में हिमनदी से बनी 'रोटोरोआ' झील





(१)



श्रीलंका

श्रीलंका एक टापू है। वह भारत के दक्खिनी छोर से लगभग मिला हुआ है। श्रीलका श्रौर भारत के सम्बन्ध बहुत पुराने हैं। अब से कोई २,५०० बरस पहले उत्तर भारत से 'विजय' नाम का एक व्यक्ति वहाँ गया था। उस समय श्रीलका के एक भाग मे 'वेद्दा' जाति का राज था। विजय ने 'वेद्दा' जाति की एक राजकुमारी से शादी कर ली श्रौर उसकी सहायता से राजा को हराकर श्रीलका मे अपना राज कायम कर लिया। 'वेद्दा' लोग वहाँ के सबसे पुराने



निवासी थे। उस जाति के कुछ वचे खुचे आदिवासो आज भी श्रीलंका के जगलों मे पाए जाते है।


श्रीलका के आदिवासो

कहा जाता है कि विजय के पिता का नाम 'सिह' था। इसलिए उसने श्रीलंका का नाम 'सिहल-द्वीप' रख दिया और वहुत समय वीतने पर श्रीलका के निवासी 'सिंहली' कहलाने लगे।

विजय का राजघराना 'महावंश' कहलाता है। जिसने ईस्वी पूर्व ५४३ से सन् २७५ ई० तक राज किया। पर साढ़े आठ सौ साल का वह राज लगातार क़ायम नही रहा। कई बार ऐसा हुआ कि दक्खिनी भारत से साहसी लोगों के गिरोह के गिरोह वहाँ गए और उस समय के राजा को हराकर खुद राजा बन बैठे। पर हर बार महावश के लोगों ने किसी न किसी प्रकार अपना राज वापस ले लिया।

महावंश के बाद सन् ३०२ ईस्वी से सन् १७९८ ईस्वी तक श्रीलका मे 'सुलावश' ने राज किया। इस वश मे कई प्रगतिशील और अच्छी रुचि वाले राजा हुए। उनमे से कुछ कला और सगीत के बड़े पारखी थे। उस काल मे दूर दूर के देशो के साथ श्रीलका के सम्बन्ध कायम हुए और कई देशो को राजदूत भेजे गए।

सन् १७९६ ईस्वी [illegible] वहाँ [illegible] पुर्तगालियों और डचों का राज रहा और अंत में अंग्रेजों का अधिकार हो गया। अभी हाल तक यहाँ अंग्रेजों का ही राज रहा। [illegible] के जमाने में श्रीलंका नाम बिगड़कर सीलोन पड़ा। [illegible] प्रदेशों के निवासी लोग श्रीलंका को सीलोन ही कहते थे। [illegible] ही के [illegible] में इसका सरकारी नाम श्रीलंका हो गया है।

जलवायु और भौगोलिक स्थिति ने [illegible] पर काफी असर डाला है। [illegible] और समुन्दर से घिरे हुए उस टापू की [illegible] नक्शे पर पान के पत्ते जैसी दिखाई देती है। दक्खिन की ओर [illegible] बीच में ऊँचे-ऊँचे पहाड़ हैं, जिनकी चोटियाँ छः हजार से पौने नौ हजार फुट तक ऊँची हैं। [illegible] नदियाँ उन्हीं पहाड़ों से निकलकर समुन्दर की ओर बहती हैं। उन पहाड़ों के [illegible] और मैदान हैं जो समुन्दर की ओर ढालू होते गए हैं और जो पूरब, दक्खिन और पच्छिम में कम चौड़े हैं, किन्तु उत्तर की ओर काफी दूर तक फैले हुए हैं।

श्रीलंका के दक्खिन-पच्छिमी भाग में मानसूनी हवा के कारण खूब वर्षा होती है। अधिक वर्षा और नम जलवायु के कारण देश का वह भाग 'गीला प्रदेश' कहलाता है। विषुवत रेखा के पास होने से उस भाग की जलवायु में बहुत अदल-बदल नहीं होती। इसलिए वहाँ खेती अधिक होती है।

पूरब, पच्छिम और उत्तर के मैदानों को 'सूखा प्रदेश' कहते हैं, क्योंकि वहाँ वर्षा कम होती है। [illegible] धूप और खुश्की के कारण जमीन,

नदी और तालाब सूखे रहते है। 'सूखे प्रदेश' का अधिकाश भाग बंजर और वीरान है। जलवायु और मलेरिया की बीमारी के कारण कोई वहॉ रहना पसद नही करता। किंतु पुराने जमाने मे 'सूखे प्रदेश' के उत्तरी मैदानो मे ही श्रीलका की प्राचीन सभ्यता और सस्कृति पैदा हुई और वही फली फूली। इसका प्रमाण यह है कि प्राचीन बस्तियो के ज्यादातर खँडहर उसी इलाके मे है। उस युग मे भारत से आनेवाले लोग भी उत्तर के सूखे प्रदेश मे ही आबाद हुए, क्योकि समुन्दर पार करने पर श्रीलका का उत्तरी भाग ही पहले मिलता है।

क्षेत्रफल मे श्रीलका २५,००० वर्गमील से कुछ अधिक है और आबादी ८० लाख है। वहॉ निवासियो मे अधिकतर 'सिहली' नसल के लोग है। वे पुराने जमाने मे भारत से जाकर वहॉ बस गए थे। सिहलियो की सख्या लगभग ५८ लाख है। वे लोग अधिकतर बौद्ध है और सिहली भाषा बोलते है। उनके अलावा एक बडी सख्या ऐसे लोगो की है जो हाल मे भारत से जाकर वहॉ आबाद हुए है। उनमे से अधिकाश मद्रास प्रान्त के रहनेवाले है। लगभग छ फ़ीसदी आबादी 'मूर' जाति के मुसलमानो की है। वे अपने को उन अरब सौदागरो की सतान बताते है जो प्राचीन काल मे वहाँ जाकर बसे थे। ईसाइयों की आबादी भी लगभग १० फ़ीसदी है। वे ज्यादातर कैथोलिक है और पच्छिमी तट पर आबाद है। कुछ 'वेद्दा' और 'यक्ख' नाम के आदिवासी भी है, जिनकी संख्या दिन पर दिन घटती जा रही है।

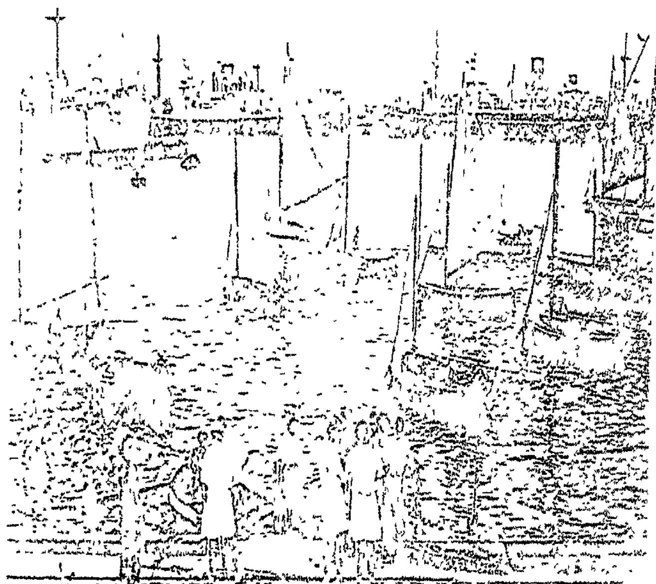


श्रीलका की औरतें टोकरियाँ बना रही हैं।

सारे ससार में प्रसिद्ध है। कहीं कही अभ्रक की भी छोटी छोटी खाने हैं। कच्चा लोहा काफ़ी पाया जाता है, किंतु एक जगह नही। इसलिए उससे अधिक लाभ नही उठाया जा सकता।

श्रीलका मे उद्योग और दस्तकारियो की अच्छी प्रगति हुई है। वहाँ नमक, सिमेंट, कपडा, सिगरेट, साबुन और जूते बनाने के अनेक कारखाने हैं। चाय और रबड के कारखानो मे काम आनेवाली मशीने भी बनती हैं। शीशे, चीनी मिट्टी और मिट्टी के वर्तन बनाने का काम बहुत होता है। दियासलाई, सिगार, लाख के सामान, टोकरियों और ऊन से बननेवाली जालियो आदि का कारोबार वहाँ काफी फैला हुआ है।

जब से 'गीले प्रदेश' के अधिकतर जगल काटकर वहाँ खेती होने लगी हैं, तब से लकडी का उद्योग बहुत कम हो गया है। 'सूखे प्रदेश' मे जगल तो है पर वहाँ की लकड़ी तिजारती काम के लिए



कोलम्बो का कृत्रिम बंदरगाह

अच्छी नहीं है। वहाँ प्लाई-वुड के भी थोडे से कारखाने है। समुन्दर के तट पर आबाद लोग मछली पकड़ने और बेचने का काम करते है।

कोलम्बो श्रीलका की राजधानी है। वह देश के पच्छिमी तट पर बसा है और बहुत बड़ा बदरगाह है। वह एक कृत्रिम बंदरगाह है और हाल मे ही बना है। कहते है वह पूरबी देशो मे सबसे सुन्दर बंदरगाह है। नगर भी कुछ कम सुन्दर नही है। वहाँ ससद भवन, सचिवालय, अजायबघर और विक्टोरिया पार्क देखने लायक स्थान है।



२५०० बरस पुराना पीपल का पेड

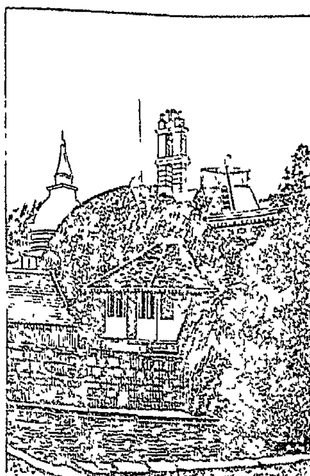
कोलम्बो से कोई ८ मील दूर सैर सपाटे के लिए एक बडा ही सुहावना स्थान है, जिसे 'लिवीनिया' कहते है। केलानिया का मशहूर मदिर भी राजधानी से कुछ ही दूर दक्खिन मे है। देश के दक्खिनी तट पर गाली का बदरगाह है, जो पहले श्रीलका का सबसे बडा बदरगाह था।

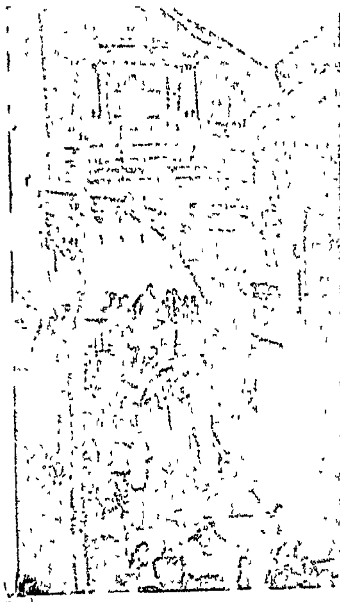
प्राचीन बस्तियों के बहुत से खँडहर वहाँ पाए जाते है। जिन्हें देखने से पता चलता है कि वे किसी समय शानदार नगर रहे होगे। उनमे से अनुराधपुर, पोलोनारुवा, कॉडी और सिगरिया अधिक मशहूर है। अनुराधपुर उत्तर मे है। श्रीलका के राजाओ की पहली राजधानी वही थी। वहाँ लगभग ढाई हजार बरस पुराना 'पीपल' का वह पेड़ है, जिसे सम्राट् अशोक की बेटी राजकुमारी सघमित्रा ने हिन्दुस्तान से ले जाकर लगाया था। कहा जाता है कि वह ससार मे सबसे पुराना पेड़ है।

पोलोनारुवा मे सिहलियो की दूसरी बड़ी राजधानी थी। वहाँ कई बडे बड़े तालाब और ऊँची मूर्तियाँ है। सिगरिया मे पहाड काटकर उसके अदर बनाया हुआ एक प्राचीन मदिर है। उस मदिर की मूर्तियाँ श्रीलका की पुरानी कला का सबसे सुन्दर नमूना है।

कॉडी सिहलियो की आखिरी

सिगरिया मे पहाड़ काटकर बनाया गया मदिर





कॉंडी का प्रसिद्ध मंदिर जिसमें भगवान बुद्ध का दांत रखा है।

राजधानी थी। वहॉ के प्राकृतिक दृश्य बहुत ही मनोहर है। कॉडी मे ही वह प्रसिद्ध मदिर है जिसमे महात्मा बुद्ध का एक दॉत रखा हुआ है। वहॉ 'पेराहेरा' नामक एक त्योहार मनाया जाता है, जिसमे उस दॉत को एक सजे हुए हाथी पर रखकर जलूस के रूप मे घुमाया जाता है। 'पेराहेरा' श्रीलंका का बहुत बड़ा त्योहार है।

ईसा से लगभग ३०० बरस पहले भारत के प्रसिद्ध सम्राट् अशोक ने अपने पुत्र और पुत्री को बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए श्रीलका भेजा था। बौद्ध धर्म वहाँ बहुत तेजी से फैल गया। आज भी लगभग ६० फीसदी लोग बौद्ध धर्म के माननेवाले है। वहाँ की कला पर बौद्ध धर्म का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। वह प्रभाव मदिरो, स्तूपों और मूर्तियों मे साफ दिखाई देता है।

'आदम की चोटी' श्रीलंका का सबसे प्रसिद्ध स्थान है। वह एक ऊँची पहाड़ी



आदम की चोटी

चोटी है, जिसे लोग आम तौर से 'सुमन कूट' या 'समनल कंद' कहते हैं। बौद्ध, हिन्दू, मुसलमान, यहूदी और ईसाई सभी उसे अपना पवित्र तीर्थ मानते हैं और दूर दूर से उसके दर्शन करने आते हैं। 'आदम की चोटी' ही दुनिया में एक ऐसी जगह है जिसे पांच पांच धर्मों के लोग अपना तीर्थ मानते हैं। यहूदी, ईसाई और मुसलमान यह मानते हैं कि 'आदम' स्वर्ग से पृथ्वी पर वहीं उतरे थे। हिन्दू उसे शिवजी के और बौद्ध उसे भगवान बुद्ध के उतरने की जगह मानते हैं।

सिंहली और तामिल श्रीलंका की दो मुख्य भाषाएं हैं। सिंहली बोलनेवाले गिनती में अधिक हैं। तीसरी बड़ी भाषा अंग्रेजी है। उसका प्रचार शहरों में ही अधिक है। शहरों में कहीं कहीं मलयालम भी बोली जाती है।

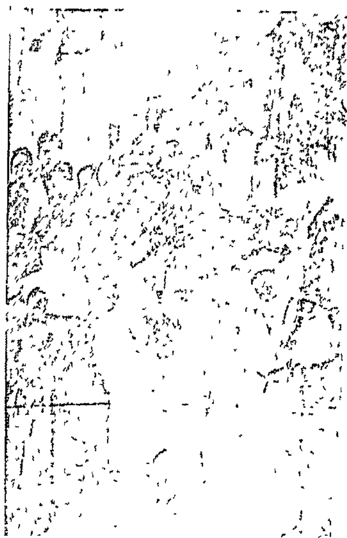
श्रीलंका में शिक्षा का पहले भी काफी प्रचार था, पर आज़ाद होने के बाद से शिक्षा में जबरदस्त उन्नति हुई है। स्कूलों में पढाई की कोई फीस नहीं ली जाती। केवल खेलों के लिए नाम मात्र की फीस ली जाती है। देश में सैकडों स्कूल और कालिज हैं। डाक्टरी, उद्योग और खेतीबारी आदि की विशेष शिक्षा के लिए भी अलग अलग विद्यालय हैं। इनके अलावा कोलम्बो में एक बडा विश्वविद्यालय भी है।

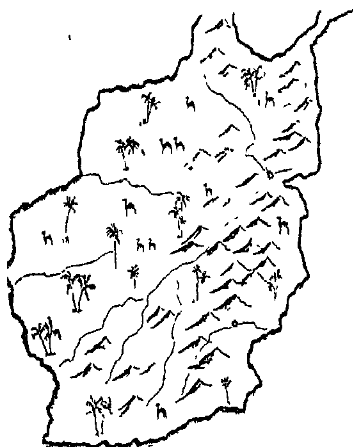
व्यापार और कला कौशल की उन्नति के साथ साथ यातायात के साधनों की उन्नति की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। सारे देश में सड़कों का जाल सा बिछा हुआ है। रेलें देश के पूरबी भाग

की अपेक्षा पच्छिमी भाग मे अधिक है। कोलम्बो रेलो का वडा केंद्र है। समुन्दर के किनारे किनारे मैदानों मे वहुत दूर-तक रेल की लाइने विछी है। श्रीलका मे समुन्दर तट की रेल यात्रा वहुत मनोरजक होती है। हवाई जहाजो से विदेश यात्रा का भी प्रबंध है और देश मे कई वडे और अच्छे हवाई अड्डे है। वहाँ के हवाई अड्डो का सारी दुनिया के लिए वडा महत्व है, क्योकि अतलातक पार के देशो से दक्षिण-पूर्वी एशिया या सुदूर पूर्व जानेवाले हवाई जहाजो को पेट्रोल भरने के लिए कोलम्बो मे रुकना पडता है। स्वतत्र होने के बाद से ससार के लगभग सभी देशो के साथ श्रीलका के राजनीतिक और व्यापारिक सम्बन्ध कायम हो गए है।

श्रीलका के लोग खेल कूद, संगीत, नाच और नाटक के वहुत शौकीन है। वहाँ का 'कैंडियन नाच' सारे ससार मे प्रसिद्ध है।

श्रीलका का प्रसिद्ध 'कैंडियन नाच'





हमारे पड़ोसी

(२)

अफ़ग़ानिस्तान



अफगानिस्तान वहादुर अफगानो का देश है। वह पाकिस्तान के उत्तर पच्छिम मे है। उसका क्षेत्रफल लगभग पौने तीन लाख वर्गमील और आवादी डेढ़ करोड से कुछ कम है।

उस देश का अधिकतर भाग पहाडी है। उसकी उत्तर-पूरबी सीमा पर 'पामीर का पठार' है, जो ससार का सबसे ऊँचा पठार है और अपनी ऊँचाई के कारण 'दुनिया की छत' कहलाता है। अफगानिस्तान के ज्यादातर हिस्से मे 'हिन्दूकुश' नामक पहाड के सिलसिले फैले हुए है। ये सिलसिले उत्तर-पूरवी भाग से शुरू होकर दक्खिन पच्छिम की ओर चले गए है। पूरब और दक्खिन पूरब मे घाटियाँ और छोटे छोटे मैदानी इलाके है। दक्खिन पच्छिम मे एक बहुत गरम और सूखा रेगिस्तान है, जिसे वहाँ के लोग 'दश्ते मर्ग' या 'मौत का रेगिस्तान' कहते है। रेगिस्तान के आसपास जो छोटे छोटे मैदानी इलाके है उनमे पानी पहुँचाने का तरीका बहुत ही अजीब है। वहाँ तेज धूप



और गरम हवा की वजह से पानी बहुत जल्द सूख जाता है। इसलिए साहसी किसान अपनी बस्ती और खेतो तक पानी ले जाने के लिए गुप्त नहरे खोदते है। ये नहरे जमीन के नीचे काफी गहराई मे सुरगो की तरह होती है और इनके द्वारा बीस बीस मील तक पानी ले जाया जाता है।

अफगानिस्तान की ज्यादातर भूमि उपजाऊ नही है। जिन मैदानी इलाकों मे खेती होती है वहाँ भी वर्षा काफ़ी और समय पर नही होती। केवल नदियों के पानी पर ही लोगों का जीवन और खेतीबारी निर्भर है। उत्तर में आमू नदी अफग़ानिस्तान को रूस की सीमा से अलग करती है। काबुल, हेलमद, फरात और हरीरोद वहाँ की दूसरी बडी नदियाँ है। वहाँ हामूँ और गोजरा नाम की दो मशहूर झीले भी है जिनका पानी खारा है।

अफगानिस्तान का जलवायु आम तौर से सूखा और सरद है। उत्तरी और पच्छिमी भाग मे जाडे के दिनो मे पानी बरसता है और बरफ गिरती है। मानसून के दिनो मे पूरबी इलाक़े मे भी बारिश होती है। सरदियो मे वहाँ बेहद ठंड पड़ती है और गरमियों मे उत्तरी, दक्खिनी और पूरबी भागो मे कडी गरमी।

इतिहास इस बात का गवाह है कि बहुत पुराने ज़माने से अफगानिस्तान का हमारे देश से गहरा सम्बन्ध रहा है। अशोक, कनिष्क, अकबर और औरगज़ेब जैसे भारत के कई सम्राटों ने अफगानिस्तान पर राज्य किया। इसी तरह गोरी, खिलजी और तुगलक जैसे कई अफगानी घरानो का भारत मे भी शासन रहा।

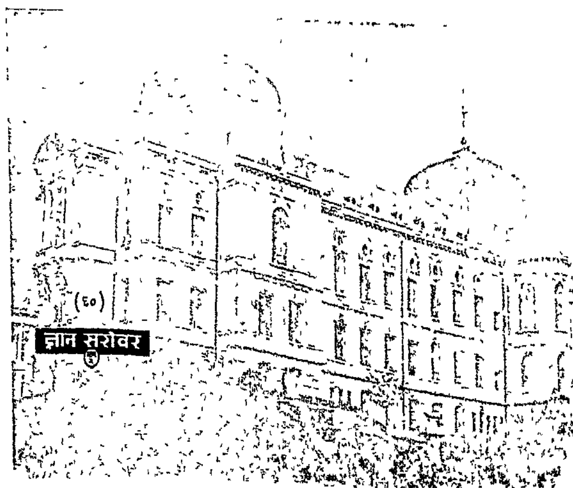
अफगानिस्तान मे राष्ट्रीय शासन को कायम हुए बहुत दिन नही हुए। यो तो अफगानिस्तान मे ताहिरी, यफताली और गजनवी राजाओ

ने कई बार अफगानी शासन स्थापित किए। पर सच्चे अर्थ में स्वतंत्र राज्य की नींव अब से लगभग २०० वर्ष पहले 'मीर वैस्सी होतकी' ने डाली। उससे पहले वहाँ कभी यूनानियों, कभी ईरानियों, और कभी अरबों का राज्य रहा।

अठारहवीं सदी में अहमदशाह दुर्रानी (अब्दाली) ने अफगान राज्य की नींव डाली। वह सद्दूजई वंश का पहला सम्राट् था। वहाँ के वर्तमान बादशाह भी उसी राजवंश से हैं।

अफगानिस्तान का बादशाह एक संसद की मदद से शासन चलाता है। वहाँ की संसद के दो सदन हैं। एक को राष्ट्रीय असेम्बली और दूसरे को सिनेट कहते हैं। असेम्बली के सदस्य जनता द्वारा चुने जाते हैं और सिनेट के सदस्य बादशाह द्वारा नामजद किए जाते हैं। चुनाव में केवल पुरुष ही भाग लेते हैं, स्त्रियाँ नहीं।

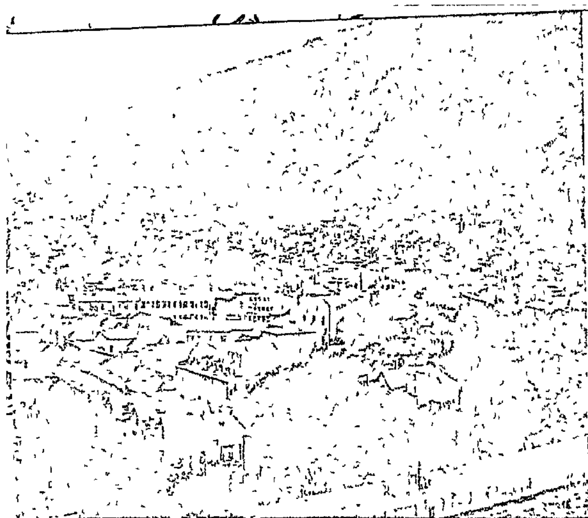
अफगानिस्तान का संसद भवन



बादशाह राज्य का सबसे बडा अधिकारी है। उसकी ही मंजूरी से प्रधानमत्री और दूसरे मत्रियों की नियुक्ति होती है। बिना शाही मुहर लगे कोई भी कानून लागू नही हो सकता। जरूरत होने पर बादशाह मंत्रिमडल को भग भी कर सकता है। उसकी आज्ञा के बिना न लडाई छेडी जा सकती है और न कोई सधि की जा सकती है।

जब कोई बडा राष्ट्रीय महत्व का सवाल पैदा हो जाता है तब पुरानी परम्परा के अनुसार आम लोग भी मिलकर उसपर विचार करते और फैसला देते है। आम लोगो की ऐसी सभा को 'लोयाजिर्गा' कहते है।

पश्तो और फारसी दोनो ही अफगानिस्तान की राजभाषाएँ है। जिन क्षेत्रों मे पश्तो अधिक बोली जाती है, वहाँ शिक्षा पश्तो में दी जाती है और फारसी दूसरी भाषा के रूप मे पढ़ाई जाती है। इसी प्रकार जिन क्षेत्रो मे फारसी बोलनेवाले अधिक है वहाँ फारसी मे पढाई होती है और पश्तो दूसरी भाषा के रूप मे पढ़ाई जाती है। अफगानिस्तान मे प्राइमरी तक की शिक्षा सबके लिए अनिवार्य है। अनिवार्य शिक्षा का कानून दूर के कुछ ऐसे इलाकों मे लागू नही जहाँ किसी लाचारी के कारण साधन और सुविधाएँ नही जुटाई जा सकती। फिर भी उन दूर के इलाको मे कई जगह सरकार की ओर से मस्जिदों मे 'देहाती स्कूल' खोले गए है। ये स्कूल 'मुल्लाओ के मदरसे' कहलाते है। देश मे फौजी शिक्षा अनिवार्य है। हर नागरिक को कम से कम दो बरस की फौजी शिक्षा लेनी पडती है। अफगानिस्तान की



अफगानिस्तान की राजधानी काबुल का एक दृश्य

राजधानी काबुल मे एक विश्वविद्यालय और कई बड़े कालेज है, जिनमे और विषयो के अलावा सस्कृत भी पढाई जाती है, जिसे वहाँ के पढे लिखे लोग अपनी पुरानी भाषा मानते है। देश के अन्य शहरो मे भी ऊँची शिक्षा का प्रबध है।

खनिज पैदावारो मे सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा, कोयला, नमक, लाल, फीरोजा, क्रोमियम, लाजवर्द और एसबस्टस आदि धातुएँ अफगानिस्तान मे बहुत निकलती है। खेती बहुत थोडी जमीन मे होती है। आम तौर से साल मे दो फसले होती है, पर ऊँचाई पर बसे इलाको मे सरदी के कारण केवल एक ही फसल पक पाती है। अफगानिस्तान मे

गेहूँ, जौ, चावल, दाल और मक्का की पैदावार अधिक होती है। अंगूर, शफ़तालू, नाशपाती, अखरोट, आलूबुखारा, बेर, खरबूजा, सेब, अनार और अंजीर आदि खूब पैदा होते है। अकेले अंगूर ही ७० तरह के होते हैं। इनके अलावा सभी तरह की तरकारियाँ भी पैदा होती है।

अफ़गानिस्तान मे सिंचाई के लिए अब नए नए साधन जुटाए जा रहे है। हलमद नदी से एक बडी नहर निकाली गई है। उसका नाम 'बोगरा नहर' है, जो ५५ मील लम्बी है। हलमद और अरगधान पर बांध भी बनाए जा रहे है। उन बाँधो के तैयार हो जाने पर लगभग साढ़े तीन लाख एकड भूमि पर खेती होने लगेगी।

संसार के अन्य देशो की भाति अफ़गानिस्तान मे भी अब उद्योग और दस्तकारियो की उन्नति हो रही है। पुलखुमरी और गुलबहार मे सूती कपड़े की मिले खुल चुकी है। जबलुस्सिराज मे भी एक सूती कपड़े की मिल है। वहाँ सिमेट का भी एक कारखाना है। काबुल अफ़गानिस्तान की दस्तकारियो और व्यापार का केंद्र है। वहाँ दियासलाई, जूते, ऊन और लकडी के सामान बनाने के कई कारखाने है। शक्कर का एक कारखाना बगलान मे खुल चुका है और दूसरा जलालाबाद मे खोला जा रहा है। कधार मे एक ऊनी मिल और दूसरे कारखाने चल रहे है। पनबिजली का एक बडा कारखाना 'सरोबी' मे खोला जा चुका है।

यातायात के साधनो की अफ़गानिस्तान मे बहुत कमी है। पहाडी देश होने के कारण वहाँ की जमीन इतनी ऊँची नीची है कि उस पर रेल की पटरियाँ आसानी से नही बिछाई जा सकती। इसलिए पूरे देश मे कही भी रेलो की व्यवस्था नही दिखाई

जो बौद्धकला के सुन्दर नमूने है। वहाँ गौतम बुद्ध की कई बड़ी मूर्तियाँ भी है, जिनमे एक लगभग चार सौ फुट ऊँची है।

'कलाबिस्त' और 'चखानसर' के खँडहर 'दश्ते मर्ग' या मौत के रेगिस्तान के दोनो किनारो पर लगभग आमने सामने है। कलाबिस्त कंधार के पच्छिम मे है। हजारो बरस पहले वहाँ एक शानदार शहर बसा हुआ था। उसके बड़े बड़े महलो और किलो के खूबसूरत खँडहर अपने प्राचीन वैभव की याद दिलाते है। शहर के चारो तरफ खिचे हुए परकोटे का जो छोटा सा भाग आज भी मौजूद है, वह नौ मील लम्बा, बीस फुट ऊंचा और लगभग छ फुट चौड़ा है, हिसाब लगाने पर मालूम होता है कि दीवार के अकेले उस भाग मे लगभग छे करोड पचास लाख ईंट लगी है। इस तरह पूरे शहर, उसके महल और परकोटे बनने मे सैकड़ो बरस लगे होगे।

'चखानसर' के खँडहर 'दश्ते मर्ग' के पच्छिमी छोर पर है। वहाँ लगभग सौ मील के इलाके मे अनेक किलो और महलो के खँडहर मौजूद है। किसी जमाने में वहाँ लाखो की आबादी और कई बड़े बड़े शहर थे। सिकन्दर ने जब भारत पर हमला किया तो उन शहरो से होकर गुजरा था। तब वे शहर खूब तरक्की पर थे। कहते है कि वे बारहवी सदी तक फलते फूलते रहे, उसके बाद उजड गए। कुछ इतिहासकार कहते है कि अब से कई सदी पहले वहाँ का पानी खारा और जमीन रेगिस्तानी होने लगी। इस कारण वहाँ की बस्तियाँ धीरे धीरे



चखानसर के खँडहरों का एक दृश्य

उजड़ने लगी और अंत में रेगिस्तान की बाढ ने उन्हे पूरी तरह नष्ट कर दिया। कुछ दूसरे इतिहासकार यह कहते है कि वे नगर चगेज खॉ के हमले से उजड गए। कारण कुछ भी हो, इन खॅडहरो से पता चलता है कि जिस समय वे नगर आवाद थे उस समय अफगानिस्तान की सभ्यता बहुत ऊँची थी।

अफगानिस्तान के रहनेवाले बहादुर और साहसी होते है। उनका कद लम्बा, वदन मजबूत और रंग गोरा होता है। आम तौर से सभी अफगान दाढी रखते है और हाथ मे बदूक लेकर चलते है। उनका इतिहास इस बात का गवाह है कि वे बडे देशभक्त होते है। और देश की रक्षा के लिए सदा अपनी जान पर खेलने को तैयार रहते है। स्त्रियॉ परदे मे रहती है। वे न तो किसी सामाजिक समारोह मे भाग लेती हे और न सरकारी काम मे हाथ बॅटाती है। घर से बाहर निकलने की जरूरत होने पर वे सिर से पैर तक लम्बा बुर्का ओढकर चलती है। वे आम तौर से शहरो के सिनेमाघरो, होटलो और बाजारो मे भी नही दिखाई देती। काबुल आदि कुछ बड़े शहरो मे स्त्रियो के लिए अलग से फिल्म दिखाए जाते है।

अफगानी लोग ढीले ढाले कपडे पहनते है। शलवार और कुरता वहॉ के मरदो और औरतो का आम पहनावा है। मरद सिर पर साफा, बदन पर कढी हुई बास्कट और पैरो मे कामदार जूते पहनते है। वे अधिकतर कधे


ठेठ अफगानी वेशभूषा में एक नागरिक



पर रेशमी या सूती दुपट्टा डाले रहते है। जाडे के दिनो मे वहाँ पोस्तीन और दुम्बे की खाल से बनी पोशाक पहनी जाती है। जो लोग पगडी या साफा नही बाँधते वे 'कराकुल टोपी' लगाते है। यह टोपी कराकुल नामक पानी की चिडियो के समूर से बनाई जाती है। शहरो मे अब युरोप के पहनावे कोट, पतलून, टाई और ओवरकोट आदि का भी रिवाज हो गया है।

कराकुल टोपी पहने एक अफग़ान युवक

ठड से बचने के लिए लोग रात को एक विशेष प्रकार की ढक्कनदार अगीठी का इस्तेमाल करते है। लोग कमरे के बीच उस अगीठी को रखकर उसके इर्द गिर्द सो जाते है। सोने मे उनके पैर उस अगीठी की ओर रहते है। उस अगीठी को वे लोग 'कुरसी' कहते है। 'कुरसी' का इस्तेमाल आम तौर से देहाती और मामूली हैसियत के लोग ही करते है।

अफगानिस्तान की आबादी का लगभग एक तिहाई भाग खानाबदोश लोगो का है। इनके अलग अलग कबीले एक जगह से दूसरी जगह पानी और हरियाली की खोज मे घूमा करते है। वे आम तौर से ऊँट, गधे, दुम्बे, और भेड पालते है। वे भेड की खाल और ऊन के कपडे बनाते है। उनका मुख्य भोजन फल, माँस और दुम्बों की पूँछ से निकलनेवाली चर्बी है। एक खानाबदोश कबीले का नाम

'कोची' है। फसल काटने का काम यही लोग करते है, किसान स्वय नही काटता। मजदूरी के तौर पर उन्हे फ़सल का कुछ हिस्सा दे दिया जाता है।

वड़े शहरो की नई इमारतों को छोड़कर अफगानिस्तान मे आम तौर से मिट्टी, गारे और पत्थर के मकान है। गॉवो और मोहल्लो को चारों ओर से एक ऊँची चारदीवारी से घेरने का पुराना ढंग अब भी प्रचलित है, जिससे अफगानी गॉव छोटे छोटे किलो जैसे जान पड़ते है। कावुल अफगानिस्तान की राजधानी होने के साथ साथ व्यापार का सवसे वड़ा अड्डा भी है। वहॉ वहुत से हिन्दुस्तानी भी आबाद है, जिनमे सिक्ख व्यापारियो की सख्या अधिक है।



ऊँटों पर घरबार लादे 'कोची' कैम्प लगाने जा रहे है

अफगानी फूलो के वहुत शौकीन होते है। थोडी जमीन रखनेवाला गरीव भी फूलों के दो चार पौधे जरूर लगाता है।

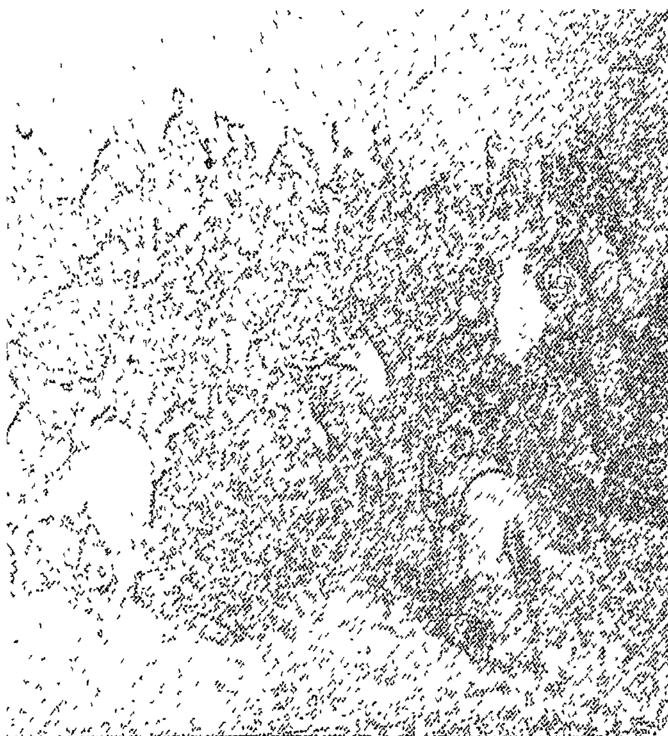
अफगानियो मे चाय का चलन भी खूब है। गरीब, अमीर, शहरी और देहाती सभी चाय पीते है। चाय के होटलों और दूकानो में हर समय भीड लगी रहती है। चाय की पत्ती वहॉ हिन्दुस्तान से जाती है।

अफगान लोग खेलकूद के भी बहुत शौकीन है। शहरो में अब वालीबाल, हाकी, बास्केटबाल और बेसबाल आदि विदेशी खेल भी प्रचलित हो गए है। किन्तु पहले शहरो मे भी कुश्तो, दौड़, निशानेबाजी और घुड़सवारी आदि देशी खेल ही खेले जाते थे। देहातो मे अब भी वे ही खेल प्रचलित है।



अफगानिस्तान का रोंगटे -

उनका 'बुजकशी' नामक घुडसवारी का खेल तो सारे ससार में प्रसिद्ध है। यह उत्तरी अफगानिस्तान का एक रोंगटे खड़े कर देनेवाला खेल है। उसमे सौ से लेकर पाँच हजार तक घुड़सवार भाग लेते है। बुजकशी खेल का कायदा यह है कि एक गढा खोदकर उसमे बकरे का धड़ डाल



नेवाला खेल 'बुजकशी'

दिया जाता है। गढ़े से चद गज के फासले पर खिलाडियो के दोनों दल आमने सामने खड़े हो जाते है। जो खिलाड़ी घोड़े पर बैठे बैठे उस बकरे का धड़ गढ़े से उठाकर दूसरे घुडसवारो से बचाता हुआ मैदान का चक्कर लगाने के बाद, फिर उसी गढे मे लाकर डाल दे वही विजेता

माना जाता है। सीटी बजते ही सवार बकरे पर झपटने की कोशिश करते हैं। उनके सधे हुए घोड़े बकरे के पास पहुंच कर अपने अगले घुटने मोडकर और मुह के बल झुककर अपने सवार को बकरे की लाश उठाने मे मदद करते है। बकरा उठाते ही दूसरे सवार उसको छीनने के लिए चारो ओर से रेला करते हैं। इस छीना झपटी मे दोनो दलो के खिलाडी अपने अपने दल के आदमी की मदद करते हैं। कभी कभी यह खेल चार चार दिन तक चलता रहता है तब कहीं जाकर हार जीत का फैसला हो पाता है।

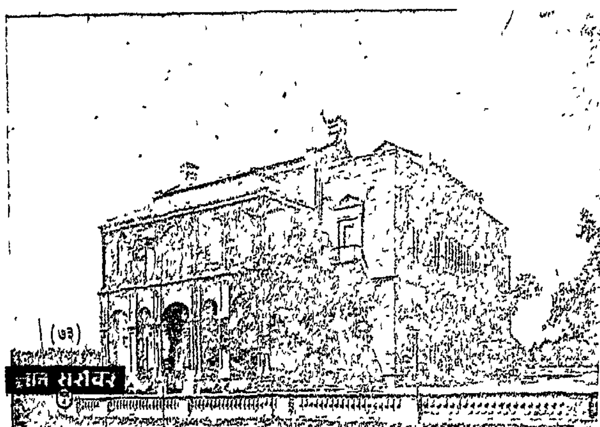
अफगानी लोगो का दूसरा प्रिय खेल 'गुसाई' है। 'गुसाई' मे आम तौर से बीस खिलाडी भाग लेते है, दस एक तरफ और दस दूसरी तरफ। सभी खिलाडी एक पैर से खडे होकर अपना दूसरा पैर हाथ से पकड़ लेते हैं। दोनो तरफ के एक एक खिलाडी, जिन्हे 'गुसाई' कहते है, एक पैर से उचकते हुए दूसरी तरफ बढते है। अब खेल शुरू हो जाता है। दोनो दलो के खिलाडी अपने अपने हाथों से अपना एक एक पैर पकड़े एक दूसरे के गोल तक पहुंचने की कोशिश करते है और विरोधी दल के खिलाड़ियो को धक्के दे देकर रोकते है। इस धक्कम धक्का मे जो खिलाड़ी गिर जाता है या जिसके दोनो पैर जमीन से लग जाते है वह 'मर' जाता है। दूसरी तरफ के 'गुसाई' और उसके साथियो से अपने गोल की रक्षा करते हुए दूसरी ओर के गोल तक पहुंच जाने वाला दल जीत जाता है।

साहित्य और सस्कृति के लिहाज से अफगानिस्तान बहुत सम्पन्न है। वहाँ के पढे लिखे लोग फारसी साहित्य मे बहुत दिलचस्पी रखते

है। ये सादी, हाफिज और उमर खैय्याम जैसे फ़ारसी कवियो की रचनाएँ बड़े शौक़ से पढ़ते है। दिल्ली के रहनेवाले उर्दू कवि 'बेदिल' वहाँ की जनता के लोकप्रिय कवि है। अफ़गानी लोक साहित्य और लोक कला भी बहुत उन्नत है। वहा के लोक गीतो और नृत्यों मे आमतौर से युद्ध, बहादुरी और प्रेम की कथाएँ होती है। रबाबा, ढोल, तबला, सितार, बांसुरी, सारिन्दा और सारगी अफ़गानियों के मुख्य बाजे है। उनका सारिन्दा नाम का बाजा हमारे यहाँ के दिलरुबा से मिलता-जुलता है। सरदी के कठोर और लम्बे मौसम के बाद जब नौरोज या बसत आता है तब अफगानी लोग बहुत धूमधाम से उसका स्वागत करते है। उस दिन वे लोग मैदानों की नई घास के फर्श पर मस्त होकर नाचते है और गरमी के आगमन और सरदी की विदाई का जशन मनाते है। मजारे शरीफ मे इस जशन को मनाने के लिए एक बडा मेला होता है, जिसमे भाग लेने के लिए देश के कोने कोने से लोग आते है।



काबुल का दिलकुशा महल





क्रिस्टोफ़र कोलम्बस

संसार कितना बडा है, उसमे कौन कोन से महाद्वीप है और कितने देश, इन बातो को आज हम किताबो मे पढ़कर जान सकते है। पर अभी कुछ दिन पहले तक ससार के कई भागो के बारे मे हम किताबों से भी कुछ नही मालूम कर सकते थे। आज ससार मे रूस और अमरीका सबसे बलवान और धनवान देश है। लेकिन अमरीका के बारे मे कोई पौने पाँच सौ बरस पहले तक हम कुछ नही जानते थे। हमे यह तक पता न था कि अमरीका भी कोई देश है। परतु मनुष्य जितना जानता है उतने से ही सतुष्ट नही रहता। वह बराबर सोचता रहता है और अधिक से अधिक जानने का यत्न करता रहता है। इस यत्न मे वह कभी कभी अपनी जान भी जोखिम मे डाल देता है।

ऐसे ही जान पर खेलकर ज्ञान प्राप्त करनेवालो मे एक 'क्रिस्टोफ़र कोलम्बस' भी था। एक दिन जीवन की बाजी लगाकर वह दुनिया के अनजाने देशों की खोज मे निकल पडा। समुन्दरों की छाती पर, तूफानी लहरों के बीच, अपने छोटे से जहाजी बेड़े को खेते हुए उसने अमरीका का पता लगाया, जिसको 'नई दुनिया' भी कहते है।

कोलम्बस का जन्म सन् १३५१ मे इटली देश के एक जुलाहे के घर हुआ था। इटली के उत्तर मे समुन्दर के पच्छिमी तट पर 'जेनेवा' नाम का एक प्रसिद्ध शहर है। कोलम्बस के पिता वहीं के निवासी थे। वे ऊन का व्यापार और उसकी कताई बुनाई का काम करते थे। बाइस बरस की उमर तक कोलम्बस अपने पिता के साथ रहकर उनके काम मे हाथ बटाता रहा। वह न कभी स्कूल मे भरती हो सका और न उसे पढ़ने लिखने का ही कोई अवसर मिला। पिता के साथ अक्सर उसे डोगियों मे समुन्दर की यात्रा करना पडती थी। इसी सिलसिले मे वह एक बार पिता के साथ डोगियो मे उत्तरी अफरीका तक हो आया। धीरे धीरे उसमे दूर दूर की समुदरी यात्रा करने की इच्छा बढती गई। वह साहसी और शांत स्वभाव का व्यक्ति था। उसका कद ऊँचा, शरीर गठा हुआ और रग खूब गोरा था।

साहसी कोलम्बस



जब कोलम्बस २५ बरस का हुआ तो उसे पुर्तगाल की ओर जानेवाले एक जहाज मे नौकरी मिल गई। उन दिनो भूमध्य सागर मे यात्रा करना बडा खतरनाक समझा जाता था, क्योकि आसपास के अनेक छोटे बडे देश आपस मे लड रहे थे और वे एक दूसरे के जहाजो को डुबा देते थे। इसलिए कोलम्बस का जहाज ज्यो ही पुर्तगाल के दक्खिनी तट पर पहुँचा त्यो ही उस पर हमला हुआ। उसका जहाज डुबा दिया गया। किंतु कोलम्बस साहसी और चुस्त था। वह तैरता हुआ किनारे पहुँच गया और वहाँ से पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन की ओर चल पड़ा।

'लिस्बन' पहुँचने के बाद कोलम्बस के जीवन मे एक नया मोड़ आया। उन दिनो पुर्तगाल की सरकार ऐसे नौजवानों को मदद दे रही थी जो नए देशो की खोज मे समुन्दर की यात्रा के सकट झेलने को तैयार थे। कोलम्बस ने इस अवसर से लाभ उठाने का निश्चय किया। पर जब उसे मालूम हुआ कि इस काम के लिए भी पढे लिखे और भूगोल जाननेवाले नौजवानो को ही सहायता दी जाती है तो उसे बड़ा दुख हुआ। फिर भी वह हिम्मत न हारा। २८ बरस की उमर हो जाने पर भी उसने नए सिरे से पढ़ना लिखना शुरू किया। उसने थोडे ही दिनों मे भूगोल आदि विषयो का ज्ञान प्राप्त करने के अलावा जहाजरानी की कला और स्पेनी और पुर्तगाली भाषाएँ भी अच्छी तरह सीख ली।

उन्ही दिनो कोलम्बस का विवाह हुआ। उसकी स्त्री एक बड़े जहाज के कप्तान की बेटी थी। उस कप्तान का बड़े बडे लोगो से मेल जोल था। कोलम्बस ने भी कप्तान द्वारा बड़े बडे लोगो के

साथ अपनी जान पहचान बढाई। उसे जल्दी ही पुर्तगाल के बादशाह के निजी जहाज मे एक अच्छी नौकरी मिल गई। उस जहाज को लेकर वह एक बार अफरीका के 'गोल्ड कोस्ट' तक गया। अफ्रीका की इस यात्रा से उसकी जानकारी और हिम्मत काफी बढ गई।

उन दिनो युरोप के लोग एशियाई देशो से व्यापार करने और वहाँ अपनी बस्तियाँ बसाने के लिए बहुत उत्सुक थे। उस समय तक युरोप से एशिया जाने के लिए पूरब की ओर से खुश्की का ही रास्ता था। वह रास्ता कठिनाइयों से भरा था। इसलिए युरोप के सभी देश किसी नए और आसान रास्ते की खोज मे थे।

उस समय तक यह बात मालूम हो चुकी थी कि पृथ्वी गोल है। किंतु उस जानकारी का लाभ सबसे पहले कोलम्बस ने ही उठाया। दूसरे यात्रियो के लेख पढ़कर वह जान चुका था कि चीन और जापान एशिया के पूरबी भाग मे है। इसलिए उसने सोचा कि यदि पृथ्वी गोल है तो एशिया की पूरबी सीमा युरोप की पच्छिमी सीमा से मिली होनी चाहिए, और यदि ऐसा है तो चीन जापान पहुँचने के लिए पच्छिम की ओर से ही यात्रा शुरू करनी चाहिए।

कोलम्बस के मन मे यह विचार पक्का हो गया। पर इस तरह की लम्बी यात्रा के लिए धन, आदमी और जहाज जरूरी थे। इसलिए उसने सन् १४८४ ई० मे पुर्तगाल के राजा के सामने यह प्रस्ताव रखा कि यदि उसे जहाज, आदमी और धन की सहायता दी जाए तो वह एशिया पहुँचने का एक नया और सहज रास्ता ढूँढ निकालेगा। किंतु पुर्तगाल की सरकार ने उसका प्रस्ताव स्वीकार नही किया।



साथियो ने उसकी बात मान ली। उनका छोटा सा बेड़ा आगे बढता गया। सयोग की बात कि ठीक तीन दिन बाद, १२ अक्तूबर १४९२ ई० को, कोलम्बस का एक साथी जोरो से चीख पड़ा, "जमीन ! जमीन ! वह देखो ! जमीन साफ दिखाई दे रही है।"

जमीन मिल गई। जहाजो ने लगर डाल दिया। कोलम्बस ने समझा कि वह भारत पहुंच गया। पर असल मे वह अमरीका के समुन्दर तट का एक टापू था।

कोलम्बस ने टापू को आबाद पाया। कुछ लोग जहाज के किनारे लगते ही उसके पास आ गए। वे लोग लगभग नगे थे और उनका रग बहुत काला नही था। पर उनके बाल घोडे के बाल की तरह खडे, काले और कडे थे। कोलम्बस ने उन्हे शीशे की गोलियाँ और लाल टोपियाँ दी। वे लोग बड़े खुश हुए और कोलम्बस के मित्र बन गए। वे बदले मे कोलम्बस के लिए तोते, जगली बतख, तागे के लच्छे और दूसरी चीजे ले आए। वे उस टापू को 'गुनाहनी' कहते थे।

कोलम्बस ने लिखा है, "पहले टापू मे पहुँचकर मैने वहाँ के कुछ निवासियो को पकड लिया ताकि वे हमारी कुछ बाते समझ ले और हमे जरूरी जानकारी करा दे। हुआ भी ऐसा ही। कुछ बोली और कुछ इशारो के जरिए जल्दी ही वे हमारे और हम उनके भावो को समझने लगे। उन्होने हमारी बड़ी मदद की। जहाँ जहाँ हम लोग जाते, वे पहले ही घर घर मे यह घोषणा कर आते थे कि "आओ और आकर स्वर्ग के लोगो को देखो। वे सभी हमारे लिए खाने पीने की चीजे लाते और प्रेम से हमे देते।"

पश्चिमी द्वीप समूह के आदिवासी

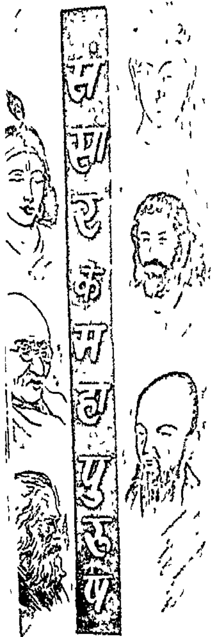


उस टापू के निवासियों ने कोलम्बस को दूसरे टापुओं के पते और उन तक पहुँचने के अच्छे रास्ते बताए। कोलम्बस की तरह वे लोग भी अच्छे नाविक थे। फिर कोलम्बस उस टापू से दूसरे कई टापुओं मे गया।

कोलम्वस अमरीका से बहुत सा सोना, अपने साथ लेकर स्पेन लौटा। सम्राट फर्डिनेंड और महारानी ईसाबेला ने उसका धूमधाम से स्वागत किया। कोलम्बस जब दरबार मे आया तो उन्होंने उसको शाही सम्मान दिया।

स्पेन के शाही दरबार में कोलम्बस का स्वागत





(१)

महात्मा बुद्ध

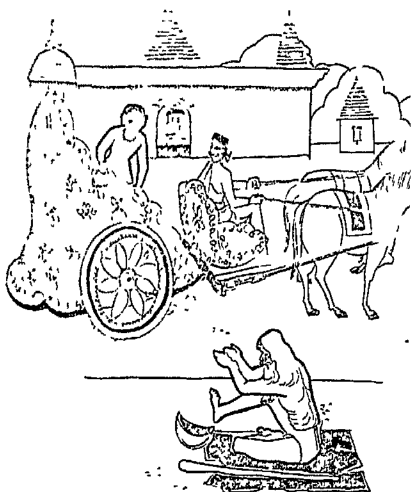


महात्मा बुद्ध का जन्म ईसा से ५६८ वर्ष पहले हुआ था। उनके पिता का नाम शुद्धोदन था और माता का नाम माया। शुद्धोदन राजा थे और उनका राज्य नेपाल की तराई में था। कपिलवस्तु उनकी राजधानी थी।

बुद्ध के बचपन का नाम सिद्धार्थ था। वे अपने मां वाप के इकलौते लड़के थे। इसलिए उनका लालन पालन बहुत लाड़ प्यार से हुआ। किन्तु सिद्धार्थ को बचपन से ही सुख और विलास में कोई रुचि न थी। वे वरावर एकात मे वैठकर कुछ सोचा करते थे। महाराज शुद्धोदन राजकुमार का यह हाल देखकर चितित रहते थे। वे राजकुमार की उदासीनता दूर करने के लिए अधिक से अधिक आमोद प्रमोद के साधन जुटाते रहते थे। इसीलिए उनका विवाह भी छोटी उमर मे ही कर दिया गया। सिद्धार्थ की पत्नी का नाम यशोधरा था। विवाह के वाद उनके एक पुत्र भी हुआ जिसका नाम राहुल रखा गया।

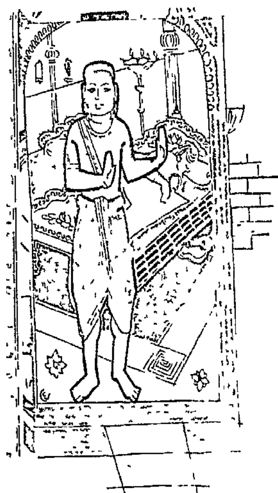


किंतु बीबी बच्चों मे भी राजकुमार का मन बहुत दिनों तक न रम सका। उनका मन वैभव और विलास से और भी ऊब गया। वे सोचने लगे, यदि ससार में गरीबी, बीमारी और मौत के नियम अटल है, तो ऐसे ससार से मोह बेकार है, और उन्हे मिटाने के लिए संसार के सुख का मोह छोड-कर कोई रास्ता ढूंढना होगा।



राजकुमार सिद्धार्थ एक रोगी भिखारी को देख रहे हैं।

किंतु वे एक दम कुछ तै नही कर पाते थे। एक ओर ससार की दुखद घटनाएँ उन्हे सुख और विलास से दूर खीचती थी, तो दूसरी ओर महाराजा शुद्धोदन इस बात का भर सक प्रबंध करते रहते थे कि सिद्धार्थ को मनुष्य जीवन के किसी भी दुख की झलक न मिलने पाए। पर महलो की दीवारे सिद्धार्थ को कब तक रोके रह सकती थी? एक दिन राजकुमार ने एक बूढे मनुष्य के जर्जर शरीर को देखा, जिसके अंग बिल्कुल बेकार हो चुके थे। इसी प्रकार एक दिन उन्होने दर्द से कराहते हुए एक रोगी को देखा। फिर कुछ दिन बाद उन्होने एक मुर्दा देखा। उन दृश्यो को देखकर राजकुमार के हृदय को और भी धक्का लगा। जीवन और जगत की सारी चमक दमक उन्हे झूठी और फीकी लगने लगी। यह बुढापा क्यो, रोग क्यो, मौत क्यो? ये प्रश्न उनके



क रात वे महल से बाहर निकल पड़े।'

मन को मथने लगे। वैराग्य की भावना बढ़ती गई। अंत में एक रात घर और परिवार के मोह को ठुकरा कर वे महल से बाहर निकल पड़े। उस समय न उन्हें यशोधरा का प्रेम रोक सका, न राहुल की ममता और न राजमहल के राग रंग।

सत्य और शांति की खोज में सिद्धार्थ कई बरस तक जंगलों और पहाड़ों में घूमते रहे। उन्होंने घोर तपस्या की, शरीर को बहुत कष्ट दिए, किंतु शांति न मिली। अंत में कहा जाता है कि बिहार के गया नामक नगर के पास उन्हें एक पेड़ के नीचे जीवन की सचाई का 'बोध' हुआ। तभी से वे 'बुद्ध' कहलाने लगे। 'बुद्ध' का अर्थ है सत्य का ज्ञान रखनेवाला।

महात्मा बुद्ध के जमाने में लोग धर्म के सच्चे रूप को भूलकर लकीर के फकीर बन गए थे। पाखंड, ढकोसलेबाजी और छल कपट का दौर दौरा था। सच्ची शांति के लिए लोगों की आत्मा तड़प रही थी। महात्मा बुद्ध ने उन्हें मानवता का संदेश दिया और जनता ने उन्हें सिर आँखों पर बैठाया।

'बोधिवृक्ष के नीचे सिद्धार्थ को बोध' हुआ



महात्मा बुद्ध ने जात पाँत और छुआछूत को ग़लत बताया। उन्होने जीवन के सुधार और सदाचार पर जोर दिया। उन्होंने खुले आम एलान कर दिया कि कोई भी धर्म-ग्रंथ भूल से खाली नही हो सकता, और न कोई पोथी ऐसी है जिसमे अतिम सत्य लिख दिया गया हो। उन्होने बताया कि काम, क्रोध, मद और लोभ ही सब दुखो की जड़ है। दुखो से छुटकारा पाने के लिए उन्होने आचरण के आठ सिद्धात बताए। वे सिद्धात ये है –

(१) सम्यक् सकल्प, यानी ठीक ठीक निश्चय करना, (२) सम्यक् वचन, यानी सच बोलना, (३) सम्यक् आचरण, यानी सचाई का व्यवहार करना; (४) सम्यक् प्रयत्न, यानी ईमानदारी की रोज़ी कमाना, (५) सम्यक् कर्म, यानी अच्छे काम करना, (६) सम्यक् विचार, यानी विचार पवित्र रखना, (७) सम्यक् ध्यान, यानी सचाई मे ध्यान लगाना; और (८) सम्यक् दृष्टि, यानी चीजो को ठीक ठीक देखना।

महात्मा बुद्ध के ये सिद्धांत 'अष्ट मार्ग' कहलाते है। उनके उपदेशों का निचोड़ यह है कि सचाई और सदाचार के रास्ते पर चलकर ही मनुष्य दुखो से मुक्त हो सकता है और प्राणिमात्र की सेवा ही सबसे बडा धर्म है।

जीवन की सचाई का बोध हो जाने पर उन्होने अपने 'बोध' से, अपने ज्ञान से, मनुष्य मात्र का भला करने के लिए जगह जगह घूमकर अपने विचारो का प्रचार करना शुरू किया। उनका पहला उपदेश बनारस के पास 'इसीपत्तन' या 'ऋषिपत्तन'

पहली बार सारनाथ में उपदेश देते हुए बुद्ध





तरह तरह के प्रलोभनो से बुद्ध को डिगाने की कोशिश का
अजन्ता की गुफाओ में बना एक प्रसिद्ध चित्र

में हुआ। आजकल उस स्थान को 'सारनाथ' कहते है। उसके बाद उन्होंने कोशल, विदर्भ और राजगृह के राज्यों में भ्रमण किया। धीरे धीरे उनके उपदेशों का असर होने लगा। लोग जल्द ही हजारो लाखो की सख्या मे उनके शिष्य बन गए और पाखंड का किला तेजी से ढहने लगा। पर धर्म के नाम पर पाखड फैलाकर आम लोगो के दिमाग पर हुकूमत करनेवाले अपना किला नष्ट होते हुए कैसे देख सकते थे। उन्होने महात्मा बुद्ध को तरह तरह के प्रलोभनो मे फँसाकर उन्हे सत्य की राह से डिगाने की कोशिश की। परतु महात्मा बुद्ध का व्रत भंग न हो सका।

उस समय वडे वडे धर्मस्थानो और मदिरो मे पशु बलि की होड चल रही थी। दुराचार का बाजार गरम था। पुराना वैदिक धर्म अपने ऊँचे आदर्शो से गिर चुका था। पुरोहितशाही ने तरह तरह के पूजा पाठ और पाखड फैला रखे थे। जात पाँत का बधन करोडों लोगों के लिए गुलामी की जजीर बन गया था। मत्र तत्र और जादू टोना आदि अधविश्वास फैले हुए थे, और पुरोहित लोग दिखावटी कामो के सहारे जनता के

दिमागों पर शासन कर रहे थे। वे मनुष्य को कल्याण का रास्ता बताने के बदले अपने लिए धन और शक्ति हासिल करने में ही लगे रहते थे। इन सारी बातों से आम लोग ऊब गए थे। इसलिए महात्मा बुद्ध ने जब इन बातों के खिलाफ़ आवाज उठाई तो जनता ने उसका उत्साह से स्वागत किया।

महात्मा बुद्ध के उपदेशों के लोकप्रिय होने का एक कारण और भी था। वह यह कि उन्होंने जनता की भाषा में उपदेश देना शुरू किया। यह एक क्रान्तिकारी कदम था, जिसका आम लोगों पर गहरा असर पड़ा। उससे पहले धार्मिक उपदेश केवल संस्कृत में दिए जाते थे, जिसे ऊँचे घरानों के लोग ही समझ सकते थे, क्योंकि छोटी जाति के लोगों के लिए संस्कृत पढ़ना मना था। उनका वेद शास्त्र पढ़ना तो अपराध माना जाता था।

महात्मा बुद्ध ने अपने विचारों के प्रचार के लिए अपने ६० शिष्यों को देश के कोने कोने में भेजा। राजा, प्रजा, अमीर, गरीब सभी ने उनका स्वागत किया। कौशाम्बी के राजा उदयन और मगध के राजा बिम्बसार ने भी उनके उपदेश सुने और उनका बहुत सम्मान किया। कौशाम्बी आज के इलाहाबाद के नजदीक था और मगध पटना के। कहा जाता है कि महात्मा बुद्ध अपने जन्मस्थान कपिलवस्तु भी गए और वहाँ जाकर उन्होंने अपने पिता, पत्नी और पुत्र को भी बौद्ध धर्म की दीक्षा दी।

महात्मा बुद्ध ने अलग अलग आत्मा को न मानकर एक विश्वात्मा को ही माना। इसलिए उन्होंने जप तप को व्यर्थ बताया, और कहा कि व्रत उपवास आदि में शरीर को नष्ट न करके उसे मनुष्य जाति की सेवा और कल्याण के लिए स्वस्थ रखना जरूरी है। महात्मा बुद्ध की महानता इस बात में थी कि उन्होंने पूजा पाठ को धर्म का ढकोसला बताया और लोक कल्याण को

सच्चा धर्म। उन्होंने धर्म को व्यक्तिगत मुक्ति का साधन न मानकर समाज के कल्याण का साधन माना और धर्म के बाहरी दिखावे का विरोध करते हुए, कहा कि अच्छा आचरण ही सच्चा धर्म है।

महात्मा वुद्ध ने ४५ वरस तक अपनी शिक्षा का प्रचार किया और उनके जीवन में ही लगभग सारे उत्तर भारत में बौद्ध धर्म फैल गया। अपने जीवन का अंतिम समय महात्मा वुद्ध ने कुशी नगर में बिताया। कुशी नगर को अब 'कसया' कहते है, जो गोरखपुर जिले में एक कस्वा है। वही 'पावा' नाम के एक गॉव मे उन्होने निर्वाण प्राप्त किया।

कलकत्ता के अजायबघर में रखी बुद्ध के निर्वाण की एक मूर्ति



उनकी मृत्यु के वाद दो तीन सौ वरस के भीतर ही वौद्ध धर्म श्रीलका, वरमा, चीन, जापान, और मध्य एशिया के वहुत से देशो मे फैल गया। आज भी दुनिया मे वौद्धो की सख्या ईसाइयो को छोडकर सव धर्मवालो से अधिक है।



संसार के महापुरुष

(२)



महात्मा ईसा

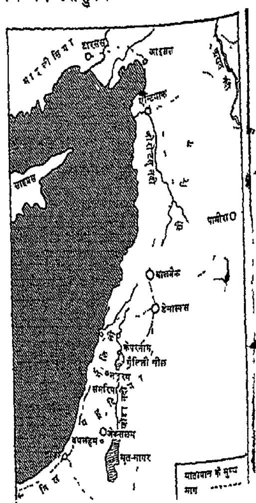


आज दुनिया मे ईसाई धर्म के माननेवालो की सख्या सबसे अधिक है। उस धर्म की नीव रखनेवाले महात्मा ईसा थे। उनके ही नाम पर ईसवी सन् का चलन हुआ, जो आज लगभग सारी दुनिया मे प्रचलित है। ईसवी सन् का प्रारम्भ महात्मा ईसा के जन्म दिन से माना जाता है। पर मजे की बात यह है कि महात्मा ईसा के जन्म दिन के वारे मे कोई एक राय नही है। उनके जन्म का दिन ही नही, महीना और साल भी ठीक ठीक नही मालूम है। आम तौर से लोग यह मानते है कि उनका जन्म बडे दिन, यानी २५ दिसम्बर को हुआ था। कितु ईसाई धर्म के पडितो का यह कहना है कि एक रोमन



सन्यासी की गलत गिनती के आधार पर ऐसा मान लिया गया है। अभी हाल मे कुछ खोज करनेवालो ने बताया है कि महात्मा ईसा का जन्म ईसवी सन् से छे साल पहले अगस्त के महीने में हुआ था। कुछ और ईसाई विद्वान अप्रैल या मई को उनके जन्म का महीना बताते हैं।

ईसाई सत मैथ्यू आदि ने महात्मा ईसा के जीवन के जो हालात लिखे हैं, उनमें महात्मा ईसा के जन्म के बारे मे एक ऐसी बात बताई गई है, जो कृष्ण जी के जन्म की कथा से मिलती जुलती है। उनके अनुसार यहूदियो की बाइबिल मे यह भविष्यवाणी लिखी थी कि अमुक समय पर 'मसीह' यानी 'ईश्वर का सदेश लानेवाला' पैदा होगा, और वह आम लोगो के लिए 'स्वर्ग के राज्य' का दरवाजा खोल देगा। इस भविष्यवाणी मे मसीह के पैदा होने की तारीख भी बताई गई थी। इस पर यहूदी राजा हिरोद बहुत परेशान हुआ। वह बहुत ही अत्याचारी था। उसने हुक्म दिया कि 'मसीह' के पैदा होने की तारीख के आस पास के दो बरस मे पैदा होनेवाले सभी बच्चे मार डाले जायँ। पर उस हुक्म के बावजूद महात्मा ईसा किसी प्रकार बच गए।



उन दिनों आज के इजराइल और उसके आस पास के इलाको को यहूदिया कहते थे। वह यहूदियो का देश था। यहूदी अपने देश को 'पवित्र भूमि' मानते थे। महात्मा ईसा के जन्म के समय यहूदिया पर रोमवालो का अधिकार था। उन्होने यहूदियो को दबाना शुरू किया। यहूदी लोग बड़े कट्टर थे और उन्हे अपने धर्म का बड़ा

अभिमान था। ज्यों ज्यों रोमन उनको दबाते गए त्यों त्यो रोमनों के खिलाफ उनकी घृणा बढती गई। नतीजा यह हुआ कि रोम के नए राजाओ को अपनी नीति बदलना पडी। उन्होंने कुछ अधिकार देकर यहूदियो मे फूट डाल दी। अब यहूदी धर्म में दो दल हो गए। एक फ़रीसी और दूसरा सदूकी। फरीसी लोग धर्म के बाहरी आडम्बर और रीति रिवाज पर अधिक जोर देते थे। वे रोम के नए राजाओ को विधर्मी समझते थे और उनके रीति रिवाजों और विचारो से घृणा करते थे। उस घृणा ने उन्हे घमडी बना दिया था। वे हमेशा इस चिता मे उलझे रहते थे कि नास्तिक रोमन राजाओ की छूत से लोगों को किस प्रकार बचाया जाए। इसके लिए उन्होने अजीब अजीब कानून बनाए। साथ ही उन्होंने धर्म के नाम पर कुलीन और आम लोगो के बीच ऊँच नीच का भेद बढ़ा दिया और गरीबो पर तरह तरह के धार्मिक टैक्स भी लगाए। इस तरह आम जनता दो चक्की के पाटो मे पिसने लगी। एक तरफ विदेशियों की गुलामी से पैदा हुई तबाही और दूसरी तरफ अपने ही धर्म के गुरुओ द्वारा ऊँच नीच के भेद भाव और टैक्सो की मार।

ठीक उसी समय महात्मा ईसा का जन्म 'बेथलहम' नामक एक छोटे से गाँव मे हुआ। महात्मा ईसा के बचपन का नाम 'यीशू' था। वे भी यहूदी जाति के थे। उनकी माता का नाम मरियम था। वे बहुत ही ग़रीब घर मे पैदा हुए थे और बचपन मे ही

ड्रेस्डन (जर्मनी) के 'रायल गैलरी ऑफ अ में रखा मरियम और शिशु ईसा का प्रसिद्ध चित्र जिसे रैफ़ल नाम के चित्रकार ने बनाया था।





लोग उन्हें नीच और अछूत समझकर दुतकारा करते थे। महात्मा ईसा ने उन्हे गले लगाया। वे अपना ज्यादातर समय गरीबो की सेवा मे विताने लगे। इसलिए उनके उपदेशो को सुनने के लिए लोगो की भीड उमड पड़ती थी। शीघ्र ही वे सच्चे अर्थ मे जनता के नेता वन गए।

इसी बीच महात्मा ईसा के जीवन मे एक खास घटना हुई। एक दिन यहुन्ना से उनकी भेंट हुई। यहुन्ना एक यहूदी साधु थे जो जोर्डन नदी के किनारे रहते थे। वे रोमन साम्राज्य के अत और 'ईश्वर के राज्य' की स्थापना के सपने देखा करते थे। लोग दूर दूर से उनके दर्शन करने और उपदेश सुनने आया करते थे। वे उन्हे अपना शिष्य वनाते थे, और जोर्डन नदी के जल से बपतिस्मा (दीक्षा) दिया करते थे। महात्मा ईसा की भाँति यहुन्ना भी अमीरो, पुजारियो और कुलीन यहूदियो के झूठे घमड और अत्याचारो के खिलाफ थे।

महात्मा ईसा अपने भक्तो के साथ यहुन्ना से मिलने गए। दोनो लगभग एक ही उम्र के थे। दोनो के विचार भी एक जैसे थे। दोनो ने एक दूसरे का आदर किया। महात्मा ईसा कुछ समय तक वही रहे। उनमे भाषण या उपदेश देने की योग्यता वही पैदा हुई। बपतिस्मा का रिवाज काफी फैल चुका था। इसलिए महात्मा ईसा ने भी उसे अपना लिया। यहुन्ना से उस समय के अधिकारी बहुत नाराज थे, क्योकि यहुन्ना उनकी कड़ी आलोचना किया करते थे। एक वार अधिकारियो ने उन्हे मनचेरो नाम के

यहुन्ना, जिन्हें 'जान दि बैपटिस्ट' कहते है।



किले मे कैद कर दिया। यहून्ना के कैद होने के बाद महात्मा ईसा जोर्डन नदी और मृत सागर के पास के इलाकों में उपदेश देने गए। उन्होंने इसी जमाने में एक बार यहूदिया के रेगिस्तान मे ४० दिन तक कठोर तपस्या की। वहा के लोगो का विश्वास था कि रेगिस्तान मे भूत प्रेत रहते है। इसलिए महात्मा ईसा के सही सलामत लौट आने पर बड़ी सनसनी फैली। उनके लौटने पर लोगो की श्रद्धा उन पर दूनी हो गई।

महात्मा ईसा वहाँ से गैलिली नामक इलाके में लौट आए। अब उनका व्यक्तित्व खूब निखर चुका था। उनके विचार पक्के हो चुके थे। वे पूरे विश्वास के साथ उपदेश देते थे। यहूदियो के धर्म मे स्वर्ग के राज्य की कल्पना पहले से ही मौजूद थी। महात्मा ईसा ने उस कल्पना को खाली कल्पना भर नहीं रहने दिया। उन्होंने धरती पर ही उस कल्पना को सच कर दिखाने का रास्ता बताया। उन्होने कहा कि 'स्वर्ग का राज्य' मनुष्य की पहुँच के भीतर है और वह धरती पर ही कायम होगा। उन्होने एलान किया कि "अभी ससार मे शैतान और पाप का राज्य है। इसीलिए साधुओ और सज्जनो को मौत के घाट उतारा जा रहा है। पादरी या पुरोहित जो कहते है, उस पर वे स्वय अमल नही करते। इसीलिए समाज भगवान और उनके भक्तो का शत्रु हो गया है। किंतु अब पाप का घड़ा भर चुका है। वह फूट कर ही रहेगा। तभी धरती पर 'स्वर्ग का राज्य' कायम होगा।"

महात्मा ईसा के उपदेश बहुत प्रभावशाली और हृदय को छूनेवाले होते थे। छोटी छोटी बातो और कथा कहानियो के जरिए वे बड़ी से बड़ी और गम्भीर बात आसानी से समझा दिया करते थे।

महात्मा ईसा के समय मे यहूदिया के ऊपर रोमन सम्राट सीजर शासन करता था। लोग सीजर के नाम से कॉपते थे। उसके सामने धर्म और भगवान की भी कोई हस्ती न थी। महात्मा ईसा ने लोगों को समझाना चाहा कि सीजर प्रजा की सांसारिक धन-सपत्ति का दावेदार हो सकता है, पर वह जनता की भक्ति, प्रेम और विश्वास नही पा सकता। महात्मा ईसा ने इस बात को एक छोटे से वाक्य मे बड़ी खूबी से कहा है। उन्होने कहा, "सीजर का पावना सीजर को दो और ईश्वर का पावना ईश्वर को।" महात्मा ईसा का विश्वास था कि अत्याचार के दौर मे भी आजादी के साथ धार्मिक जीवन बिताया जा सकता है।

उन्होने अपने शिष्यो को त्याग की शिक्षा दी और कहा, "मेरे साथ चलने या कही अकेले जाने मे भी अपने साथ कुछ न रखो। न पैसा, न खाना, न कपडा, न कोई और सामान।" उन्होनें अपने शिष्यो को अत्याचारी शासन से असहयोग का मत्र भी दिया। उन्होने कहा, "जब तुम्हे कैद किया जाए या तुम्हारे ऊपर मुकदमा चले तो कोई पैरवी न करो, यदि तुम्हारे शरीर को कष्ट भी मिले तो भय न करो, क्योंकि तुम्हारी आत्मा अमर है।" उन्होने सत्य के लिए आग्रह पर जोर दिया और कहा, "सत्य के लिए माता, पिता, स्त्री, बच्चे, भाई, बहिन सबको छोड दो। जो सत्य के लिए सर्वस्व नही त्याग सकता वह मेरा शिष्य नहीं हो सकता।"

शुरू मे महात्मा ईसा के उपदेशो का कोई खास विरोध नही हुआ। किंतु एक बार किसी ने यह खबर फैला दी कि यहुन्ना ही

महात्मा ईसा के रूप में पैदा हुए हैं। इन बातों से महात्मा के फरीसी विरोधियों के कान खड़े हो गए और फरीसी लोग महात्मा ईसा के दुश्मन हो गए। अनीपस उनका नेता था। इसी ने यहून्ना को कैद किया था। महात्मा ईसा को बार बार बताया गया कि अनीपस और फरीसी उनके खून के प्यासे हैं और उन्हें मार डालने की फिक्र में हैं। किंतु महात्मा ईसा ने तनिक भी परवाह न की। एक बार जब महात्मा ईसा गलिली से यहूदिया जाने लगे तो उनके साथियों ने उन्हें रोका। पर महात्मा ईसा जानते ही न थे कि डर किस चीज का नाम है। वे अपने निश्चय पर दृढ़ रहे। यहूदिया की यह यात्रा ही उनकी मौत का कारण बन गई।

यहूदिया पहुँचने पर महात्मा ईसा को भयानक विरोध का सामना करना पड़ा। वहाँ के लोगों पर अपनी बातों का प्रभाव होता न देख उन्हें बहुत दुख हुआ।

फरीसी लोगों ने अधिकारियों को ईसा के विरुद्ध भड़काना शुरू किया। एक बार उन्होंने महात्मा ईसा पर पत्थर भी बरसाए। उनके प्राण लेने पर उतारू हो गए। अंत में उन्होंने एक सभा की, और उस सभा में यह निर्णय किया कि महात्मा ईसा और यहूदी धर्म के लोग एक साथ नहीं रह सकते, और यहूदी धर्म की रक्षा के लिए महात्मा ईसा का बलिदान आवश्यक है। उस सभा के बाद यहूदियों के पवित्र तीर्थ जेरूसलम के प्रधान पुरोहित 'काइआफा' ने महात्मा ईसा को कैद करने का हुक्म दे दिया। पर उस समय महात्मा ईसा पकड़े न जा सके, क्योंकि वे एफरेन नामक शहर की ओर चले गए थे।

कुछ समय बाद महात्मा ईसा एक उत्सव में भाग लेने के लिए जेरूसलम आए। वहाँ गैलिली के जो निवासी रहते थे, उन्होंने उनका शानदार स्वागत किया। उन लोगों ने एक बड़े जलूस के साथ महात्मा ईसा की सवारी निकाली और सड़को पर कीमती कपड़े बिछाकर उनका सम्मान किया। अनेक लोगो ने उन्हे यहूदिया का राजा कहकर भी पुकारा। अमीर और कुलीन यहूदियो को ईसा का वह स्वागत अच्छा न लगा। उन्होने महात्मा ईसा का अंत कर देने की ठान ली। बड़े पुरोहित 'काइआफा' के घर फिर सभा हुई और यह तै हुआ कि महात्मा ईसा को पकड़ लिया जाए।



जरूसलम में ईसा का स्वागत

एक रात को महात्मा ईसा अपने शिष्यो के साथ खाना खाने बैठे। वे सदा की भाँति शात थे। पर वह अखड शाति उनकी उदासी को न छिपा सकी। उन्होने अपने साथियो की आँखो मे देखते हुए कहा, "आज जो मेरे साथ खाना खा रहे है, उन्ही मे से एक मेरे साथ विश्वासघात करेगा।"

सुनकर सभी सन्न रह गए। साथियो ने समझा कि महात्मा ईसा को गिरफ्तार होने का डर था। उन्होने मिलकर एक भजन गाया और वे महात्मा ईसा के पीछे पीछे 'जैतून की पहाड़ी' की ओर चले

गए। चलते चलते वे एक बाग में पहुँचे। सभी थकान और चिंताओं से चूर थे। महात्मा ईसा ने कहा, "तुम लोग यहीं बैठ जाओ, मैं भगवान की प्रार्थना करूँगा।"

उन्होंने प्रार्थना करने के बाद देखा कि उनके साथी सो गए थे। महात्मा ईसा ने दूसरी बार प्रार्थना की और उनके साथी सोते रहे। तब उन्होंने कहा, "अच्छा सोओ और आराम करो।"

पर वाक्य पूरा भी न हो पाया था कि उन्होंने दूर से चमकती हुई एक रोशनी देखी, और कुछ लोगों के फुसफुसाने की आवाज भी सुनी।

वे बोल उठे, "बस हो चुका। काल आ पहुँचा है। देखो! आदमी की औलाद को पापियों के चगुल में धोखे से फँसाया जा रहा है। उठो, अब चलें। यह लो, मेरे साथ विश्वासघात करनेवाला वह रहा।" महात्मा ईसा के साथी चकित होकर झटपट उठ बैठे। उस बाग के धुँधलके में उन्हें एक साथी का चेहरा दिखाई दिया। वह साथी जूडा था।

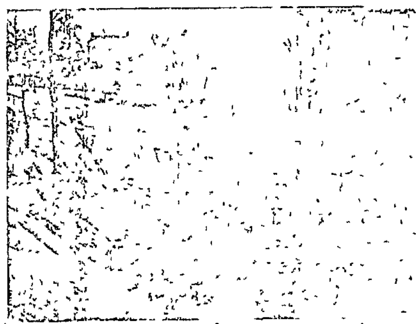
आधी रात का समय था। बाग में अँधेरा छाया हुआ था। महात्मा ईसा उठकर खडे हो गए और होनी की प्रतीक्षा करने लगे। सोची समझी योजना के अनुसार जूडा आगे बढा, और उसने "स्वामी! स्वामी!" की गुहार मचाते हुए आगे बढकर महात्मा ईसा को चूम लिया। पलक मारते ही दुश्मनों ने महात्मा ईसा को घेर लिया। पीटर नाम के शिष्य ने तुरत तलवार निकाल कर दुश्मनों पर हमला किया। दुश्मनों में से एक का कान कट गया। पर महात्मा ईसा ने अपने शिष्य को रोक दिया और कहा कि "तलवार

जूडा महात्मा ईसा को चूम रहा है।



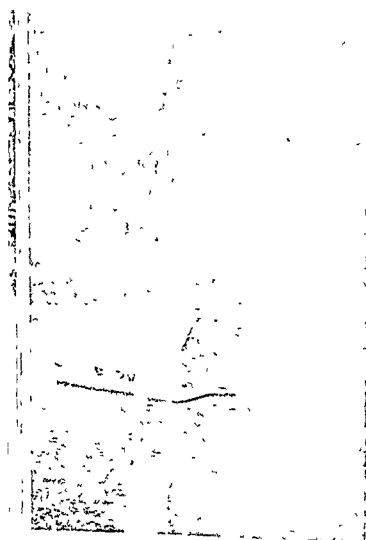
के अलग अलग भागों में फैल जाते हैं। उनमें से अधिकतर पानी बनकर बरस जाते है, और कुछ ओले बनकर गिर पडते है। ओले भी अन्त मे पानी बन जाते है। उस तमाम पानी का कुछ हिस्सा धरती सोख लेती है और कुछ फिर भाप बनकर हवा मे मिल जाता है। लेकिन उसका अधिकतर हिस्सा उस तरफ बह निकलता है जिस तरफ जमीन नीची होती है और वह नदी नालों मे बहता हुआ फिर समुन्दर मे जा मिलता है।

हम देखते है कि बरसात का पानी नरम मिट्टी को काटकर बहा ले जाता है। नदी नालों का बहता हुआ पानी भी अपने किनारों की मिट्टी को काटता रहता है। इस प्रकार बहता हुआ पानी सबसे पहले धरती को घिसने और काटने का काम करता है। जब पानी की धारा पूरी तेज़ी से बहती है तो उसके बहाव मे एक शक्ति पैदा हो जाती है। वह शक्ति चट्टानों और पहाड़ो के बीच राह बनाती, धूल



पानी द्वारा धरती का कटाव

मिट्टी का तो क्या कहना, पत्थर के बड़े बडे टुकड़ो तक को आसानी से बहा ले जाती है। तेज पानी के बहाव मे लुढ़कते हुए पत्थर के वे ढोके भूमि को तोडते



नदी के काटने से पहाड़ में बनी घाटी, जिससे पानी के काटने की ताकत का पता चलता है

फोड़ते रहते हैं। पहाड़ी इलाकों में भूमि बहुत ढालू होती है। इस कारण वहाँ नदी का बहाव भी बहुत तेज़ होता है। वहाँ पर उसका सारा काम तोड़ फोड़ करना ही होता है। यही कारण है कि पहाड़ी इलाकों में नदी की घाटी बहुत गहरी होती है।

पानी के तेज़ बहाव में बहती हुई चट्टानें और पत्थर एक दूसरे से टकरा कर टूटते रहते हैं। आपस में रगड़ खाने से पत्थर के टुकड़े नुकीले, गोल और चिकने होते रहते हैं। पर रगड़ का असर उन्हीं तक नहीं रहता। उसका असर नदी की गहराई और चौड़ाई पर भी पड़ता है। उनके बराबर टकराने और रगड़ खाने से नदियाँ गहरी और चौड़ी होती हैं।

यही कारण है कि दक्खिन भारत की महानदी, गोदावरी, नर्बदा और कृष्णा नदियों की घाटियाँ बहुत गहरी हैं। पर पहाड़ों को काटने का काम जैसा उत्तरी अमरीका की अनोखी नदी कोलेरेडो ने किया है, वैसा ससार मे और किसी नदी ने नही किया। वह जिस घाटी मे से होकर बहती है वह एक मील गहरी है। इसका कारण यह है कि कोलेरेडो नदी मे हजारों साल से पत्थर के बड़े बड़े ढोके आपस मे रगड़ खाते हुए बहते रहे हैं।



मैसूर का प्रसिद्ध झरना 'जोग'

पहाड़ी इलाकों में नदियों का पानी कहीं कही बहुत ऊँचाई से खड्ड मे गिरता है, और वहाँ से फिर बह निकलता है। ऊँचाई से गिरनेवाली पानी की धारा को झरना कहते हैं। नदियाँ अपने साथ जो ढेरों मिट्टी और पत्थर बहाकर लाती हैं, उन्हे वे जगह जगह छोड़ती जाती हैं। इस प्रकार नदी के किनारों पर, मोड़ पर, और कभी कभी बीच मे भी तरह तरह की शकल क टीले बन जाते हैं। नदियो के ऐसे ही काम को हम "रचनात्मक" काम कहते हैं।

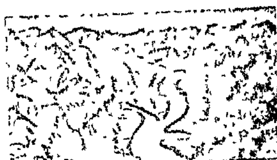
ी वर्षा के बाद ढाल पर नदी या नालों के रूप में
म (बाईं ओर बड़ा दृश्य) छोटे छोटे नाले
रूप में मिलकर छोटी नदी का रूप धारण कर
रास्तों को तेजी से काटते हैं और V आकार
कटाव पैदा करते हैं।

जब नदी पहाड़ से उतर कर मैदान में आती है तो उसकी चाल धीमी पड़ जाती है। मैदानों में वह काटने बहाने के साथ साथ इकट्ठा करने का काम भी करने लगती है। मैदान में उसका बहाव धीमा हो जाता है। इसलिए वह एक सीध में न बहकर टेढ़े मेढ़े रास्ते बनाती और धीरे धीरे अपने रास्ते को बदलती रहती है। साथ ही वह अपनी घाटी की चौड़ाई को बढ़ाती और मैदान को बराबर करती रहती है। बहाव के अंतिम सिरे पर नदी की चाल बहुत ही धीमी हो जाती है।

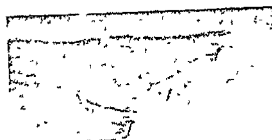
ही नदी कुछ बड़ी होकर तेज हो गई है।
इसकी घाटी खड़ी और 'V' आकार
की है। तेज मोड़ कम हैं।

समुन्दर से मिलने से कुछ दूर पहले से उसका खास काम इकट्ठा करना या निर्माण करना ही रह जाता है। वह अपने साथ लाई हुई महीन मिट्टी को इकट्ठा करती रहती है। उस ढेरों मिट्टी के कारण उसकी तली उथली होती जाती है। आगे इकट्ठा हुई मिट्टी के कारण वह सीधे न बहकर इधर उधर भटकने लगती है। फल यह होता है कि वह धीरे धीरे बहती और टेढ़े मेढ़े रास्ते

प्रौढ़ अवस्था में नदी चौड़ी घाटी में बहती है
और बाढ़ लाती है। घाटी का 'V'
आकार खतम हो गया है।



अंतिम दशा में नदी मैदान में इधर उधर भटकती
रहती है। किनारों पर जमा की गई मिट्टी
के कारण उसका तल उथला और
पाट चौड़ा होता जाता है।





चलानेवाले का तलवार से ही नाश होता है।"

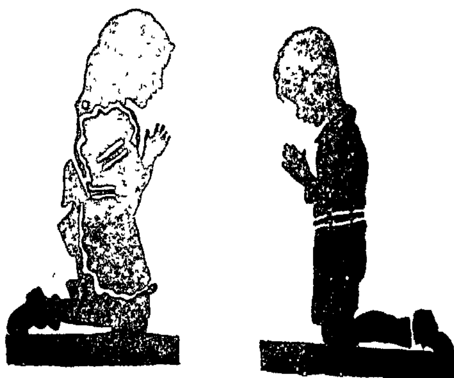
इस प्रकार एक शिष्य ने ही विश्वासघात करके महात्मा ईसा को पकड़वा दिया। दुश्मनो द्वारा घेर लिए जाने पर भी उन्होने भागने की कोशिश नही की। उन्होने उनका विरोध भी नही किया और शाति के साथ उनके साथ चले गए। महात्मा ईसा पर धर्मद्रोह का मुकदमा चलाया गया। तरह तरह की झूठी गवाहियाँ पेश की गई और निर्दोष होने पर भी उन्हे सूली पर चढाने का फैसला सुना दिया गया। महात्मा ईसा के भक्तों और माननेवालो पर शोक का पहाड टूट पड़ा। लेकिन महात्मा ईसा के खून के प्यासे फरीसियो और रोमन सैनिको को उतने से भी संतोप नही हुआ। उन्होने उस समय भी महात्मा ईसा का मजाक उडाया और उन पर पत्थर वरसाए। जब वे उन्हे सूली पर चढाने के लिए ले जाने लगे, तो उन्होने महात्मा ईसा को कॉटों का एक ताज पहनाया और उन्हे 'सलीब' (भारी शहतीर, जिसपर सूली दी जाती थी, क्रास) को अपने ही कधों पर उठाकर ले चलने के लिए मजबूर किया। पर महात्मा ईसा बिल्कुल शात रहे। यहाँ तक कि सूली पर चढते समय भी उनके मन मे किसी के लिए क्रोध

ईसा 'सलीब' ले जाते हुए



या मैल न था। उस समय उनके मुंह से केवल इतना ही निकला, 'हे परम पिता! इन सबको क्षमा कर देना। इन्हें इस बात का ज्ञान नहीं कि ये क्या कर रहे है?" उस समय महात्मा ईसा की उमर केवल ३३ बरस की थी।

महात्मा ईसा के उपदेश 'इंजील' या 'न्यू टेस्टामेंट' (नया अहदनामा) नामक पुस्तक में संग्रह किए गए है। महात्मा ईसा ने अपने संदेश का प्रचार करने के लिए १२ सीधे सादे शिष्यों को चुना था। यह पुस्तक उन्ही में से चार की लिखी हुई है। उसमें महात्मा ईसा मसीह के अमर उपदेशों के साथ उनके जीवन की घटनाएँ भी संक्षेप में दी गई है।





प्राचीन मिस्र और पच्छिमी एशिया के धार्मिक विश्वास ★

सभी प्राचीन जातियो के अपने अपने धार्मिक विश्वास है। वे विश्वास अधिकतर काल्पनिक होते है। आदमी अपने जीवन को ससार की सभी दिखाई देनेवाली और न दिखाई देनेवाली शक्तियो का प्रतिरूप मानता है। इसलिए वह अपने विश्वासो को भी अपने जीवन के अनुसार ही बनाता है। यही कारण है कि ससार की लगभग सभी जातियो के देवताओ के रूप आदमियो जैसे ही माने गए है। उनके भी हाथ, पैर, नाक, मुँह और आँखे है। वे भी चलते फिरते और काम करते है। उनमे भी आदमियो की तरह दोस्ती, दुश्मनी, सुलह और लड़ाई होती है। मतलब यह है कि आदमी अपने ही रग मे अपने देवताओ को सिरजता और सँवारता है।

मनुष्य मे जीने की लालसा इतनी प्रबल है कि वह मरने के बाद भी एक नए जीवन की इच्छा करता है। और इसी इच्छा का यह फल है कि सभी जातियो मे अपने अपने ढग से स्वर्ग और नरक की कल्पना मौजूद है। वही स्वर्ग और नरक की कल्पना उनके धार्मिक विश्वासो को थामे रहती है, उन्हे डिगने नही देती, क्योकि उन्हे सदा इस बात का ध्यान रहता है कि यदि इस जीवन मे वे अच्छे काम करेगे तो उन्हे स्वर्ग म स्थान मिलेगा, नही तो नरक के कष्ट झेलने पडेगे। स्वर्ग म सुख के अनगिनत साधन होगे, और नरक मे केवल कष्ट और दुख ही प्राप्त होगा।

सभी प्राचीन जातियो के विश्वास ऐसे ही थे। पर प्राचीन मिस्रियो मे मौत के बाद भी जिदा रहने की लालसा ने इतना अधिक जोर पकड़ा कि उन्होने अपने जीवन और अपने हाड मास के शरीर को मौत के बाद की जिदगी की तैयारी का जरिया माना। मिस्रियो का विश्वास था कि मरे हुए मनुष्य की आत्मा पहले यमलोक के देवता ओसिरिस के पास ले जाई जाती है, जहाँ उसके पाप पुण्य का लेखा जोखा होता है। वहाँ 'थोथ' नाम की एक देवी रहती है जो तराजू के एक पलडे मे 'मुत' नाम की देवी के पंख और दूसरे पलडे मे आत्मा का हृदय रखकर तौलती है और इस तरह मनुष्य के पाप पुण्य का हिसाब लगाती है। फिर वह ओसिरिस (यमराज) के सामने उस हिसाब को पेश करती है। अत मे जब उस आत्मा का निष्पाप होना साबित हो जाता है तब उसे देवता का आशीर्वाद मिलता है। इस तरह यमलोक से छुटकारा पाकर आत्मा फिर अपने पुराने शरीर को खोजती है और उसमे घुसकर, जब तक वह शरीर कायम रहता है, तब तक आनन्द के साथ सासारिक सुखो का भोग करती है। वेदो मे भी 'थोथ' देवी की तरह

देवी थोथ



पाप पुण्य का लेखा जोखा



वरुण देवता की कल्पना मौजूद है, जो मरनेवालो की आत्मा के पाप पुण्य का हिसाब रखते हैं और उस हिसाब को देखकर ही यमराज किसी की आत्मा को नरक या स्वर्ग देते हैं।

मरने के बाद भी संसार के सुख भोगने की लालसा और विश्वास के कारण प्राचीन मिस्रियो ने यह कोशिश की कि आदमी का हाड मास का शरीर उसके मरने के बाद भी सडने गलने न पावे, ताकि उसमे वापस आकर आदमी की आत्मा अनन्त काल तक सुख भोग सके। इसीलिए मिस्रियो ने हजारो साल पहले एक ऐसा लेप ईजाद किया जिसे लाश पर लगा देने से वह सडती गलती या खराब नही होती थी। लेप लगाने के बाद वे लाश को कपड़े मे लपेटकर ताबूत मे रख देते थे। ऐसी लाशो को 'ममी' कहते है। वे उन लाशो को बडी बडी समाधियो मे दफनाकर और भी अजर अमर कर लेते थे। उन्ही बड़ी बडी समाधियों को पिरामिड कहते है, जो आज भी एक बडी सख्या में मिस्र मे मौजूद हैं। उसी तरह हजारो साल पहले की सुरक्षित लाशों की 'ममियाँ' मिस्र के अजायबघरो मे आज भी रखी हुई है। मिस्रियो ने केवल मनुष्यो की ही नही, बल्कि उन जानवरों की भी 'ममियाँ' बनाई, जो उनके देवताओ के प्रिय थे और जिनका वे देवताओ की तरह मान करते थे। पिरामिडो मे दफन करने से पहले ममियो के साथ तरह तरह के पकवान और सुख के दूसरे साधन भी ढेरो रख दिए जाते थे। ताकि लौटकर आने पर आत्मा को कभी किसी चीज की कमी न महसूस हो।



लाश में लेप लगाकर ममी बनाने की क्रिया

प्राचीन मिस्रियो का विश्वास था कि आत्मा चार प्रकार की होती है। वे पहली को 'का' या 'को' कहते थे, जिसका अर्थ होता था 'शरीर

का दूसरा रूप'। दूसरे प्रकार की आत्मा को वे 'बा' कहते थे। 'बा' के सिर को तो वे आदमी के सिर जैसा पर शरीर को पक्षी जैसा मानते थे। तीसरे प्रकार की आत्मा 'इख' कहलाती थी। उनका यह भी विश्वास था कि 'बा' लौटकर ममी मे प्रवेश कर जाती है, पर 'इख' यमलोक से सीधे आसमान मे उड जाती है। चौथी प्रकार की आत्मा एक छाया जैसी मानी गई थी, जो बहुत जमाने तक इधर उधर फिरा करती थी। अपने देश मे भी पापहीन आत्मा को हस और प्रेतात्मा को छाया मानते है।


'बा'

मौत के बाद आदमी का क्या होता है इस सम्बन्ध की अनेक कहानियाँ मिस्र के पिरामिडो की दीवारो पर चित्रलिपि मे खुदी हुई मिली है। उन कहानियो का एक सग्रह भी तैयार हो गया है, जिसे ससार का सबसे प्राचीन साहित्य कहना चाहिए। उस सग्रह को 'मृतको की किताब' कहते है, क्योकि उसमे अनेक टोने टोटके, जन्तर मन्तर इसलिए लिखे हुए है कि उनकी मदद से मरनेवाले की आत्मा मौत के बाद का सफर आसानी से तै कर सके।

लगभग हर देश के बहुत पुराने धर्मो मे कुछ देवताओ के सिर या शरीर जानवरो की तरह माने गए है। मिस्रियो और असुरो के भी अनेक देवताओ के या तो सिर जानवरो के से थे या शरीर। आदमी के धड पर जानवर का या जानवर के धड पर आदमी का सिर बैठाने का शायद यह मतलब होता था कि वह उन्ही की तरह बलवान है। मोहजोदडो आदि की मोहरो पर आदमी के धड पर शेर आदि के सिर बने हुए मिले है।

प्राचीन मिस्री देवताओ मे ओसिरिस का





होरस

स्थान सबसे ऊँचा था। ओसिरिस का एक परिवार था, जिसमे वह पिता था, आइसिस उसकी स्त्री थी और होरस या सूर्य उनका पुत्र था। ओसिरिस को पहले अज (बकरे) का रूप मिला, फिर बाज का और फिर साँड़ का। बाज को मिस्री लोग 'सोक्री' और साँड़ को 'हापी' कहते थे। उसी जमाने मे, या उसके कुछ बाद, साँड की पूजा हमारे देश मे मोहजोदडो और हड़प्पा तथा बाबुल, निनेवे आदि मे भी होने लगी थी। शिव के नदी की पूजा तो भारत में आज तक होती है। कुछ काल बाद वही ओसिरिस जो कभी अनाज और फसलो का देवता था, ओसिरिस-खेन्ता-मेन्तिउ का नया नाम धारण कर मृतको का महान् देवता भी बन गया। धीरे धीरे उसका प्रताप इतना बढ़ा कि उसे सूर्य भी मान लिया गया।

ओसिरिस मिस्र का सबसे अधिक लोकप्रिय देवता था, जिसकी कहानी बहुत लम्बी है। यहाँ सक्षेप मे उसकी कहानी दी जा रही है, जिससे पता चलता है कि देवताओं में भी आदमियो की सी भावनाएँ मानी जाती थी।

सुमेरी, बाबुली और आसुरी नामकी तीन सभ्यताएँ पुराने जमाने मे ईराक देश की दजला फ़रात की घाटी मे फली फूली। सुमेरी सभ्यता आज से कोई पाँच हजार साल पहले ईराक के दक्खिन मे, दजला फ़रात सगम के इर्द गिर्द, बाबुली सभ्यता आज से लगभग चार हजार साल पहले, उससे कुछ उत्तर बाबुल नगर के अडोस पडोस मे, और आसुरी सभ्यता आज से तीन हजार साल पहले दजला फरात की घाटी के ऊपर की ओर फली फूली। सुमेरियो ने उन सभ्यताओ को कीलनुमा अक्षर दिए। बाबुलियो ने साहित्य रचा और असुरो ने साहित्य की रक्षा का प्रबंध किया।

सुमेर मे पहले छोटे छोटे आजाद राज्य थे जहाँ पुरोहित राजा राज्य



असुरो का प्रधान देवता 'अश्शुर'

दल था। इश्तरदेवी के पति का नाम तम्मूज था, जिसके मर्सिया से पुराना बाबुली साहित्य भरा पड़ा है। पहले दल के देवता एन्लिल और दूसरे दल के देवता सिन के एक एक पुत्र भी था। उनके नाम थे— निनिब और नुस्कू। बहुत बाद को निनिब का भी रुतबा खूब बढ़ा। नुस्कू प्रकाश का देवता माना जाता था, जैसे गिरू आग का और रम्मन (या अदाद) बारिश, बिजली और बादल का। असुर जाति का प्रधान देवता 'अश्शुर' था, और जिस नगर में उसका मंदिर था उसका भी नाम 'अश्शुर' ही था।

धीरे धीरे जब बाबुल का प्रभाव बढ़ा तब बाबुलियो का देवता मरदुक भी प्रबल हो गया। मरदुक ने अकाल और सूखे की देवी तियामत को, जो शकल मे अजगर जैसी थी, वज्र से मार डाला। तियामत अपनी लपेट (कुडली) मे देश का सारा जल छिपाए हुए थी, और उसे मार कर मरदुक ने देश के जल की रक्षा की थी।

उन पुराने देवी देवताओ मे आदमियो की ही तरह मोहब्बत, दोस्ती और दुश्मनी हुआ करती थी। उनके भी परिवार होते थे, और उन परिवारो मे वही सब होता था जो आदमियो के परिवारो मे होता रहता है। सुमेरी और बाबुली साहित्य मे देवताओ के क्रोध की एक दिलचस्प कहानी मिलती है, जो आगे के पन्नों मे दी जा रही है।

आज से हजारो साल पहले सुमेर देश मे हुई जलप्रलय की यह कहानी, उन ईटो पर लिखी गई थी जो राजा बनिपाल असुर के निनेवे के ग्रंथागार मे

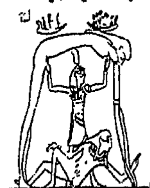
मिली हैं। यह कहानी गिलगमेश नामक सुमेरी बाबुली महाकाव्य मे लिखी है। इसी कहानी को प्राय सभी प्राचीन जातियो ने थोडा सा अदल बदल कर अपनी अपनी धर्म पुस्तको में लिख लिया। इंजील के जलप्रलय की कहानी का नायक जिउसुद्दू की जगह नूह है और हिन्दू जलप्रलय की कहानी का नायक मनु।

दो गाथाएँ

(१)
ओसिरिस की कहानी



तेफ्नुत



अपने हाथो से स्वर्ग को थामे हुए वायु देवता 'शु'

चारो ओर धुध का एक समुन्दर फैला हुआ था। उस धुध के समुन्दर के सिवा और कुछ भी कही नही था। उस समुन्दर का नाम था 'नुन'। यह देखकर सूरज देवता अपनी ऊँचाइयो से उतरे और उस धुध के समुन्दर मे जा घुसे। अजब करिश्मा हुआ। उस धुध से दो जीव जनमे। एक नर एक मादा। दोनो भाई बहन। भाई का नाम पड़ा 'शु', बहन का नाम 'तेफ्नुत'। 'शु' वायु देवता हुआ, और उसने अपनी बहन तेफ्नुत से शादी कर ली। उस शादी से फिर दो प्रानी जनमे। एक नर, धरती का देवता 'गेब'; और एक नारी, आकाश की देवी 'नुत'। गेब ने नुत को ब्याहा। इस ब्याह से चार जन जनमे—दो बेटे, दो बेटी। बेटे थे ओसिरिस और

देवी नुत





देवता सेत

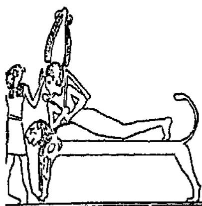
सेत, और बेटियाँ थी आइसिस और नेफ्थिस। ओसिरिस ने अपनी बहन आइसिस को ब्याहा, और उनसे जनमा होरस, अपने दादा के दादा सूरज देवता का अंश, उसका ही अवतार, खुद सूरज।

जैसा दुनिया मे अक्सर होता है भाइयो मे न बनी, और सेत ओसिरिस का जानी दुश्मन बन गया। ओसिरिस की जान लेकर अपनी राह के उस काँटे को उसने दूर कर देना चाहा। ओसिरिस भी ताकत मे उससे कुछ कम न था। इससे जब आमने सामने कुछ करते न बना तब सेत ने छल से काम लेना तय किया। उसने ओसिरिस को धोखे से एक लकडी के ताबूत मे बद कर दिया। फिर ताबूत मे कीले जडकर उसे समुन्दर मे फेक दिया। पर ताबूत डूबा नही। लहरे उसे दूर बहा ले गई। वह गाम के बिब्लस नगर मे समुन्दर के किनारे जा लगा। ताबूत के पास एक पेड तत्काल उग आया जिसने ताबूत को पूरी तरह ढक लिया। वहाँ के राजा को अपने महल के लिए खभो की जरूरत पडी, सो उसके आदमी वही पेड खंभो के लिए काट ले गए।



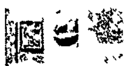
नफ्थिस

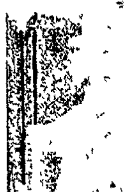
ओसिरिस की तो यह गति हुई, उधर उसकी स्त्री आइसिस उसके बिना बेहाल थी। अपने पति की खोज मे वह दर दर की खाक छान रही थी। उसी सिलसिले मे वह बिब्लस पहुँची। आइसिस को वहाँ ओसिरिस की लाश मिल गई, जिसे लेकर वह मिस्र चली आई। वहाँ पहुँचकर आइसिस ने उसे जिलाया और फिर से अपना पति बनाया।



ओसिरिस को पुनर्जीवन

देवी आइसिस







इसी बीच ओसिरिस और आइसिस के लड़के होरस का दम खम बढ चला। अब तक सेत के डर से उसे एक नदी के दलदल मे छिपाकर रखा गया था। लेकिन जवान होने पर जब उसने अपने पिता की हत्या का समाचार सुना, तो सेत से उसका बदला चुकाने की ठानी। एक दिन होरस ने सेत को जा घेरा। दोनों मे घमासान लड़ाई हुई। होरस की एक आँख जाती रही, और सेत का खातमा हो गया।

(२)

जल प्रलय की कहानी

पृथ्वी के देवता एन्लिल ने आदमियों के पाप से चिढकर देवताओ की एक सभा की और आदमियो को उनके किए की सजा देने के लिए तै किया कि दुनिया को बाढ से तबाह कर दिया जाय। पर एक दूसरे देवता इया ने आकर शुरूप्पक नगर के रहनेवाले जिउसुद्दू (न्उत्नपिं-श्तिमन्अत्रखसीस) नाम के एक आदमी को उसका भेद बताकर मानव जाति की रक्षा कर ली। जिउसुद्दू ने जलप्रलय की वह कथा अपने वशज गिल्गमेश से इस प्रकार कही।



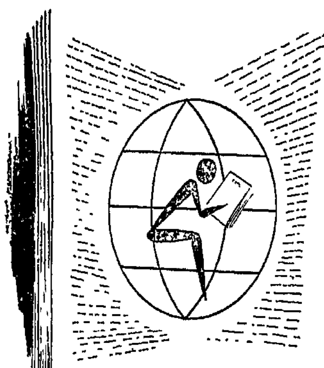
बलि चढाई, यज्ञ किया। पर्वत की ऊँची शिला पर मैने सात बोतल मदिरा चढाया, उसके नीचे बेत, दारू और धूप-अगर बिखेरे। देवताओं ने उसकी सुगधि ली और यज्ञ के स्वामी के चारों ओर इकट्ठे हो गए। अंत में देवी उनशा पहुँची और वह हार, जो अनु देवता ने उसके कहने से बनाया था, दिखाकर बोली, 'देवताओ, जैसे मै अपने गले की उन नील मणियो को नही भूलती, उसी तरह मै इन बुरे दिनो को नही भूल सकती। उन्हे मै सदा याद रखूंगी। सब देवता यज्ञ मे पधारे परन्तु एन्लिल न आवे। उस यज्ञ का भाग वह न पावे, क्योकि उसने कहना नही माना, क्योकि उसने जल प्रलय कर डाला और गिन गिनकर मेरी एक एक प्रजा का नाश कर दिया।'

"देवता एन्लिल ने नाव देखी और वह क्रुद्ध हो उठा। उसने पूछा कि किस प्रकार कोई भी आदमी जल प्रलय से बचकर निकल गया? नेक देवता एंकी ने जवाब दिया 'हे देवताओ के देवता! तूने कहना क्यो नही माना और बरबस प्रलय मचा दी? प्रलय मचाने से अच्छा होता कि तू शेर और भेड़िये भेजकर प्रजा की सख्या कम कर देता। पाप पापी के ऊपर डाल। अब कृपा कर, ताकि जिउसुद्दू बिल्कुल अकेला न रह जाए, मतिभ्रम न हो जाए।'

"क्रुद्ध देवता शात हो गया। कुछ के किए पापो का दंड बहुतो को देनेवाले उस देवता को एकी बुरा भला कहता रहा। अत मे एन्लिल ने आकर मुझे नौका से बाहर निकाला। फिर वह मेरी पत्नी को भी बाहर निकाल लाया और उससे मुझे प्रणाम कराया। उसने हमारा माथा छुआ और हमारे बीच खडे होकर हमे आशीर्वाद दिया। उसने कहा, 'पहले जिउसुद्दू मनुष्य था पर अब से जिउसुद्दू और उसकी पत्नी निश्चय ही हमारी तरह देवता होगे और दूर नदियो के मुहानो मे वास करेगे।'"

(१)

बंगला साहित्य



"वंदे मातरम्..." हमारा एक राष्ट्रीय गान है, जो सारे देश मे गाया जाता है। उसे बगला के महान् लेखक वकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने लिखा है।

हमारा दूसरा राष्ट्रीय गान "जन मन गण " है। उसे कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा है। आज की दुनिया मे ऐसा कोई सभ्य देश न होगा जहाँ के लोग कवि रवीन्द्रनाथ का नाम न जानते हों। उन्होंने अपना सारा साहित्य बगला भाषा मे ही लिखा है। रवीन्द्रनाथ इस युग के भारत के सबसे बड़े कवि थे।

उनसे पहले भी बगला मे बहुत से कवि और साहित्यकार हो चुके है। कोई हजार साल पहले बगाली साधु सतो ने पहले पहल बगला भाषा मे भजन, गान और पद लिखे थे, जिन्हे 'चर्यापद' कहते है। जिस समय चर्यापद लिखे गए, उससे पहले लगभग सभी बगाली कवि सस्कृत मे ही साहित्य रचना करते थे। उनमे जयदेव बहुत प्रसिद्ध कवि हो गए है। उनके काव्य का नाम 'गीतगोविन्द' है, जो राधा और कृष्ण की प्रेमलीला को लेकर लिखा

गया है। बहुत से लोगो का कहना है कि जयदेव की संस्कृत भाषा बंगला भाषा का ही मँजा हुआ सुन्दर रूप है।

जयदेव का घर पच्छिमी बगाल के वीरभूम जिले के केंदुविल्व गाँव मे था। आजकल उस गाँव का नाम केंदुली है। पिछले आठ सौ बरस से केंदुली मे हर साल जयदेव के नाम पर मेला लगता है। जयदेव ने राधाकृष्ण की कथा लिखी थी। पर जयदेव के पदो मे जो भाव है वैसे ही भाव लिए हुए बहुत से प्राचीन पद बगला मे भी मिलते है।

चडीदास के लिखे हुए पद प्राचीन बगला के पदों के सबसे पुराने नमूने है। चडीदास बगालियो के प्राणो के कवि थे। जान पड़ता है कि चडीदास किसी एक आदमी का नाम नही था, बल्कि बहुत से कवियो ने उस नाम से पद लिखे थे। यह भी हो सकता है कि बहुत से कवियो ने चडीदास के पदो मे ही अपने पद मिला दिए हो। चडीदास नाम से सबसे पहले लिखनेवाले का नाम बडू चडीदास था। कुछ लोगो का कहना है कि बडू चडीदास वीरभूम ज़िले के नान्नूर गाँव के रहनेवाले थे, और उनका जन्म आज से लगभग पाँच सौ बरस पहले, सन् १४५० ईस्वी के आसपास हुआ था। कुछ दूसरे लोग उनके जन्म की तिथि को उसके लगभग सौ बरस बाद, यानी सन् १५५० ई० के आसपास, मानते है।

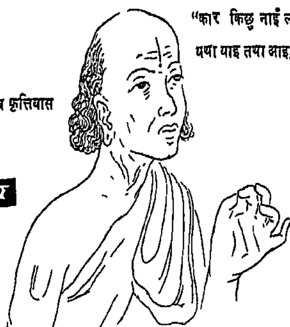
बडू चडीदास ने अपने पदो मे कृष्ण की वृन्दावन लीला की भिन्न भिन्न कथाएँ तेरह खडो की एक पोथी मे लिखी है, जिसका नाम 'श्री कृष्ण कीर्तन' है। उसके हर पद के शुरू मे राग रागिनियो के नाम दिए है। 'श्री कृष्ण कीर्त्तन' के पद नाटको की तरह सवाल जवाब के ढग पर रचे गए हैं, जिससे मालूम होता है कि वे पद लीला खेलते समय गाए जाते होगे। लीला के

गाने गाए जानेवाले पदों को उन दिनों 'नाट्यगीत' कहते थे। पुराने जमाने में कुछ नाटकों में बातचीत गीतों में होती थी। चंडीदास के नाट्यगीत उन नाटकों के सबसे पुराने नमूने हैं। उनसे पता चलता है कि उन दिनों बंगाल में नाट्यगीतों का आम चलन था।

कृत्तिवास नाम के एक दूसरे कवि ने राम के जीवन पर उसी प्रकार की कविताएँ लिखीं, जैसी चंडीदास ने कृष्ण के जीवन पर लिखीं। बंगला भाषा की सबसे पुरानी रामायण उनकी ही लिखी हुई है। कृत्तिवास का जन्म चंडीदास से कुछ पहले हुआ था। उनके जन्म दिन के बारे में दो रायें हैं। कुछ लोग उनका जन्म सन् १३९८ ई० में और दूसरे सन् १४०३ ई० में मानते हैं। कुछ भी हो, वे अब से कोई साढे पाँच सौ साल पहले पैदा हुए थे। कृत्तिवासी रामायण से पहले भारत की किसी और आधुनिक भाषा में कोई रामायण नहीं लिखी गई थी। यह ठीक है कि तब से अब तक बंगला भाषा बहुत बदल गई है, और कृत्तिवास ने जो भाषा लिखी थी उसका अब चलन नहीं रहा। फिर भी 'कृत्तिवासी रामायण' बंगालियों की राष्ट्रीय संपत्ति है। आज भी घर घर में उसका पाठ होता है।

कृत्तिवास नदिया जिले के फुलिया गाँव में पैदा हुए थे। पढ़ाई लिखाई के बाद वे गौड़ देश के राजा की सभा में गए। राजा ने कवि का बहुत आदर मान किया और उनसे बार बार इनाम माँगने के लिए कहा। पर कवि ने इनाम माँगने से साफ इंकार कर दिया। कारण पूछने पर उन्होंने कहा –

"कार किछु नाईं लइ, करि परिहार
यथा याइ तथा आइ, गौरव मात्र सार।"



कवि कृत्तिवास

यानी, "मै किसी से कुछ नही लेता। मै धन लेने से बचता हूँ। मैं जहाँ जैसा जाता हूँ, वैसा ही लौट आता हूँ। मेरे लिए आदर्श ही एक मात्र सार वस्तु है।"

इस प्रकार उन्होने सभी कवियो के लिए एक ऊँचे आदर्श की परम्परा कायम कर दी।

रामायण लिखे जाने के एक सौ बरस के भीतर ही बगला मे पहले पहल चटगाँव जिले के परागलपुर गाँव मे महाभारत की रचना हुई। उन दिनो बगाल मे सुलतान हुसैनशाह का राज्य था, जिन्होने सन् १५०३ ई० से १५१९ ई० तक शासन किया। उनके जैसा जनता का प्यारा राजा वहाँ और कोई नही हुआ। हुसैनशाह और उनके सेनापति परागल खाँ दोनो ही बगला साहित्य के बडे हिमायती और प्रेमी थे। त्रिपुरा को जीतने के बाद परागल खाँ ने वहाँ बगला मे महाभारत की कथा सुनना चाही। उनके लिए परमेश्वर नाम के एक महाकवि ने महाभारत लिखने का काम शुरु किया। परागल खाँ के बेटे, छोटे खाँ, के राज्यकाल मे श्रीकर नदी नाम के एक दूसरे कवि ने उस महाभारत मे 'अश्वमेध पर्व' नाम का एक और अध्याय जोडा। उस समय तक भारत की किसी दूसरी भाषा मे महाभारत का अनुवाद नही हुआ था। उसके बाद सन् १६०२-१६०३ई० मे काशीराम दास नाम के एक दूसरे कवि ने भी बगला मे महाभारत लिखा। काशीराम दास के महाभारत का परागली महाभारत से कही अधिक आदर हुआ। काशीराम दास सचमुच बड़े अच्छे कवि थे।

बंगाल के जीवन पर कृत्तिवासी रामायण और काशीदासी महाभारत की ऐसी अमिट छाप है कि अगर उन्हे भुला दिया जाय, तो बगाली जाति की सस्कृति को समझना असभव हो जाएगा।





चैतन्यदेव

चैतन्यदेव का भी बगला साहित्य मे लगभग कृत्तिवास और काशीराम दास जैसा ही स्थान है, हालाँकि बंगला मे उनकी लिखी एक पाँति भी नही मिलती। बंगालियो की निगाह मे वे साक्षात् श्रीकृष्ण के अवतार थे। उनका जन्म सन् १४८६ ई० मे नवद्वीप मे हुआ था। चैतन्य बेजोड पडित थे, और सन्यास लेकर भगवान के प्रेम में पागल से हो गए थे। श्री चैतन्य ने उत्तर और दक्खिन के सभी तीर्थो की यात्रा की, और ब्राह्मण से लेकर चांडाल तक सबको श्रीकृष्ण के प्रेम की माधुरी बाँटी। जीवन के आखिरी दिनों मे वे उडीसा के नीलाचल स्थान में रहने लगे थे। वही ४७ बरस की उमर मे सन् १५३३ ई० मे उनका देहान्त हुआ। उनकी मृत्यु के बाद उनके भक्तो का एक बहुत बडा सम्प्रदाय बन गया। उन भक्तों मे से बहुतो ने सस्कृत और बगला दोनो भाषाओं में काव्य, नाटक और दर्शन के अनेक ग्रथ लिखे। शायद ही किसी एक समय मे एक साथ इतने अधिक ग्रथ लिखे गए हो। इसीलिए बगला साहित्य में सन् १५०० ई० से सन् १७०० ई० तक के समय को 'चैतन्य युग' कहा जाता है।

चैतन्य युग के वैष्णव लेखकों की खास रचना 'वैष्णव पदावली' है, जिसमे कृष्ण-लीला और चैतन्य-लीला के पद है। उन पदो की रचना चैतन्यदेव के बाद दो सौ बरस तक लगातार होती रही। आज भी उनमे से लगभग दो सौ कवियो के रचे हुए कोई आठ हजार पद मिलते है। चडीदास

और विद्यापति के बाद ज्ञानदास और गोविन्ददास बंगाल के दो अमर कवि हुए। वे दोनो ही वर्दवान जिले मे पैदा हुए थे। ज्ञानदास आज से कोई ढाई सौ बरस पहले और गोविन्ददास दो सौ बरस पहले हुए थे।

वैष्णव पदावली के पदो की रचना करने वालो मे सैयद मुर्तजा जैसे कई मुसलमान भक्त और कई महिलाएँ भी थी। अनेक पद ऐसे भी है जिनके लिखनेवालों का ठीक पता नही चलता। पर सभी कवियो के भाव एक से ही है। सभी कृष्ण के प्रेम मे मतवाले है। किसी का कहना है कि ससार मे 'सार' बस एक 'पिरीति' (कृष्ण की प्रीति) ही है, तो किसी ने कहा है कि जप तप कुछ नही है 'रसिक' (भक्ति के रस का आनन्द लेनेवाले) बनो। पूजा पाठ मे अक्सर एक ऐसी भावना होती है कि मनुष्य तुच्छ है और भगवान बहुत ही महान् है। उसके खिलाफ वैष्णव कवियो ने यह बताया कि मनुष्य अपने आप मे महान् है और उसको भगवान से सहज भाव से ही प्रेम करना चाहिए। अपने को हीन समझकर नही, बल्कि मनुष्य को कृष्ण से वैसे ही प्रेम करना चाहिए, जैसे कोई भी अपने प्रिय से प्रेम करता है। अपने को हीन समझने की भावना के खिलाफ आवाज उठाते हुए चडीदास ने कहा—'मानुष जनम' जैसा सौभाग्य और कोई नही होता, 'मानुष' ही सत्य है।

> "शुनह मानुष भाई,
>
> सबार उपरे मानुष सत्य, ताहार उपरे नाई।"

यानी, "हे मनुष्य भाई सुनो! सबसे बडा सत्य आदमी ही है। उससे बडा सत्य और कुछ नही है।"

भक्ति के पदो के अलावा उन दिनो कविता मे भक्तो की जीवनियाँ भी लिखी गई। सबसे पहले चैतन्यदेव की जीवनी लिखी गई। आगे चलकर हिन्दी के

'भक्तमाल' का अनुवाद बगला में हुआ। हिन्दी मे भक्तमाल प्रसिद्ध कवि नाभादास ने लिखी है। उसमे उन्होने अपने से पहले के सभी भक्तो की प्रशसा पदो मे की है। कविता मे जितनी जीवनियाँ लिखी गई, उनमे वृन्दावनदास के 'चैतन्य भागवत', और कृष्णदास कविराज के 'श्रीचैतन्यचरितामृत' का बड़ा महत्व है। 'श्रीचैतन्यचरितामृत' तो बिल्कुल ही बेजोड़ रचना है।

भक्ति की धारा का प्रभाव दूसरे लेखको पर भी पड़ा, जिन्होने कविता मे एक विशेष प्रकार की कथाएँ लिखी। उस कथा काव्य को 'मगल काव्य' कहते है, जिनमे बगाली समाज मे प्रचलित कहानियाँ कही गई है। मगल काव्य भी किसी एक कवि की रचना नही है। सन् १४०० से सन् १८०० तक न जाने कितने कवियो ने अनेक देवताओ के नाम पर मगल काव्य लिखे।

मगल काव्यो मे 'मनसा मगल' एक मुख्य रचना है। विषय गुप्त, नारायणदेव आदि उसके कई लेखक है। 'चडी मगल' उसी तरह की दूसरी मुख्य रचना है। चडी मगल के खास लिखनेवाले का नाम 'मुकुन्दराम चक्रवर्ती' था, जिन्हे कवि-ककण की पदवी दी गई थी। उनकी रचना मे काव्य के गुण तो है ही, उनमे चरित्रो का वर्णन भी ऐसा सजीव है कि पढनेवाले को उसमे उपन्यास जैसा रस मिलता है।

मुकुन्दराम के लगभग डेढ सौ-साल बाद भारतचन्द्र राय ने 'अन्नदा मगल' लिखा। वे अपने ढग के अकेले कवि थे। उनकी पदवी 'कवि गुणाकर' थी। ऐसी मँजी मँजाई, चटपटी और मनोहर कथा की रचना और कोई नही कर पाया। पर भारतचन्द्र राय कथा के ही रसिक थे। उनके काव्य मे जान कम है। उनके बाद एक और भारतचन्द्र हुए। वे भी बहुत बड़े कवि थे। सन् १७५७ ई० मे प्लासी की लड़ाई हुई। उस समय



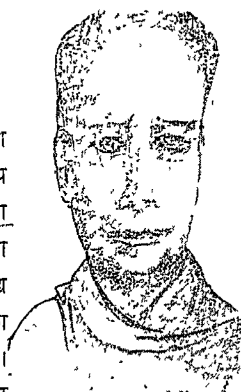
देश की आजादी-खत्म हो रही थी। वह देश के दुर्भाग्य का समय था। भारतचन्द्र के 'विद्यासुन्दर' ग्रथ मे उस समय की दुर्दशा की छाप है।

पर विद्यासुन्दर ग्रथ से भी कोई सत्तर अस्सी साल पुराने दो और ऊँचे दर्जे के काव्य पाए जाते है, जिनकी रचना दो सूफी मुसलमानो ने की थी। वे दोनों चटगाँव के कराकान नामक बौद्ध राजा की राजसभा मे थे। उनके नाम दौलत काजी और सैयद आलाओल थे। दौलत काजी ने 'लोर चन्द्राणी' लिखी, और सैयद आलाओल ने हिन्दी के कवि मलिक मुहम्मद जायसी के 'पद्मावत' का अनुवाद किया। कवि आलाओल जैसे उदार और पडित कवि बहुत कम पैदा हुए है। वे आज से ढाई सौ बरस पहले हुए थे, जब बंगाल ने अपनी आजादी नही गँवाई थी।

अंग्रेजी राज्य के शुरू के लगभग पचास साल का समय बगला साहित्य के लिए अधकार का युग था, क्योकि बगाल ने ही सबसे पहले आजादी खोई थी। मगर पराधीनता की पीडा भी सबसे पहले बगाल ने ही महसूस की, और नई जागृति भी पहले वही आई। उसके बाद बगाल मे जिस साहित्य की रचना हुई, उसके तेवर कुछ और ही थे। उस साहित्य ने लोगो को सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक आजादी के लिए जैसे झँझोड कर जगा दिया और दिलो मे आजादी की तडप पैदा कर दी। आजादी की उस भावना के अगुआ राजा राममोहन राय थे। उनका जन्म सन् १७७२ ई० मे हुआ था और वे सन् १८३३ ई० मे विलायत मे मरे थे। वे ज्ञानी, धर्म सुधारक, समाज सुधारक और कर्मठ महापुरुष थे। उन्होंने अखबार निकाले, पुस्तिकाएँ लिखी और शास्त्रो की टीका की। उन्होने अपने इन कामो के जरिए बगला गद्य की नीव डाली।


राजाराम मोहन राय

उस समय सबसे पहला काम नई शिक्षा फैलाना था। इसीलिए सबसे पहले शिक्षा के विषय पर ही साहित्य रचा गया। इस सिलसिले मे ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का नाम सदा अमर रहेगा। ये सन् १८२० ई० में पैदा हुए और सन् १८९१ ई० मे मरे थे। यो तो बगला गद्य की बुनियाद राजा राममोहन राय ने रखी थी, पर बगला गद्य के पिता ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ही माने जाते है।



ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

सन् १८१७ ई० से १८६७ ई० तक, पचास साल मे शिक्षा का जो विस्तार हुआ, उसके फल १८५७ ई० के स्वतन्त्रता सग्राम के बाद प्रकट होने लगे। उसी शिक्षा का नतीजा था कि बगला साहित्य मे एक नया युग शुरू हुआ। धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक कामो मे पढे लिखे बगाली दीवानो की तरह जुट पड़े। निलहे गोरो के अत्याचारो के खिलाफ दीनबन्धु मित्र ने सन् १८५९ ई० मे 'नीलदर्पण' नाम का नाटक लिखा। प्रसिद्ध लेखक माइकेल मधुसूदन दत्त ने उसका अग्रेजी अनुवाद किया। उसे छापने के जुर्म मे अग्रेज पादरी लौग साहब को भी जेल की सजा भुगतना पडी। पर 'नीलदर्पण' के अनुवादक माइकेल मधुसूदन दत्त पर उस सजा का उल्टा प्रभाव पडा। उन्होने अग्रेजी को छोड़कर बगला मे नाटक और काव्य लिखना शुरू किया। माइकेल जैसी अनोखी प्रतिभा दुनिया मे कम नजर आती है। नाटक और प्रहसन लिखने के अलावा उन्होने एक महाकाव्य भी लिखा। उस महाकाव्य का नाम 'मेघनाद वध' है। मेघनाद वध एक अनोखी रचना है। राम, कृष्ण, बुद्ध और ईसा आदि की कथाएँ लेकर ऊँचे ढग का बहुतेरा साहित्य

लिखा गया है। पर जिन चरित्रों को लोग आम तौर से बुरा कहते हैं, उनके ऊपर साहित्य लिखना आसान काम नहीं है। माइकेल ने रावण के पुत्र मेघनाद और लक्ष्मण की लड़ाई की कथा लेकर 'मेघनाद वध' लिखा, और इतना अच्छा लिखा कि पढ़नेवाला बरबस मेघनाद की वीरता और उसके गुणों पर मुग्ध हो जाता है। मेघनाद के सामने लक्ष्मण का चरित्र फीका पड़ जाता है। हिन्दी मे उसका अनुवाद कवि मैथिलीशरण गुप्त ने किया है। माइकेल का 'वीरागना काव्य' और 'व्रजागना काव्य' भी बेजोड़ है। बगला मे सानेट या चौदहपदी कविता भी पहले पहल माइकेल ने ही लिखी। कुल छे वर्ष के भीतर माइकेल मधुसूदन दत्त ने बगला कविता का पूरा रूप बदल दिया।

उनके बाद कई और बडे बड़े कवि पैदा हुए। उनमे तीन खास है—नवीन चन्द्र सेन, हेमचन्द्र बन्द्योपाध्याय और बिहारीलाल चक्रवर्ती। लगभग उसी समय, यानी सन् १८६५ ई० मे, एक और महान् लेखक बगला साहित्य के मैदान मे उतरे। वे बकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय थे। बंकिम चन्द्र ने ही अपने 'आनन्दमठ' नाम के उपन्यास मे "वदे मातरम्" गीत लिखा है। उनका पहला उपन्यास 'दुर्गेशनन्दिनी' सन् १८६५ ई० मे प्रकाशित हुआ था। उस समय बकिम केवल २७ वर्ष के थे। सन् १८९४ ई० के मार्च के महीने मे ५६ साल की उमर मे बकिम बाबू का देहान्त हो गया। उन्होने ही सन् १८७२ ई० मे बगदर्शन नाम के पत्र की स्थापना की थी और अतिम साँस तक उसका सम्पादन भी किया। उस पत्रिका ने बगला मे लेखकों का एक नया दल पैदा किया। बकिम बाबू ने 'विषवृक्ष', 'कपाल कुडला', आदि लगभग १५ छोटे बडे उपन्यास और

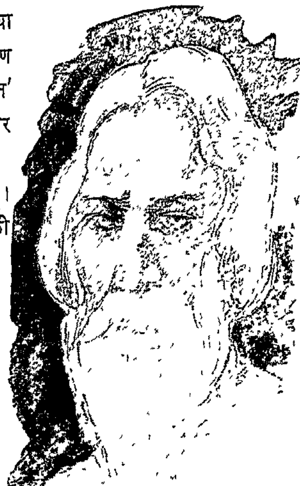

बकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय



दूसरे विषयों की लगभग १५ ही और पुस्तके लिखीं। दूसरे विषयों की पुस्तकों मे साहित्य, धर्म और दर्शन आदि पर उन्होने अपने विचार प्रकट किए है। वे देशभक्त, अत्यन्त बुद्धिमान और प्रबल चरित्रवाले महापुरुष थे। वे साहित्य मे नए विचार देनेवाले ही नही थे, बल्कि गलत विचारों को रोकनेवाले भी थे। इसीलिए उनको रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'सव्यसाची बंकिम' कहा है। सव्यसाची का अर्थ है, वह वीर जो दाएँ और बाएँ दोनो हाथ से एक समान लड सके और जिसके दोनों हाथ के निशाने सच्चे हों। बकिम बाबू भारत के पहले उपन्यासकार थे। लेकिन अगर वे उपन्यास न लिखकर केवल अपने निबंध ही लिखते, तो भी बकिम 'बकिम' ही रहते।

बकिम चन्द्र की मृत्यु से पहले ही रवीन्द्रनाथ साहित्य के मैदान मे उतर चुके थे। उनका जन्म सन् १८६१ ई० मे जोडासाँको (कलकत्ता) के प्रसिद्ध ठाकुर वश मे हुआ था। उनके पिता और सभी बडे भाई साहित्यकार थे। बडी बहन स्वर्णकुमारी देवी भी साधारण लेखिका नही थी। सच पूछिए तो उस समय पूरे बगला साहित्य मे एक ज्वार सा आया हुआ था। उसी ज्वार के कारण सन् १९०५ ई० मे 'स्वदेशी आदोलन' की जो बाढ़ आई तो बगाल के पूरे जीवन पर छा गई।

कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर



रवीन्द्रनाथ की शक्ति अनन्त थी। उनकी रचनाएँ रग बिरगी है। उनकी

लिखी हर चीज गठी हुई, सुन्दर और मग्न है। मानवता की महिमा में उनका अटल विश्वास था। कविता और कहानी लिखने में उनकी गिनती संसार के चोटी के लेखकों में की जाती है। वे इतनी कविताएं, इतने गाने, इतनी कहानियां, इतने नाटक, इतने उपन्यास, गीति-नाट्य, नृत्य-नाट्य, पत्र, यात्रा-पुस्तकें, रस-प्रबन्ध, साहित्यिक समालोचना, सामाजिक लेख, धार्मिक निबंध आदि लिख गए हैं कि उनके पूरे साहित्य को कोई आसानी से पढ़ भी नहीं सकता।

रवीन्द्रनाथ के समय में और भी कई अच्छे कवि थे। उनमें अक्षयकुमार बड़ाल, देवेन्द्रनाथ सेन और श्रीमती कामिनीराय प्रमुख थी। पर रवीन्द्र की प्रतिभा सूर्य की तरह इतनी अधिक चमकदार थी कि उनके सामने दूसरे फीके पड़ गए। रवीन्द्रनाथ की देन से बंगला साहित्य मानो दो सौ साल आगे बढ़ गया। इतना ही नहीं उनके उदार विचारों और मानव प्रेम ने संसार के सब देशों का मन मोह लिया।

रवीन्द्रनाथ के जीवन काल में ही शरत् चन्द्र चट्टोपाध्याय का नाम चमक चुका था। उनका जन्म सन् १८७८ ई० में और मृत्यु सन् १९३८ ई० में हुई। वे बंगाल के सबसे प्रिय उपन्यासकार हैं। 'श्रीकान्त', 'चरित्रहीन', 'देवदास', आदि उनकी ही कृतियाँ हैं। वे भी आजादी के पुजारी थे। 'पथेरदावी' या 'पथ के दावेदार' उन्हीं का लिखा हुआ उपन्यास है। समाज के दलित पीड़ित नर नारी के लिए उनके मन में अथाह जगह थी। उन्होंने अपने उपन्यासों में आनेवाले

शरत् चन्द्र चट्टोपाध्याय





लोगो के ऐसे चित्र खीचे है कि व पढनेवालो के मन मे बसकर रह जाते है।

रवीन्द्रनाथ और शरत् चन्द्र के समय मे और भी कई महान् सूझ बूझ के लेखक बगला साहित्य मे पैदा हुए। विशेष रूप से रामेन्द्र सुन्दर त्रिवेदी, विपिन चन्द्र पाल, हरप्रसाद शास्त्री जैसे निबध लिखनेवाले, प्रभातकुमार मुखोपाध्याय जैसे कहानी लेखक, और यतीन्द्र मोहन बागची, मोहितलाल मजुमदार, यतीन्द्रनाथ सेन, सत्येन्द्रनाथ दत्त और काजी नजरुल इस्लाम जैसे शक्तिशाली कवि किसी भी साहित्य मे सदा याद किए जाने योग्य है। आजकल के जीवित लेखको मे भी चमत्कारी गद्य लेखको, अच्छे उपन्यासकारो और विचार से भरे हुए निबध लेखको की कमी नही है। हर साल नए नए लेखक अपनी विचारो से भरी रचनाओ की देन लेकर प्रकाश मे आ रहे है।

बगला साहित्य की मूल भावना का निचोड़ नीचे की दो पक्तियो मे पाया जाता है, जिनके भाव को बगला साहित्य मे बार बार और तरह तरह से दुहराया गया है। वे दो पक्तियाँ है —

"स्वाधीनता हीनताय के बाँचिते चाय रे, के बाँचिते चाय ?"

(आजादी खो जाने पर कौन जिदा रहना चाहता है रे, कौन ?)

और

"सबार उपरे मानुष सत्य, ताहार उपरे नाइ।"

(सबसे बडा सत्य मनुष्य है। उससे बडा सत्य और कुछ नही।)

———o———



(२)

☆ असमी साहित्य

पंडित हर प्रसाद शास्त्री बंगाल के एक प्रसिद्ध विद्वान थे। कुछ दिन हुए, उन्हें नेपाल में बहुत सा पुराना भारतीय साहित्य मिला था। वह सब 'बौद्ध गान उ दोहा' नाम की पुस्तक में प्रकाशित हुआ है। उन पुराने साहित्य की भाषा को बगला, उड़िया और असमी तीनों भाषाओं के लोग अपनी भाषा का सबसे पुराना नमूना मानते हैं। पर असमी भाषा के सबसे पुराने रूप की जानकारी उन शिलालेखों से होती है जो हाल की खुदाइयो में मिले हैं। असमी भाषा उन भाषाओं में से है, जिन्हें विद्वान लोग 'हिन्द-युरोपीय' (Indo-European) कहते हैं। 'हिन्द-युरोपीय' मे सभी भारतीय भाषाओं की गिनती होती है। पर इस बात से इकार नही किया जा सकता है कि असमी भाषा पर उन भाषाओं का भी बहुत प्रभाव है, जिन्हे मगोल परिवार की भाषाएँ कहते हैं। ये भाषाएं चीन, तिब्बत, कम्बोडिया आदि देशो मे बोली जाती है। असमी भाषा मे बहुत से शब्द मगोल भाषाओं से आए है। खुद 'असम' शब्द मगोल भाषा का है, जिसका अर्थ है 'वह जो हारा न हो।'

असमी भाषा की जो सबसे पुरानी पुस्तक मिलती है, उसका नाम 'प्रह्लाद चरित' है। वह कविता की पुस्तक है और उसे 'हेम सरस्वती'

नाम के एक कवि ने १३ वी सदी मे लिखा था। हेम सरस्वती ने महाभारत से प्रह्लाद की कथा लेकर उस काव्य की रचना की थी। लगभग उसी समय असम मे दो और कवि हुए, जिनके नाम हरिहर विप्र और कविरत्न सरस्वती थे। उन्होने भी महाभारत की कथाओ के आधार पर काव्य रचे। चौदहवी सदी मे एक राजा ने माधव कजली नाम के एक कवि से असमी भाषा मे वाल्मीकि रामायण का अनुवाद कराया। उसे पुरानी असमी की सबसे महत्वपूर्ण रचना माना जाता है। माधव कजली की दूसरी पुस्तक देवजित् है। वह भी कविता मे ही है। देवजित् की रचना मे सगीत की मधुरता और मुहावरेदार भाषा का अनूठा मेल है। कविता रचने का वह ढग बिल्कुल नया था। असमी मे उस ढग का चलन वैष्णव आदोलन के शुरू होने पर देवजित् की रचना के लगभग सौ साल बाद हुआ।

उसी जमाने मे दुर्गाबार ने रामायण की कथा और मनकर नाम के एक दूसरे कवि ने मनसा देवी की कहानी गीत मे लिखी। मनसा सापो की देवी का नाम है, जिसकी कथा असम के घर घर मे कही जाती है। पीताम्बर नाम के एक और कवि ने ऊषा और अनिरुद्ध की प्रेम कहानी लिखी, जो असमी भाषा की बहुत लोकप्रिय गीत-कथा है। उस समय के सभी कवियो ने देहाती जीवन की जिन्दा तस्वीरे खीची और लोक गीतो की धुन मे गीत लिखे।

१५ वीं सदी मे शकर देव (सन् १४४९–१५६८) ने असम मे वैष्णव धर्म का प्रचार शुरू किया। शकरदेव और उनके शिष्य माधवदेव वैष्णव आंदोलन के नेता थे। वे सेवक भाव से भगवान को स्वामी मानकर उनकी पूजा करने का उपदेश देते थे। इसलिए सेवक और स्वामी भाव को ही लेकर उन्होंने भक्ति की कविताएँ लिखी। भाषा और साहित्य

म उस समय बहुत निखार आया। माधव कजली ने वाल्मीकि रामायण का जो अनुवाद किया, उसके दो काड राजनीतिक हलचलो मे ग़ायब हो गए थे, उन्हे शकरदेव और माधवदेव ने फिर से लिखा।

शकरदेव ने छे नाटको के अलावा भक्ति गीत भी लिखे, जिनका आज तक बहुत मान है। उनके नाटको मे गद्य और पद्य दोनो है। गद्य लिखने का उनका एक खास ढग था, जिसे 'व्रजबुली' कहा जाता है। उस ढग के गद्य का आरभ उनकी रचनाओ से ही माना जाता है।

शकरदेव ने भागवत की कथा लेकर रुक्मिणी-हरण काव्य लिखा। माधवदेव ने भी कई नाटक और गीत लिखे। उनके गीतो मे पक्के गाने की राग रागिनियाँ है। उस जमाने मे और भी बहुत से लेखक हुए। उनमे से राम सरस्वती ने तो करीब करीब पूरे महाभारत का अनुवाद कर डाला। उन्होने महाभारत की कथाओं को लेकर प्रेम की कविताएँ भी लिखी। भट्टदेव भी उस समय के एक लेखक थे। उन्होने भागवत और गीता का असमी गद्य मे अनुवाद किया। उनके गद्य लिखने के ढग पर सस्कृत का बहुत असर है। एक दूसरे कवि श्रीधर कडली ने कनखोव नाम का एक काव्य लिखा, जिसमे कृष्ण जी के बाल रूप का वर्णन है। वह काव्य इतना लोकप्रिय हुआ कि घर घर मे माताएँ उसके गीत लोरियो की तरह गाने लगी। श्रीधर कडली ने कृष्ण की बाललीला का वैसा ही मधुर वर्णन किया है, जैसा हिन्दी के महाकवि सूरदास ने किया है।

१६वी सदी के अत मे वैष्णव आदोलन के साथ साथ वैष्णव कवियो का भी जोर खत्म होने लगा। उस आखिरी दौर मे शकरदेव और माधव देव की जीवनियाँ कविता मे लिखी गई। वैष्णव कवियो ने आम तौर से दो

पक्तियों की कविताएँ लिखी, जिन्हे पद या पायर कहत हैं। पद या पायर लगभग हिन्दी के दोहे की तरह की रचनाएँ होती हैं।

१७वी सदी मे अम्होस लोगो ने असमी मे गद्य लिखने का एक नया ढग शुरू किया। अम्होस वे लोग थे जिन्होंने थाईलेंड से आकर १२वी सदी मे असम पर हमले किए, और बाद मे वही बस गए। उनकी चलाई गद्य शैली को बुरजी कहा जाता है। गद्य लिखने का वह ढंग बहुत सरल, चुस्त और मुहावरेदार था। बाद मे नाटक और उपन्यास लिखनेवालो ने बुरंजी शैली के गद्य का बहुत सहारा लिया। इस युग मे हस्ति-विद्यार्णव नाम की एक खास पुस्तक लिखी गई, जिसमे हाथियो के रोगो के इलाज बताए गए हैं। उस पुस्तक मे चित्र भी दिए गए है। उसी समय श्रीहस्त-मुक्तावली नाम की एक दूसरी किताब लिखी गई, जिसमे नृत्य कला का वर्णन है।

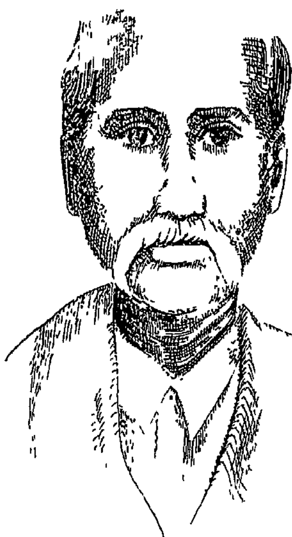
१८ वीं सदी के अत मे बर्मा की ओर से हमले शुरू हुए, जिससे असम मे उथल पुथल मच गई। उस हलचल मे साहित्य का विकास रुक गया। उसके बाद असम मे अग्रेजो का राज कायम होने के दस साल बाद ही सन् १८३६ से वहाँ की शिक्षा, अदालत और राजकाज की भाषा बगला हो गई। इस कारण आगे भी ५० बरस से अधिक समय तक असमी साहित्य का विकास रुका रहा। पर उसी जमाने मे अग्रेज और अमरीकी पादरियो ने असमी भाषा मे धर्म प्रचार शुरू किया, जिससे उस भाषा की उन्नति मे मदद मिली। श्रीरामपुर के अग्रेज मिशनरियो ने सन् १८१९ मे बाइबिल और ईसाई धर्म की दूसरी पुस्तके असमी मे छापी। अमरीकी पादरियो ने भी सन् १८४६ मे 'अरुणोदय सवाद पत्र' नाम का अखबार असमी मे निकाला। उन्होंने सन् १८७७ मे एक असमी उपन्यास भी छापा।



हेमचन्द्र बरुआ (सन् १८३५-१८९६) और गणाभिराम बरुआ (सन् १८३७-१८९५) १९वी सदी मे असमी के सबसे बडे लेखक थे। आज के असमी साहित्य का जन्मदाता भी उनको ही माना जाता है। हेमचन्द्र बरुआ ने कानीयर-कीर्त्तन नामक आधुनिक असमी साहित्य का पहला नाटक लिखा, जिसमे अफ़ीम खाने की निंदा की गई थी। उन्होने ही आधुनिक असमी साहित्य का पहला, उपन्यास भी लिखा, जिसका नाम था, बाहिरे रगचग भीतरे कोवाभातुरी। उस उपन्यास मे पुरोहितो के ढकोसलो की पोल खोली गई थी। हेमचन्द्र ने असमी भाषा का पहला वैज्ञानिक शब्दकोश भी तैयार किया और वे ही अपनी जीवनी लिखनेवाले पहले असमी लेखक भी थे। गुणाभिराम बरुआ ने सामाजिक विषयो पर कई नाटक लिखे। उनकी लिखी हुई एक जीवनी और असम का एक इतिहास भी है।

बीसवी सदी के शुरू मे असमी साहित्य मे एक नई धारा पैदा हुई, जिसके अगुआ लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ (सन्-१८६८-१९३८), चन्द्रकुमार अग्रवाल (सन् १८६७-१९३७) और हेमचन्द्र गोस्वामी (सन् १८७९-१९२८) थे। वे तीनो कलकत्ते मे ऊँची शिक्षा पा चुके थे। विद्यार्थी जीवन मे ही (सन् १८८६ मे) उन लोगो ने कलकत्ते से 'जोनाकी' नाम की एक असमी पत्रिका निकाली, जिस पर अंग्रेजी का काफी असर था। उस पत्रिका मे अंग्रेजी के प्रेम और प्रकृति के गीतो जैसे असमी गीत, देश प्रेम की कविताएँ और सामयिक लेख छपे। 'जोनाकी' निकालनेवालो मे बेजबरुआ सबसे अधिक योग्य थे। उनकी रचनाओ मे शंकरदेव और माधवदेव की जीवनी, कुछ छोटी कहानियाँ, कुछ ऐतिहासिक नाटक और कुछ सुन्दर गीत बहुत मशहूर है। उनके गद्य मे मीठी चुटकी और असमी के मुहावरों का चुस्त प्रयोग होता था। चन्द्रकुमार

अग्रवाल रहस्यवादी कविताएँ लिखते थे। ऐसी कविताओ मे कवि आम तौर से ईश्वर या ब्रह्म से संबध रखनेवाली भावनाएँ प्रतीकों मे प्रकट करता है। अग्रवाल ने 'असमिया' नाम का एक साप्ताहिक पत्र भी निकाला।


रजनीकान्त बारदोलोई

उस युग के सब से बडे उपन्यासकार रजनीकात बारदोलोई थे, जो सन् १८९५ मे ही मिरीजियारी नाम का उपन्यास लिखकर काफी मशहूर हो गए थे। मिरीजियारी मे दो आदिवासियो की दर्द भरी प्रेम कथा है। बाद मे उन्होने 'मानमती' नाम का एक और उपन्यास लिखा। उसमे बर्मा के हमलो के समय के असमी जीवन का सुन्दर वर्णन है। उनका एक मशहूर उपन्यास दॉदुआ द्रोह है, जिसमे पच्छिमी असम के एक जन आदोलन का चित्र खीचा गया है। श्री हेमचन्द्र गोस्वामी अग्रेजी के सानेट के ढग पर चौदह पक्तियो के गीत लिखने के लिए प्रसिद्ध है। वे बाद मे अच्छे गद्य लेखको मे भी गिने जाने लगे। उन्होने पुराने इतिहास के बारे मे बहुत लिखा है। बेजबरुआ के समय मे ही पद्मनाथ गोहईन बरुआ नाम के एक और लेखक हुए थे। उनकी गॉव-बूढा (गाँव के बड़े बूढे) नाम की रचना असमी भाषा मे बहुत प्रसिद्ध है।



शरत् चन्द्र गोस्वामी

उस समय के दूसरे लेखको मे सत्यनाथ वोरा कम से कम शब्दो मे बडी से बडी बात कहने लिए प्रसिद्ध है। शरत् चन्द्र गोस्वामी का कहानी लेखको मे ऊँचा स्थान है। हितेश्वर दरबरुआ ने सुन्दर अतुकान्त कविताएँ लिखने की प्रथा चलाई और नाम कमाया। अंबिका गिरि राय चौधरी ने देश भक्ति की अनेक जोशीली कविताएँ रची। उनका गद्य भी वैसा ही जोशीला है। जतीन्द्र नाथ दवेरा ने फारसी के कवि उमर खैयाम की रुबाइयो का असमी कविता मे अनुवाद किया। वह अनुवाद आज भी बडा लोकप्रिय है। इसके अलावा उन्होने गद्य काव्य भी लिखे। रघुनाथ चौधरी प्रकृति की सुन्दरता पर कविताएं लिखकर अपना नाम अमर कर गए है। उन्होने केतकी पक्षी पर एक लम्बा गीत लिखा, जो आज भी बहुत लोकप्रिय है।



रघुनाथ चौधरी

सन् १९३० के बाद के दस बरस मे गीत और छोटी कहानियो का साहित्य बहुत आगे बढा। उपन्यास भी लिखे गए, जिनमे समाज के दुख दर्द की कहानी वर्णन की गई। लेकिन रजनीकात बारदोलोई के उपन्यासो की तरह किसी और के उपन्यास लोकप्रिय नही हो सके। छोटी कहानियो का चलन बढ जाने से उपन्यासो की लोकप्रियता मे यो भी कमी आ गई थी, क्योकि उपन्यास लम्बे होते थे, उनके पढने मे अधिक समय लगता था और छपाई भी महँगी पड़ती थी। कहानियाँ पत्रिकाओ मे सरलता से छप जाती थी। साथ ही उस समय की कहानियाँ उपन्यासो से अच्छी भी थी, जो हर तरह की



और हर विषय की होती थी। माही बोरा और हाली राम डेका की कहानियाँ पढकर हँसते हँसते पेट मे बल पड़ जाते है। हाली राम ने गद्य भी अच्छा लिखा है। लक्ष्मीधर शर्मा, रमादास और कृष्ण भुयाँ की कहानियो मे नारी के दुख दर्द का सच्चा चित्र मिलता है।

नाटको मे अतुलचन्द्र हजारिका के धार्मिक नाटक काफ़ी लोकप्रिय है। समाज, देशभक्ति और इतिहास के विषयो पर भी नाटक लिखे गए। ज्योतिप्रसाद अग्रवाल उस समय के सबसे अच्छे नाटककार थे, जिनके शोणित-कुमारी और कारेनगर-लिगिरि नामक नाटक बहुत अच्छे है। शोणित-कुमारी धार्मिक नाटक है और कारेनगर-लिगिरि एक प्रेम कथा के आधार पर लिखा गया है। वे नाटक पढने मे ही नही, खेलने मे भी अच्छे साबित हुए है।

दूसरे महायुद्ध के समय असमी साहित्य की गति मे रुकावट आ गई। वह देश के आर्थिक सकट का जमाना था, जिसका प्रभाव असम पर भी पडा। उस आर्थिक सकट के कारण किताबे छापना और पत्रिकाएँ निकालना कठिन हो गया, और लेखको के दिन कष्ट मे बीतने लगे। इसलिए साहित्य मे एक उदासी सी छा गई। उस सकट की घडी मे नए विचारो के कुछ युवको ने रास्ता दिखाया। उन्होने सन् १९४४ मे 'जयन्ती' नाम की एक पत्रिका निकाली। उन युवक लेखको के नेता कवि रघुनाथ चौधरी थे। उस पत्रिका मे प्रेम और भावुकता की कविताओ को "युग के लिए बेकार" कहा गया। उस पत्रिका ने समाज की बुराइयो और जरूरतो को लेकर साहित्य रचने पर जोर दिया।

असमी साहित्य मे एक नई धारा पैदा हुई। उस नई धारा के कवियो मे हेमकान्त बरुआ और अब्दुल मलिक ने काफी अच्छी कविताएँ

लिखीं। अब्दुल मलिक की कविताओं में पूंजीपतियों के अत्याचार और पीड़ितों के दुख दर्द की कहानी है। उन्होंने जनता को शांति रखने के लिए उभारा। उनकी कविता में जोश नहीं है, पर जोश और विचारों की तेजी है।

इस नई धारा का असर कुछ ऐसा पड़ा कि पुराने कवियों ने या तो लिखना ही बंद कर दिया, या लिखा तो ऐसा साहित्य लिखा जिसका जनता के जीवन से कोई सम्बन्ध ही न था। पुराने कवि रत्नेश्वर ठाकुर ने महाभारत की एक कथा के आधार पर रूप-ज्योति नाम का एक अच्छा काव्य लिखा। पर मैदान आम तौर से नए कवियों के ही हाथ रहा।

पिछली बड़ी लड़ाई के बाद फिर एक बार अच्छे उपन्यासों का युग शुरू हुआ। बीना बरुआ ने जीवनेर-बाटत नाम के उपन्यास में गांव की एक लड़की के कष्टों की दर्दनाक कहानी लिखी, जिसका असर पढ़नेवालों पर गहरा असर पड़ा। मुहम्मद पियार का हेरोवा-स्वर्ग, राधिका मोहन गोस्वामी का चाक नइया, योगेशदास का डावर आरु नाई अच्छे उपन्यासों में हैं। इस उपन्यास में युद्ध के कारण जनता पर आई हुई विपत्तियों का मार्मिक वर्णन है। दीननाथ शर्मा के नदाई नाम के उपन्यास में एक किसान के जीवन का वैसा ही हृदय हिला देनेवाला वर्णन है। उस समय आदिवासियों के जीवन के बारे में भी कई अच्छे उपन्यास लिखे गए।

छोटी कहानियां लिखने में भी अब्दुल मलिक का बड़ा नाम है। कवि के रूप में तो वे महायुद्ध के पहले ही धाक जमा चुके थे। एक दूसरे अच्छे कहानी लेखक वीरेन्द्र भट्टाचार्य हुए हैं। मलिक और

असम के एक गांव का दृश्य



भट्टाचार्य दोनो की कहानियों मे मनुष्य मात्र के साथ भाईचारे की भावना है। भुवेन सेकिया की कहानियो मे हँसी और मनोरजन के पुट है। पपिया तारा ने अपनी कहानियो द्वारा समाज की कुरीतियो पर चोट की है। इसी पीढी के कहानी लिखनेवालो ने रिश्वतखोर दारोगा और स्कूलो के लालची इस्पेक्टर को खास तौर से अपना निशाना बनाया है।

साहित्य मे नए विचार फैलने से नाटको मे भी नई जान आ गई। समाज की सच्ची हालतो को लेकर नाटक लिखे जाने लगे। शहरो और कस्बो की जनता भी धार्मिक नाटक के बजाय सामाजिक नाटक देखना अधिक पसद करने लगी। इस कारण सामाजिक नाटको की रचना को और बल मिला, और कई बहुत अच्छे सामाजिक नाटक लिखे गए। उनमे प्रवीण फूकन और शारदा बारदोलोई के नाटक सबसे अच्छे है। कुमुद बरुआ ने भी कई अच्छे नाटक लिखे है। सामाजिक नाटको के इस दौर मे कुछ ऐतिहासिक नाटक भी लिखे गए, जिनमे पियाली फूकन और मणिराम दीवान के नाटको को जनता ने सबसे ज्यादा पसद किया। उनके नाटक १९ वी सदी के वीरों की जीवन कथाओं के आधार पर लिखे गए।

सन् १९४२ के आदोलन और महायुद्ध से नाटकों को और नए विषय मिले। ज्योति प्रसाद अग्रवाल के ल[illegible]ता नामक नाटक मे किसी असमी गाँव की एक ऐसी लडकी की कहानी है जिसका पिता जापानी बमबारी का शिकार हो गया था। लड़की उसके बाद पुलिस के अत्याचार का मुकाबला करती है, और अत मे आजाद हिन्द फ़ौज मे भरती हो जाती है। नाटक का अत बहुत दर्दनाक है और उसमें चरित्रों का बहुत अच्छा निखार है।

इस दौर मे आलोचनाएँ भी बहुत लिखी गई है। लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ

ने मध्ययुग के साहित्य पर अच्छी आलोचना लिखी। कृष्णकान्त हंडीकी, डा० वाणीकान्त काकती और डिम्बेश्वर नियोग की आलोचनाओं ने नए लेखकों को रास्ता दिखाया। सूर्य कुमार भुयाँ और बेणुधर शर्मा ने इतिहास के विषयों पर निबंध लिखे। बेणुधर शर्मा के गद्य की भाषा बड़ी मुहावरेदार है। उन्होंने मणिराम दीवान की एक जीवनी लिखी है, जो ऊंचे दर्जे की है।

इधर समाचार पत्रों ने आसाम गद्य को एक नई धारा चलाई है। कुछ ऐसे निबंध भी लिखे गए है जिनमें व्याकरण के प्रश्न उठाए गए है। एक दो उपन्यास मनोविज्ञान का सहारा लेकर भी लिखे गए है। उनमें आदमी के मन की भीतरी खींचतान के चित्र है और मन के भेद को समझाने की कोशिश की गई है। शिक्षा के प्रचार के साथ साथ असमी साहित्य आज सभी दिशाओं मे तेजी से विकास कर रहा है।

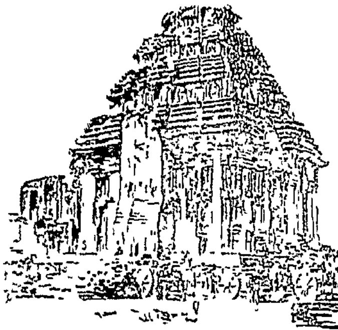
विश्व-साहित्य

(३)



उड़िया साहित्य

उडीसा और उसके आस पास की भाषा को उडिया भाषा कहते है। पुरानी उडिया पर प्राकृत भाषा का बहुत प्रभाव था। जब वह प्रभाव धीरे धीरे समाप्त हो गया तब उडिया एक स्वतंत्र भाषा बन गई। उड़िया

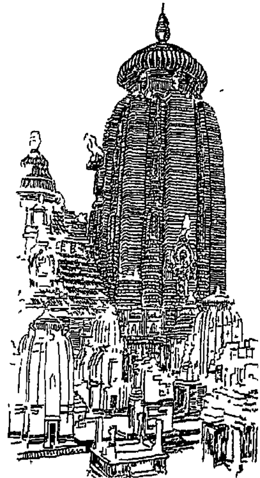


कोणार्क का मदिर

साहित्य के विकास को हम मोटे तौर पर तीन युगों मे बांट सकते है—प्राचीन युग, मध्य युग और वर्तमान युग।

सन् १४०० से सन् १६५० तक का समय प्राचीन युग माना जाता है। वह उड़िया जाति के इतिहास में बड़े उतार चढ़ाव का समय था। भुवनेश्वर, पुरी और कोणार्क के शानदार मदिर वन चुके थे। शकराचार्य, रामानुज और मध्वाचार्य जैसे दार्शनिक और सत वहाँ घूम घूमकर ज्ञान का प्रचार कर चुके थे। राजा लोग विद्वानो और कवियो के केवल सर परस्पत ही नही थे, उनका अपना अध्ययन और ज्ञान भी बहुत आगे बढ चुका था। उस जमाने मे लोग ज्ञान और विद्या प्राप्त करने के लिये संस्कृत साहित्य पढ़ते थे, और राज दरबारो के पडित लोग सस्कृत का दर्जा ऊँचा बनाए रखने की कोशिश मे लगे रहते थे।

भुवनेश्वर का मदिर



पर संस्कृत जनता की भाषा नही थी। उस भाषा मे आम लोगो के सुख, दुख और अनुभव की बातों का बयान नही होता था। लेकिन आम लोगों की बोली साहित्य की भाषा तब तक नही वनती जब तक समाज मे कोई बड़ी उथल पुथल नही होती, कोई वडा आदोलन नही होता। उथल पुथल

और आदोलनो के कारण जब लोगों का सामूहिक जीवन अस्त व्यस्त हो जाता है, तभी उनकी भावनाओ मे उभार आता है और वे भावनाएँ चारो ओर गूँज उठती है। जाहिर है कि आम लोगो की भावनाओ की गूंज आम लोगों की भाषा मे ही प्रगट हो सकती है।

इस प्रकार उड़िया वोली को भी साहित्य की भाषा वनने के लिए किसी बडी उथल पुथल का इतजार था। वह घड़ी आ भी गई। १५वी सदी के शुरू मे उडीसा के राजा कपिलेन्द्रदेव को अपने देश की रक्षा के लिए कई लड़ाइयाँ लडनी पडी। उडीसा मे गगवश का राज समाप्त होने पर बंगाल के सुलतान, वहमनी सुलतान और विजयनगर के राजा ने उडीसा पर अलग अलग कई हमले किए। उन्ही हमलो से उडीसा की रक्षा के लिए कपिलेन्द्रदेव (सन्१४३६-६६ ई०) ने युद्ध किए और उन पर विजय पाई। उन लडाइयो मे उडीसा की जनता वहुत वड़ी सख्या मे शामिल हुई।

उस उथल पुथल के जीवन मे बोलचाल की भाषा को अवसर मिला और उस भाषा मे जनता के सुख दुख की भावनाएँ प्रगट होने लगी। उसी समय उडिया भाषा की नीव पडी और कपिलेन्द्रदेव की शानदार लड़ाइयों के जोशीले वर्णन उडिया भाषा मे लिखे गए।

उसके बाद सन् १५१० मे श्री चैतन्य देव वैष्णव धर्म के प्रचार के लिए उड़ीसा आए। उस समय उडीसा मे राजा प्रताप रुद्र देव राज करते थे। उन्होने वैष्णव धर्म स्वीकार कर लिया और वे अपना सारा समय पूजा पाठ और भक्ति मे विताने लगे। इसका फल यह हुआ कि शासन कमजोर हो गया, पर उडिया साहित्य की वहुत उन्नति हुई। श्री चैतन्य के पाँच उड़िया शिष्यो ने अपनी भाषा मे अनेक काव्य और पुराण रचे। वे पाँचों

शिष्य 'पंच सखा' या पाँच मित्र के नाम से प्रसिद्ध है। उनके नाम है – बलरामदास, जगन्नाथ दास, अच्युतानन्द दास, यशवत दास और अनन्त दास।

उस युग के एक और बडे कवि सरलदास थे। उस युग की रचनाओ मे उनके महाभारत का सबसे अधिक महत्व है। वह उड़िया भाषा का सबसे पुराना और सबसे बढिया महाकाव्य है, जो १५ वी सदी के शुरू मे लिखा गया। सरलदास का उड़िया भाषा मे वही स्थान है जो अग्रेजी साहित्य मे चासर का है। उनका महाभारत सस्कृत के महाभारत का केवल अनुवाद ही नही है, उसमे बडी चतुराई से १४ वी सदी के उडीसा और वहाॅ के निवासियों की तस्वीर भी खीची गई है। उसमे बड़ी सचाई के साथ उडिया लोगों के रहन सहन, दुख सुख और आचार विचार का वर्णन किया गया है।

उस युग के दूसरे महाकाव्य रामायण का भी बहुत ऊँचा स्थान है। उस लोकप्रिय महाकाव्य के लेखक बलरामदास थे। वे पचसखाओं मे सबसे बडे थे। उडिया रामायण वाल्मीकि रामायण का अनुवाद नही है। वह बलरामदास की मौलिक रचना है। ठीक वैसे ही जैसे हिन्दी की रामायण गोस्वामी तुलसी दास का मौलिक महाकाव्य है। उडिया रामायण १६ वी सदी के शुरू मे लिखी गई। वह जिस छद मे लिखी गई है उसे दडी छद कहते है। इसीलिए उसे आम तौर से दडी रामायण भी कहते है।

वाल्मीकि रामायण और दडी रामायण मे बहुत बडा अन्तर है। बलराम दास ने अपनी रामायण अधिकतर पुराणो की कथाओ के आधार पर लिखी है। इसके अलावा उन्होने उसमे उडिया रग भी खूब भरा है। जैसे, वाल्मीकि ने जहाॅ कैलाश पर्वत का वर्णन किया है वहाॅ बलरामदास ने उड़ीसा के 'कपिलास' पहाड़ का वर्णन किया है। उन्होने एक जगह यह भी

लिखा है कि रावण उडीसा के 'विराज क्षेत्र' नामक स्थान पर तपस्या करने के लिए आया था। उड़िया भाषा मे वाल्मीकि रामायण के लगभग आधे दर्जन अनुवाद मौजूद है, पर उडीसा की आम जनता मे दाण्डी रामायण का जो मान है वह और किसी का नही।

पचसखाओं मे सबसे प्रसिद्ध जगन्नाथदास थे। उन्होंने सस्कृत के श्रीमद्‌भागवत का उडिया मे अनुवाद किया है। पर वह शब्दानुवाद नहीं है। वह मूल भागवत के भावो का अनुवाद है। यही कारण है कि जगन्नाथदास के भागवत मे कथा की तरतीब बहुत कुछ अपनी है। उड़िया लोगो के विचारो और विश्वासो पर इस भागवत का बहुत कुछ प्रभाव पड़ा है। आज भी घर घर मे उसका पाठ आदर के साथ किया जाता है। उसकी भाषा मे सादगी और मोहकता है, छदो मे सगीत की रवानी है और वर्णन मे तस्वीर खीच देने की शक्ति है। इन विशेषताओ के कारण ही जगन्नाथदास का भागवत उडिया जनता का सबसे प्रिय ग्रथ है।

जगन्नाथ दास



उन दिनो उडिया भाषा मे धार्मिक महाकाव्यो के अलावा और भी कई तरह की रचनाएँ हुई। उनमे से कुछ खास ढग की कविताएँ बहुत लोकप्रिय हुई। जैसे, कोइली, चौतीसा, भजन, स्तुति, जणाण आदि। कोइली उन कविताओ

को कहते है जिनके हर पद के टेक मे कोयल को सुनाकर अपनी बात कही जाती है। चौतीसा मे चौतीस पद होते है और हर पद की पहली पक्ति क्रमश, एक एक व्यजन वर्ण से शुरू होती है। भजन, स्तुति और जणाण प्रार्थना के अलग अलग रूप है।

वह युग भक्ति का युग था और भक्ति के साहित्य की बाढ सी आ गई थी। किन्तु भक्ति की उस बाढ मे भी एक अच्छा प्रेम काव्य लिखा गया, जिसका नाम हारावती है। उसमे एक हलवाई की प्रेम कहानी का सुन्दर वर्णन किया गया है। उस युग मे मुख्य रूप से पद्य का विकास हुआ। पर इसका यह अर्थ नही है कि गद्य मे कुछ लिखा ही नही गया। गद्य मे भी साहित्य लिखा गया, पर उसका विकास उतनी तेजी से नही हुआ जितनी तेजी से पद्य साहित्य का हुआ। सुन्दर गद्य में लिखी हुई उस युग की पुस्तको मे मादलापाजि, ब्रह्माण्ड भूगोल के कुछ भाग, तुलामिणा और रुद्र-सुधानिधि मुख्य है।

मादलापाजि मे जगन्नाथ जी के मदिर और उडीसा के राजाओ के विवरण लिखे गए है। ब्रह्माण्ड भूगोल मे कृष्ण और अर्जुन के सवाद के रूप मे कवि ने बताया है कि योग और भक्ति मे कोई भेद नही है। तुलामिणा मे शिव और पार्वती की बातचीत द्वारा यह समझाया गया है कि ससार कैसे बना और धर्म क्या है। रुद्र सुधानिधि गद्य मे है। पर उस गद्य मे पद्य की सी लय है। उसमें योग साधना समझाकर शिव पार्वती की महिमा गाई गई है।

सन् १६५० और १८५० के बीच का समय उड़िया साहित्य का मध्य युग माना जाता है। उस युग मे भक्ति और धर्म की कविताओ के बदले प्रेम और शृङ्गार की कविताएँ अधिक लिखी गई।

उपेन्द्र भज उस युग के सबसे बड़े कवि थे। इसलिए अक्सर उस युग को भज-युग भी कहा जाता है। १५६८ ई० मे उडीसा पर मुसलमान बादशाहो का अधिकार हो गया। पहले जो सरदार सामन्त लोग उडिया राज की रक्षा के लिए युद्ध करने मे लगे रहते थे, वे अब शातिपूर्ण जीवन


उपेन्द्र भज

विताने लगे। धीरे धीरे वे साहित्य और कला मे दिलचस्पी लेने लगे और उन्होने उडिया साहित्य मे वही सुन्दरता पैदा करने की कोशिश की जो सस्कृत साहित्य मे है।

उस युग के कवियो का मुख्य उद्देश्य शब्दो के प्रयोग मे चमत्कार पैदा करना था। उपेन्द्र भज के अलावा उस युग के दूसरे बडे कवि दीनकृष्ण दास, अभिमन्यु, सामत-सिहार, व्रजनाथ बड़जेना, कवि-सूर्य बलदेव रथ, यदुमणि



महापात्र, गोपाल कृष्ण पट्टनायक, और बनमाली पट्टनायक आदि थे। इनमें से अन्तिम तीन कवि अपनी मीठी और संगीतमय कविताओं के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं।

सन् १७०० से १७२५ ई० तक जितना कुछ भी साहित्य लिखा गया उनमें उपेन्द्र भज का लिखा वैदेही-विलास नाम का काव्य सबसे महान् है, और उसका सभी तरह के पढ़नेवालों में मान है। इस मोटी पुस्तक में हजारों पद हैं, जिनकी हर लाइन 'व' अक्षर से शुरू होती है। बाद के कवियों ने भी उस ढंग की नकल की और कुछ लोग आज भी करते हैं। पर उस तरह की रचना करने में जो सफलता भज को मिली वह और किसी को न मिल सकी।

पुराने युग में धार्मिक कथाओं के आधार पर भक्ति काव्य लिखे जाते थे, और ऐसा समझा जाने लगा था कि भक्ति को छोड़कर दूसरे किसी विषय पर अच्छे काव्य लिखे ही नहीं जा सकते। पर उपेन्द्र भज ने ऐसे महान् काव्य लिखे, जिनमें धर्म और भक्ति की बातें बिल्कुल नहीं थी। इस तरह भज ने साहित्य को धर्म से अलग करके बड़ा काम किया।

उड़िया साहित्य का मध्य युग लगभग २०० साल तक रहा। उस युग में काव्य के अलावा दूसरे तरह का साहित्य भी रचा गया। उपेन्द्र भज ने ही उड़िया भाषा का एक कोश बनाया, जो संस्कृत के 'अमरकोश' के समान है। उस युग की दूसरी प्रसिद्ध रचना 'सम्राट् रंग' है, जो एक अनोखा वीर काव्य है। उसमें धेनकानल के राजा और मराठों के युद्ध की कहानी का वर्णन है। उस वर्णन का ढंग ऐसा है कि पढ़नेवाले को लगता है जैसे वह अपने सामने युद्ध होता हुआ देख रहा है।

सन् १८५० के बाद का समय उडिया साहित्य का वर्तमान युग कहलाता है। तब तक उडीसा पर अग्रेजो का अधिकार जम चुका था। अग्रेजी हुकूमत मे ईसाई पादरियो ने उडीसा की जनता की शिक्षा के लिए बहुत काम किया। अग्रेजी स्कूल कालिज कायम हुए और लोगो का युरोप के साहित्य और सस्कृति से परिचय हुआ। फल यह हुआ कि नई पीढ़ी के पढे लिखे लोग उडिया और अग्रेजी साहित्य की अच्छी अच्छी बातो को लेकर उडिया साहित्य को एक नया रूप देने लगे। अग्रेजी का जादू कुछ ऐसा चल गया कि नई पीढी के लिए सस्कृत साहित्य भूली बिसरी बात हो गई। पर साथ ही उडिया लेखको पर बगला साहित्य के शानदार विकास का असर पडा। उनमे साहित्य की नई परख पैदा हुई। उन्होने नए नए ढग के गीत, लेख आदि लिखे। देशो के दुखी और पीड़ित लोगो के साथ भी उन्होने सहानुभूति प्रगट की। यही नही दूसरे देशो मे जाकर भारत के लोगो ने वहाँ के लोगो के दुख दर्द मे हिस्सा बॅटाया और लौटकर वहाँ का हाल अपने देश की जनता को सुनाया। इग्लैड से पढकर लौटनेवाले भारतीय विद्यार्थी नए नए विचार लेकर आए, क्योकि वे वहाँ सभी देशो के विद्यार्थियो से मिलते जुलते थे। उन सब भावनाओ, तजरबो और विचारो का उडिया के साहित्य पर बहुत असर पडा। आगे चलकर सन् १९३६ मे उडीसा का अलग राज्य बना और सन् १९४३ मे उत्कल विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। फल यह हुआ कि साहित्य मे और भी नई जागृति पैदा हुई। कई अच्छे और नए लेखक, कवि और उपन्यासकार सामने आए।

नए युग के सबसे बडे कवि राधेनाथ राय (सन् १८४८-१९०८) माने जाते है। वे कई भाषाओ के जानकार और बडी सूझ बूझ के आदमी थे।

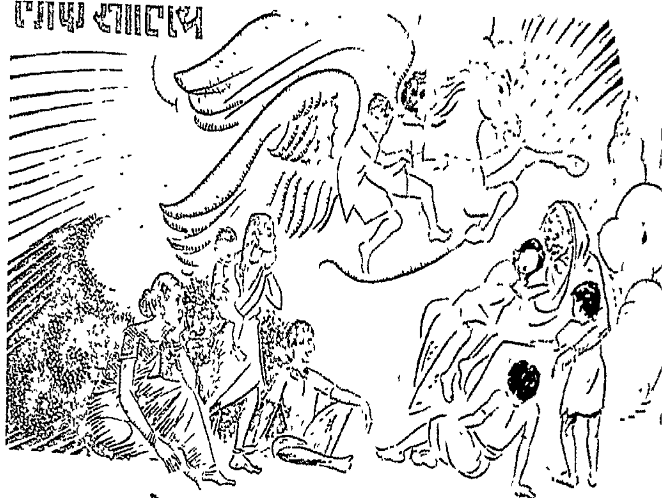


उन्होने उड़िया के अलावा सस्कृत, यूनानी और अग्रेजी साहित्य भी अच्छी तरह पढा था। उनके लिखे चिलिका और महायात्रा नामक काव्य उडिया साहित्य की सबसे अच्छी रचनाओ मे गिने जाते है। भाव, भाषा और लिखने के ढग के लिहाज से वे अनूठे काव्य है। उस समय के दूसरे बडे कवि मधुसूदन राव, गगाधर मेहर, नन्दकिशोर वल, चितामणि महथी आदि थे।

२० वी सदी के शुरू के दस पन्द्रह साल बीतने पर उडिया साहित्य मे कवियो का एक खास दल पैदा हुआ। वे 'सत्यवादी' कवि के नाम से प्रसिद्ध हुए। पुरी के निकट सत्यवादी नाम की जगह है। वहाँ एक आश्रम था जहाँ शिक्षा भी दी जाती थी। वही आश्रम और पाठशाला सत्यवादी कवियो का केद्र था। गोप बन्धु दास उन कवियो के अगुआ थे। उन कवियो की रचनाओं मे आशा का राग है, देश के लिए मर मिटने की साध है और अपने आप पर अटल भरोसा रखने की दृढ़ता है।

कटक भी साहित्य का एक केन्द्र था। वहाँ अग्रेजी और बगला साहित्य के प्रभाव मे कई युवकों ने कविताएँ और नाटक लिखना आरभ किया। उनकी रचनाओं की भाषा बड़ी सुन्दर है। उनके आदर्शवाद और प्रेम के गीत अच्छे और ऊँचे दर्जे के है।

गद्य साहित्य का आरभ १९ वी सदी के अतिम ५० बरसो मे हुआ। उड़िया गद्य लेखको मे फकीर मोहन सेनापति की जोड का और कोई लेखक नही हुआ। उनकी मामू और छमन अथगुण्ठा नाम की गद्य कथाओ मे उस समय के उडीसा की दशा के जीते जागते चित्र मिलते है। फकीर मोहन सेनापति ने पिछली सदियो की सच्ची और ऐतिहासिक घटनाओ के



लोक-साहित्य उन किस्सो, कहानियों, गीतों, नाटकों आदि को कहते हैं जिन्हे आम लोग न जाने किस युग से आपस में कहते और सुनते आए है। इधर कुछ दिनो से ऐसे साहित्य की चुनी हुई चीजे लिखी और छापी भी जाने लगी हैं। पर आम तौर से लोक-साहित्य लिखा नही जाता। लोक-साहित्य की किस कथा और किस गीत को किसने और कब बनाया यह कोई नही जानता। लोक-साहित्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढी को विरासत मे मिलता है, और इस प्रकार उसका सिलसिला चलता रहता है। लोक-कथाओ, गीतो, कहावतो, और पहेलियो में गाँव के लोगो की दशा, उनकी इच्छा और उनके भावो का सच्चा चित्र होता है। उनमे जनता के दुख दर्द और सोच विचार की झलक होती हैं। इसीलिए कहते है कि किसी देश की जनता को समझने के लिए उस देश के लोक-साहित्य को समझना जरूरी है।

(१)

बंगला लोक-साहित्य

बंगला लोक-साहित्य की बहुत सी शाखाएँ है। पहले एक शाखा थी, जो धर्म और व्रत नियम आदि के साथ जुडी थी। उस शाखा मे व्रत कथा तो थी ही, 'मनसा मगल', 'चडी मगल', 'धर्म मगल' आदि, मगलकाव्य और 'आउल-बाउल', 'मुरशेदी' 'मारफती' आदि अनोखे गाने भी उसके भाग बन गए थे। उन गानो मे से आज भी बहुत से प्रचलित है। पर असल मे वे गाने लोक-साहित्य नही, धर्म गीत है। लोक-साहित्य मे धर्म की बातो मे कही अधिक आम लोगो के जीवन की बाते होती है। यह सच है कि व्रत कथाओ, मगल काव्यो आदि मे भी जनता की भावनाएँ ही खास है, फिर भी उन्हे लोक-साहित्य मे नही गिना जा सकता।

बंगला लोक-साहित्य की खास चीज 'रूप कथा' है। रूप कथा ऐसी कथाओ को कहते है जो 'एक था राजा', 'उसकी दो रानियाँ थी' आदि इकरगे वाक्यो से शुरु होती है। उनमे अजीब अजीब बाते होती है। उनमे कही 'सुयोरानी' और 'दुयोरानी' की बाते है। कही 'राजकुँवर' और 'राजकुँवरि' का वर्णन है, तो कही 'तीन पातरि मैदान' और 'पछीराज घोडा' की कथाएँ है। और सबसे बढकर उनमे 'करजनी बरन राजकुँवरि' और उसके 'मेघबरन केश', और पाताल पुरी के भौरे मे जिनके प्राण बसते थे उन 'राक्षस-राक्षसी' की विचित्र कहानियाँ है।

दुखिया और गुलाम हुए लोग ही मन में जानते हैं।

बगला लोक-साहित्य में कथा कहानियों के अलावा 'गीतिका' (गाथा) और गीतों के भी भंडार हैं। कहीं 'सारी गान', 'जारी गान' आदि बखान के गीत मिलते हैं, कहीं ब्याह और विदाई के गाने पाए जाते हैं तो कहीं बच्चा होने पर आनद के सोहर, मगल और स्त्रियों के दूसरे गीत। इतना ही नहीं धीरे धीरे स्वराज्य आदोलनों के बहुत से गीत भी उनमें शामिल हो गए हैं। उनके अलावा लोरियाँ और छड़े भी बगला के लोक-साहित्य की खास चीजें हैं। छडों में भी स्त्रियों के गीत अलग हैं और नन्हे बच्चों के अलग। छड़ों के शब्द अर्थहीन होते हैं। उनमें केवल सुर ही सुर होता है। पर सुर और शब्द के मेल से जो चीज बनती है, वह एक निराला काव्य होता है। बगला लोक-साहित्य में 'धांधा' (मुकरियों) और पहेलियों की भी एक विचित्र दुनिया है। इन सारी चीजों का आज भी चलन है।

बगला लोक-साहित्य पर विद्वानों ने तरह तरह से विचार किए हैं।

उन्होंने बड़े यत्न और मेहनत से उन्हे जमा भी किया है। लाल विहारी दे की अंग्रेजी मे संग्रह की गई 'वगला लोक कथा', दक्षिणारंजन मित्र मजुमदार की 'दादी की झोली', और 'दादा की झोली', उपेन्द्र राय चौधुरी की 'गौरैया की किताब' और छडो की कई किताबे बगला के उच्च साहित्य मे गिनी जाती है।

बंगला लोक-कथा

दुखिया सुखिया की कहानी

एक था तॉती। उसके दो बीवियाँ थी। दोनो बीवियो से उसके एक एक बेटी थी। बड़ी बीवी की बेटी का नाम था सुखिया और छोटी की बिटिया का नाम था दुखिया। तॉती बडी बीवी को बहुत ही मानता था। हर घडी 'कहाँ उठाऊँ, कहॉ बिठाऊँ' लगाए रहता था। काम न धधा, मॉ बेटी बैठी चारपाई तोडती रहती थी। घर गिरस्ती का का सारा बोझ दुखिया की मॉ और दुखिया के सिर था। वे दिन रात चूल्हा-चक्की, झाड़-बहारू मे लगी रहती थी। समय बचता तो बेचारी चर्खा कातती और सूत के गोले बनाती। फिर भी उन्हे दिन रात गाली और फटकार मिलती। और दिन डूबे मिलता मुट्ठी भर भात।

लेकिन सब दिन एक से नही जाते। एक दिन तॉती अचानक चल बसा। एक ओर रोना पीटना मचा था और दूसरी ओर बड़ी बीवी झपाक से उठी और यह जा, वह जा। देखते देखते तॉती के सारे रुपए पैसे वह न जाने कहॉ छिपा आई। उसके बाद उसने दुखिया और उसकी दुखियारी मॉ को मार पीट कर अलग कर दिया।

फिर तो सुखिया और उसकी माँ के सुख की कुछ न पूछो। उनकी पाँचो घी मे थी। धन-दौलत का कोई पार न था। हाट बाजार जाती तो बडी रोहू मछली की मूँडी ही छाँटकर लाती, और लाती हाट भर मे सबसे अच्छी कचवतिया लोकी। घर लौटकर दुखिया और उसकी माँ को दिखा दिखा कर पकाती। वे सोरहो व्यजन बना बना कर खाती। दुखिया माँ बेटी के भाग मे था बासी भात और नमक। वह भी कभी जुड़ता, कभी नही। उनकी विपदा को देख देखकर सुखिया की माँ निहाल हो जाती और ठहाके मार कर हँसती। उधर दुखिया माँ बेटी दिन रात सूत कातती और कपडे बुनती। हाडतोड खटनी के बाद किसी दिन एक अगोछा तैयार हो जाता, तो किसी दिन गज भर कोई और कपडा। जो वह बिक जाता तो माँ बेटी के मुँह मे दो कौर अन्न पड जाता। नही बिकता तो सूखी एकादशी।

एक दिन सुबह-सवेरे आँख खोलते ही दुखिया की माँ क्या देखती है कि हाय राम बटाढार! चूहो ने सारा सूत काट काट कर सत्यनास कर दिया था। जो कुछ रुई थी, वह भी एक दम सील गई थी। अब क्या हो? दुखिया की माँ भोर की कच्ची धूप मे रुई की पूनियाँ सूखने को डालकर घाट पर कपडे धोने चली गई। दुखिया बैठी पथार की रखवाली करती रही।

कहा है कि 'राजा नल पर बिपत पड़ी तो भुनी पोठिया जल मे पडी।' माँ बेटियो को बस पूनियो का ही सहारा रह गया था। सो, न जाने कहाँ से झपटता एक झकोरा आया और पूनियो को भी उडा ले गया। दुखिया बहुत कूदी फाँदी पर हवा मे ऊँची उडती पूनियो तक पहुँच न पाई। हारकर बैठ गई और फफक कर रोने लगी। उसी समय हवा उसके कान मे फुसफुसाने लगी, "दुखिया,

दुखिया ऊँची उडती पूनियों तक पहुँच न पाई







दुखिया गाय को घास डाल रही है।

री दुखिया ! रोती क्यों है ? आ, मेरे सग आ। रुई मिलेगी, रुई ! नरम नरम रुई !" दुखिया ने आँसू पोछ डाले और भागती, दौडती, गिरती, पडती हवा के पीछे चल पड़ी।

बहुत दूर जाने पर राह मे एक गाय मिली। गाय ने पुकारा, "दुखिया, री दुखिया ! भागी भागी कहाँ जा रही है ? मेरी गोठ तो साफ किए जा।" अभी दुखिया के आँसू भी पूरी तरह सूखे न थे। फिर भी उसने बडे जतन से गोठ को झाड पोछकर साफ किया और थोडी सी घास लाकर गाय के आगे रख दी और हवा के पीछे पीछे हो ली।

कुछ दूर जाने पर केले का एक पेड मिला। केले का पेड बोला, "दुखिया, री दुखिया ! चारो ओर से खर पात ने मुझे जकड लिया है। इनको नोचती जा, बिटिया ! इन्हे जरा उखाड पछाड के फेकती जा।" दुखिया रुक गई। उसने केले मे उलझी बेलो को बडे जतन से सुलझाया। और घास फूस उखाडकर फेक दिया। उसके बाद वह फिर दौड चली हवा की राह पर।

कुछ दूर और जाने पर उसके आँचल को एक सिहोडे के पेड़ ने पकड लिया। वह आँचल खीचता हुआ बोला, "दुखिया, री दुखिया ! तू उधर कहाँ भागी जा रही है ? तनिक मेरी जड तो देख। देख मेरी नगी जड को कितने झाड़ झखाड घेरे हुए है। इधर कोई राही भी नही आता। क्या तू मुझ पर दया करके मेरी जड़वट को झाड़ झूड न देगी ?"

दुखिया आँख फाड़ फाड़ कर कुछ खोजती हुई सी आगे और ढेग ढेग आगे बढती गई। एक से एक सुन्दर सजे सजाए, फिट फाट दालान और झकाझक चमकते आँगन को पार करती गई। एक जगह देखती क्या है कि कोई निपट थुडथुडी बुढ़िया बैठी सूत कात रही है। इतनी बूढ़ी, इतनी बूढ़ी कि न चल सके, न फिर सके। उसके सफेद बाल सन की लूटी की तरह हो चुके थे। वह धपाधप उजली साडी पहने सूत काते जा रही थी। फिर सूत भी इतना कि उसकी लच्छियो का न कोई ओर न छोर। इतना ही नही, एक ओर औओ औओ पूनियाँ बन रही थी, तो दूसरी ओर थान के थान कपडे और थाक के थाक साडी जोडे बनते जा रहे थे। दुखिया की आँखे फटी की फटी रह गई।

हवा बोली, "दुखिया, री दुखिया ! यह जो बैठी बैठी चर्खा कात

रही है. वह चाँद की बुढिया अम्मा है। जा जा, इसके पास चली जा और प्रणाम करके बैठ जा। नरम नरम खाँटी रुई चाहती है न तू ? इसी से माँग। तू जितनी चाहेगी, उतनी मिलेगी। यही देगी, यही।"

दुखिया ठिठकती थमकती दबे पाँव डग डग आगे बढी। उसने पास जाकर बुढिया के पैरों को छूकर प्रणाम किया और कहा, "दादी माँ, ओ दादी माँ, हमारी रुई को हवा उडा लाई है। अब हम कैसे क्या करे ? कहाँ से लाएँ ? कहाँ जाएँ ? माँ घर लौटने पर बकझक करेगी। डाँट डपट, गाली फटकार की नौबत आएगी। इसलिए कहती हूँ कि जो रुई हवा उडा लाई है वह मुझे दे दो। दे दो, दादी माँ। सुनती हो कि नही ?"

बादलो की हर तह पर और रुई की पूनी पूनी पर चाँद की चाँदनी पड रही थी। बुढिया ने आँखे उठाकर देखा। देखा कि दुखिया की आँखो मे भय खेल रहा था, और उनमे मोह ममता झलक रही थी। पर उसके चेहरे से झर रही थी हँसी। वह हँसी एक बच्चे की हँसी थी, प्रकृति की हँसी थी, भगवान की हँसी थी। दुखिया उसे भा गई। उसने ललककर दुखिया की ठोढी उठाई और चूम ली। बोली, "छठी माई, छठी माई, माय की बाछरी की अलाय बलाय दूर हो, आपद विपद दूर हो, जियो बिटिया जियो। बहुत अच्छा किया जो तू आ गई। अच्छा, अब जरा उस घर मे तो चली जा रानी ? देखूँ तो कैसे जाती है ? जा के तेल फुलेल लगा ले, कपडे ले ले, एक अँगोछा ले ले, और चली जा घाट पर। जाके झटपट नहा धो डाल। हाय, मुँह सूख के कैसा सुखौटा हो गया है मेरी बाछरी का ! नहा धो के आ और कुछ खा पी ले। फिर रुई लेके घर जाना।"

दुखिया उस घर मे गई। देखा कपडो के ढेर लगे है। फिर दूसरे

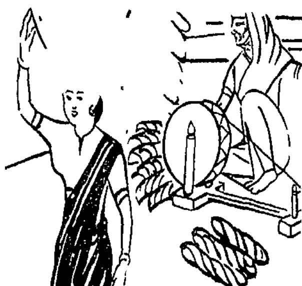
घर मे गई देखा, न जाने कितने तरह के उवटन, तेल-फुलेल, गध-मसाले, खली-खलेड़ी, साज-सिगार की चीजे जहाँ तहाँ बिखरी पडी है। दुखिया ने चुन चुनाव कुछ भी नही किया सीधे जाकर एक जैसा तैसा कपडा ले लिया, कधे पर एक अँगोछा डाल लिया और थोडा सा तेल सिर से छुआ लिया। वह भी राम जाने सिर से छुआ कि नही। रत्ती भर खली सज्जी ले ली। फिर पोखरी पर गई और हाथ मुँह मे खली सज्जी मलकर पानी मे उतरी। पहली डुवकी लगाई। पानी से उभरी कि हाय मैया! अग अग से रूप चूने लगा। पोखरी का घाट उस रूप के उजाले से भर गया। दुखिया को मन ही मन वडा अचरज हुआ। उसने जल्दी से एक डुवकी और लगा ली। इस वार जो उभरी तो, अग अग सोने चाँदी से लदा हुआ! सात राजाओ की दौलत से वने हीरे, मोती, लाल, जवाहर के गहने! दुखिया नहाकर निकली। सहमी सहमी, घवराई घवराई सी, डरती डरती वह रसोई की ओर वढी।

दुखियारी माँ की दुखियारी वेटी को इतना उतना से क्या वास्ता? पकवान, मिठाई, खीर या मलाई खाना वेचारी क्या जाने? सो, दुवकी दुवकी रसोई के एक कोने मे दीवार से सट कर वैठ गई और मुट्ठी भर वासी भात लेकर इमली, मिर्च, नोन के साथ खाने लगी। खा पीकर वुढिया के पास रुई माँगने गई। वुढिया वोली, "आ, री आ, ओ मेरी सोना-मणि नातिन। रुई चाहिए न तुझे? जा, उस घर मे रुई की पिटारियाँ पडी है। जितनी जी चाहे, उठा ले जा। जा मैया की बाछरी, रुई लेके अपनी मैया के पास जा।"

पासवाले घर मे जाकर उसने देखा कि वहाँ रुई की पिटारियाँ ही पिटारियाँ भरी थी। छोटी, बड़ी, मझोली। हर किस्म की पिटारियाँ सजाकर रखी हुई थी। उनमे से एक उठाकर दुखिया बुढिया के पास आई।



चाँद की बुढिया माँ ने दुखिया को लाडा, दुलारा, चूमा और असीस दिए। फिर उसे रुई देकर विदा किया। दुखिया के पाँव जैसे धरती पर नही पड़ रहे थे।


रुई की पिटारी लेकर लौटती दुखिया

लौटती वेर राह मे उसी घोडे ने पुकारा, "अरे, यह दुखिया तो नही ? किधर चली री ? अरे, तेरे लिए ही यह पछीराज बछेडा रख छोडा था। इसे तो लेती जा।" और नन्हा सा पछीराज बछेडा दुखिया के सग चल पडा।

दुखिया सिहोडे के पेड के पास से निकली तो वह बोल पडा, "कौन जा रही है री ? दुखिया तो नही है ? अरी, तेरे लिए मोहरो की गगरी रखी है, इसे लेती जा।" दुखिया के लिए ना कहना कठिन हो गया। उसने मोहरो की गगरी पछीराज की पीठ पर लाद ली।

केले के पास से निकली तो वह भी उसे खाली हाथ जाने देने को तैयार नही था। वह उसे सुनहले रग के बडे बडे और ताजे केलो की घौद थमाकर ही माना। सबके बाद मिली गैया। उसने भी दुखिया के सग एक कपिला बछिया बरजोरी लगा दी।

आगे बढने पर दुखिया को यह चिता हुई कि माँ उसकी बाट जोह रही होगी और उसकी आँखो से धारे बह रही होगी। इसी चिता मे वह भागती चली गई और पहुँचते ही झपटकर माँ की गोद मे जा गिरी। माँ बेटी दोनो ही के हिये जुड़ा गए।

दुखिया की माँ बिचारी बहुत नेक थी। वह सारी बाते सुनकर बहुत खुश हुई। वह दुख के पहाड जैसे जाने कितने दिन काटकर सुख की हँसी

हँसती हुई सुखिया के घर गई। साथ साथ दुखिया भी गई, क्योंकि वह सुखिया को अपने माल असबाब में से हिस्सा देना चाहती थी। लेकिन जब वह सुखिया को हिस्सा देने लगी तो उसने मुँह मोड़ लिया। उसकी माँ दुखिया की माँ को गंदी गंदी गालियाँ देकर बोली, "इतना तेज क्या दिखाती हो? इतना घमंड किस बात पर? न जाने कहाँ से भीख माँग कर लाई है। पता नहीं माँग कर लाई है या चोरी का धन है? बाँटने की जरूरत कैसे आ पड़ी, री दुखिया की माँ? हमारी सुखिया को कमी किस चीज की है भला?" दुखिया की माँ सन्न रह गई। उसे कुछ सूझा ही नहीं कि क्या कहे, क्या न कहे। फिर चुपचाप लौट पड़ी। उसके बाद सुखिया की माँ झमक कर गरज उठी, "कहाँ गई री सुखिया, मुँहजली कहीं की। कल जो तू चाँद की उस बुड्ढी माँ के पके सन जैसे बाल मुट्ठी मुट्ठी न उखाड़ लाई तो इस घर में बस तू होगी या मैं। बस समझ ले कि चाहे तेरी जिंदगी पूरी हो जायगी या मेरी। उस कलमुँही बुढ़िया को लच्छमी उँड़ेलने को और कोई जगह ही न मिली?"

उसी रात को दुखिया की पिटारी में से एक राजकुमार निकला। माथे पर मुकुट, गले में रतनहार और हाथ में तलवार। उसने कहा, "मैं दुखिया से ब्याह करूँगा।" दुखिया की माँ के आँसुओं में हँसी के फूल खिल उठे और उसने राजकुमार के हाथों में अपनी बेटी सौंप दी। माटी की कुटिया सोने की दौलत से भर गई। दुखिया की माँ के काँपते हिये में दुखिया के बापू की याद आई। आह, अगर आज वे होते। जब जब उसके मुँह पर हँसी आती, तब तब किसी की याद उसे खूब रुलाती।

उसी रात राजकुमार निकला



दूसरे दिन अभी पौ भी नहीं फटी थी कि सुखिया की माँ ने अपनी गठरी खोलकर डगरे मे बिखेर दी। रुई पसर गई और सुखिया रखवाली पर बिठाल दी गई। सुखिया की माँ बिना जरूरत जगदिखावे को घाट की ओर कपड़े धोने चल पड़ी। घड़ी पहर बीते, पहले दिन की तरह ही फिर बयार सनकी। सुखिया फूलकर कुप्पा हो गई। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। अंधा क्या चाहे दो आँखे। रुई अच्छी तरह उड़ भी न पाई थी कि वह बिन बुलाए ही हवा के पीछे लग गई। सुखिया को भी रास्ते मे वह गाय मिली। उसने उसे भी उसी तरह पुकारा। पर सुखिया भला काहे को सुनने लगी? उसने मुड़कर देखा तक नही। आगे बढने पर जिन सबने दुखिया को पुकारा था, उन्होने बारी बारी से सुखिया को भी पुकारा। पर बेचारे अपना सा मुँह लेकर रह गए। सुखिया ने किसी की तरफ घूमकर भी नहीं देखा। उल्टे जली कटी सुनाती गई, "हाँ, रे हाँ! मै ही बुद्धू मिली हूँ क्या? बेछदाम की गुलामी कराना चाहते है। हुँ, मै क्या किसी की टहलुई हूँ? ऐसी दासी कोई और होगी।"

हवा के पीछे लगी लगी सुखिया चाँद के देश मे जा पहुँची। बादलो को रुई की तरह पैरों से रौंदती मसलती वह फाँद फूँदकर सीधे चाँद की बुढ़िया माँ के दरवाजे पर जाकर ही रुकी। बुढिया ने झटपट सूत चर्खे को समेट सुमूट कर एक ओर किया और बोली, "कौन री? तू किसकी बिटिया है री बाछरी।" मुँह बिचकाती हुई सुखिया ने हाथ मटकाकर जवाब दिया, "दुखिया को भूल गई क्या तू? मै दुखिया की बहन सुखिया हूँ। पर छोड़ इस बात को, पहले यह तो बता री बुड्ढी, कि तेरी अक्किल क्या मारी गई थी जो उसे इत्ता सारा दे डाला? अच्छा बोल, अब मुझे क्या देती है?

जो कुछ देना हो झटपट दे । उठ, निकाल। नहीं तो मार मार कर निकाल दूँगी.
बुढ़िया कहती थी।' सुखिया यह सब सुनकर पत्थर हो गई। बस टुकुर टुकुर ताकती की ताकती ही रह गई। जैसे तैसे उसने जवाब दिया, 'अच्छा, री अच्छा। तुझे भी देती हूं। लेकिन पहले नहा धो तो लेने दे ना जरा मैं।''

बुढ़िया पूरी बात कह भी न पाई थी कि सुखिया उठ पड़ी। घर में घुस गई और 'यह कहां है, वह कहां है' करती रही। फिर छांट छांट मन चुनाव करके उसने अपने लिए पाट-पटम्बर काढ़े। एक अच्छा अंगोछा लिया, डिब्बे भर भर गंध मसाले, कटोरी भर भर तेल, और साज सिंगार की एक पूरी पिटारी लेकर घसीटती घिसटती पोखरी पर नहाने पहुंची।

कहते हैं लालसा का अंत नहीं। सुखिया का भी यही हुआ। तेल फुलेल के भुक्खड़ की तरह उसने पांच सात बार मली मलैदी, उबटन सुगंधन घिस घिस कर सारे बदन को रगड़ डाला। फिर भी साध नहीं पुजी। पानी की आरसी में बार बार मुंह देखने के बाद वह नहाने उतरी। डुबकी लगाई, पानी से उभरी, फिर पानी में अपना रूप निहारा। रूप बदल चुका था। वह अपरूप सुन्दरी बन गई थी। देख देखकर जी नहीं भरता। सात समुंदर के रतन-जवाहर के लोभ में उसने फिर डुबकी लगाई। निकली तो अंग अंग पर गहने लदे थे। सबको हिला डुलाकर, झमका झमका कर, देखा। साध फिर भी बनी रही। लालसा फिर भी नहीं मिटी। उसने फिर डुबकी लगाई। पर तीसरी डुबकी के बाद 'और मिले' की आस मन की मन में ही रह गई। पानी से उभरी तो अपने को पहचानने में धोखा होने लगा। गले का सुर भयावना हो गया। चेहरे पर बड़े बड़े चकत्ते। शरीर भर में खाज के फफोले। इतने फफोले कि सुखिया सभी

तीसरी डुबकी के बाद



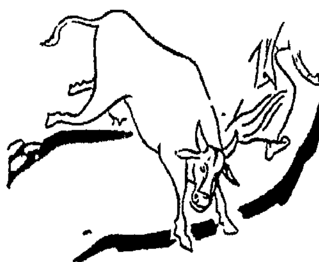


को खुजला भी नही पाती थी। सिर के बाल सन की लुडी की तरह सफेद। नाखून, जैसे बघनखे। वालो पर उँगली पडी नही कि गुच्छे के गुच्छे साफ़। रोस के मारे सुखिया एडी से चोटी तक सुलग उठी। बस चले तो बुढिया को कच्चा ही चबा जाए। सो लौटकर वह बुढिया को जली कटी सुनाने लगी। जितनी भी गालियाँ उसे याद थीं, सभी दे डाली।

चाँद की बुढिया माँ माया ममता के सुर मे बोली, "और होता भी क्या ? तीन डुबकियाँ लगाने पर यही तो होता है। जा बाछरी जा, कुछ खा पीके जुडा ले, ठढी हो ले।" बुढिया को ठेल ठालकर सुखिया पास के घर मे चली गई। वहाँ खाने पीने की भाँति भाँति की चीजे, तर-तरकारी, फल-फलाहारी सँजो कर सजाई रखी थी। सुखिया कभी यह चखती तो कभी वह। कुतरती, जुठारती, भकोसती, जितना खाती नही उससे अधिक खराव करती। जहाँ तक खाया गया सुखिया ने ठूँस ठाँस कर खाया और खा पीकर बुढिया के पास पहुँची। उसे धमकाती हुई बोली, "रुई की पिटारी कहाँ है री ? देती है सीधे से कि नही ?" बुढिया ने इशारे से पिटारियोवाला घर दिखला दिया। सुखिया ने चुनकर खूब बडी, धमधूसर सी एक पिटारी उठाई और वुढिया को कोसती सरापती पिटारी लादकर वह घर को रवाना हुई।

रास्ते मे सुखिया को जो देखता वही डर के मारे भाग खडा होता। जाने पहचाने लोग भी दूर पहुँचकर ही दम लेते। सुखिया जिस रास्ते आई थीं, उसी रास्ते लौटी। घोडे ने कसकर उसके एक दुलत्ती जडी। सिहोडे ने अपनी एक डाल हरहराकर उस पर गिरा दी। केले ने धड़ाम से एक भारी घौद उसकी पीठ पर दे पटकी। और सबके वाद गैया साथ

साध कर सीग मारती हुइ सुखिया को दूर तक खदेड आई। सुखिया त्राहि त्राहि करती किसी तरह गिरती पडती अपने घर के करीब पहुँची। दरवाजे पर पहुँचते पहुँचते ऐसी ठोकर लगी कि सीधी मुँह के बल गिरी। सुखिया की माँ तो ऐसी डरी कि बस पूछो मत। काटो तो खून नही। सोचने लगी, "यह दँतफाड, ओखली जैसी मूँड वाली चुड़ैल कहाँ से आ मरी यहाँ ?" आखिर जब वह सुखिया को पहचान पाई तो पछाड़ खाकर गिर पडी और देहरी पर माथा धुनने लगी।



गैया साध साधकर सींग मारती हुई

थोडी देर बाद दोनो माँ बेटी सारी दुनिया को कोसती हुई वहाँ से उठी। वे पिटारी को घर के भीतर ले जाकर सहेजने लगी। सोचने लगी, शायद पिटारी मे ही 'मुश्किल आसान' का नुस्खा छिपा हो। कही पिटारी में से सुखिया का राजकुमार दूल्हा निकल आए तो घर मे उजियारी लौक उठेगी। फिर सुखिया का रूप पलटेगा और धन दौलत घर मे अटाये नही अटेगी।

सो रात हुई। दूल्हा भी निकला। लेकिन ऐसा निकला कि सुखिया चिल्ला उठी

मैया री मैया—
अग अग कनकती, माथे में झिनझिनी
अब न सहा जाय री, हाय री! हाय री!

सुखिया की माँ बाहर देहरी के पास ही बैठी थी। सुनकर पुचकारती हुई बोली, "पहन ले, पहन ले रानी बिटिया! गहने तो पहन ले।" सो, सुखिया ने अग अग पर गहने पहने। सुखिया की माँ ने सतोष की साँस ली।

वह देहरी से उठकर खाट पर गई और रातभर सुख के सपने दखती रही।

रात बीती। पौ फटी। दिन चढने लगा। पर सुखिया की नीद न खुली। सुखिया की माँ ने बहुत पुकारा, पुकारते पुकारते उसका गला बैठ गया। तब उसने गाँव से लोग बटोरे और उनसे किवाड तुडवा दिए। कमरे के भीतर जो देखा तो सन्न रह गई। लोग डरकर भाग खडे हुए। वहाँ सुखिया कहाँ? सारे कमरे मे हड्डियों के टुकड़े पड़े थे, और पड़ा था एक बहुत ही विशाल अजगर का केंचुल!

सुखिया की माँ हाय हाय करती और अपना माथा कूटती रह गई।

(२)

असमी लोक-साहित्य

असम के लोक-साहित्य मे कुछ भाव ऐसे है जो भारत भर के लोक-साहित्य में मिलेगे। भारत का किसान सादगी पसद करता है और सादा जीवन बिताता है। देहातो मे प्रकृति की छटा दिखाई देती है। गाँव के लोग आम तौर से मेहनती होते है। उन्हे अपने खेत खलिहान और धधे से प्रेम होता है। असम की ऐसी कुछ कहावतो मे हमे पूरे भारत के जीवन का चित्र दिखाई देता है। जैसे, भारत भर मे यह विचार प्रचलित है –

"राखे हरि मारे कौन
मारे हरि राखे कौन"



पिता उसके किसी काम की सराहना नही करता था। इससे लडका बहुत अनमना रहता था। बहुत दुखी होने पर एक दिन लड़के ने अपने पिता को जान से मार डालने का निश्चय किया। अपने इरादे को पूरा करने के लिए वह चाँदनी रात मे केले के एक पेड के नीचे लाठी लिए छिपकर खड़ा हो गया।

शाम को बूढे ने लडके को घर मे न देखकर अपनी पत्नी से पूछा, "कहाँ गया है, लडका ?"

बुढिया ने जवाब दिया, "क्या करोगे ? तुम्हे तो वह फूटी आँख भी नही सुहाता। आज क्या हो गया, जो उसे इस तरह पूछ रहे हो ?"

बूढा मुस्कराया और बोला, "अरी बुढिया ! चाँद मे दाग हो सकता है पर हमारे लडके मे नही। फिर भी जो मै लाड प्यार का दिखावा नही करता तो उसका कारण है। अगर मै उसे सराहने लगूँ तो वह फूलकर कुप्पा हो जायगा। फिर वह और भला बनने की कोशिश नही करेगा। अभिमान सदा बुरी राह पर ले जाता है। यही कारण है कि मै मुँह पर उसकी तारीफ़ नही करता। नही तो तुम्ही सोचो, मै और उसे प्यार न करूँ ?"

बूढे की बातो की भनक बेटे के कानो मे भी पड रही थी। पिता की बाते सुनकर वह तीर की तरह भीतर आया और पिता के पैरो पर गिरकर रोने लगा।

बूढा हक्का बक्का रह गया। उसने पूछा, "मेरे बेटे ! तुझे आखिर हो क्या गया है ?"

लडके ने पिता को पूरी कहानी कह सुनाई और क्षमा माँगी। बूढे ने बेटे को कलेजे से लगा लिया।

" वह पिता के पैरो पर गिरकर रोने लगा।"



तेतोन की चालाकी

एक दिन ठीक दुपहरी मे तेतोन किसी खेत मे से गुजर रहा था। एक किसान उस खेत को जोत रहा था। पर उसके बैल इतने बूढे थे कि डडे की मार खाकर भी वे मानो ऊँघते से चलते थे। बहुत दुखी और निराश होकर किसान झल्ला पड़ा, "बाघ खा जाए इन बैलो को ? ये मर भी तो नही जाते कि मुझे नई जोड़ी लाने का अवसर मिले।"

तेतोन ने पुकार कर पूछा, "क्या बात है भाई ?"

"अरे, मुसीबत है ! ये बूढे बैल टस से मस नही होते। मैने एक कोडी (बीस) रुपए जमा कर रखे है, लेकिन न ये मरते है न मुझे इतना समय मिलता है कि बैलो की नई जोडी मोल ले आऊँ।"

"भाई, तालाब का कीचड इन बैलो की पीठ पर लेप दो, वे कुछ तेज चलने लगेंगे।" तेतोन ने सलाह दी।

किसान ने वैसा ही किया। कीचड की ठंढ से बैलो को बहुत सुख मिला, उनके कदम कुछ तेज हो गए। उसके बाद तेतोन ने बहुत प्यासे

(प्यारी दोलवाई मुझे एक सुई दे दो। सुई किसलिए? एक थैला सीने के लिए। थैला किसलिए? रुपए भरने के लिए। रुपए किसलिए? हाथी खरीदने के लिए। हाथी किसलिए? सवारी करने के लिए। सवारी करके क्या होगा? हाथी पर सवार होकर बड़ा आदमी बन जाऊंगा। बड़ा आदमी क्या करता है? वह आप को ढुम-ढुम ढोल बजाता है।)

आप को ढोल बजाने से, 'नामघर' (प्रार्थनाभवन) मे रखे ढोल की ओर इशारा है।

ससुराल की छेड़छाड़

लोण आमलखी खाला ऐ कालीया लोण आमलखी खाला।
कोनोवा जन्मत तपस्या साधिला सीता हेन सुन्दरी पाला ॥'

(आँवला और नमक खाता है, ओ स्वार्थी, तू आँवला और नमक खाता है! हमारी सीता जैसी सुंदरी को पाने के लिए तूने जरूर पिछले जन्म मे तपस्या की होगी, नहीं तो कहां तू और कहां हमारी सीता?)

"पानीर जिकमिक पानीरे परुआ, फुलर जिकमिक पाहि।
सेनाई जिकमिक तेजरे वलते, मुखट ऐ तुगुचे हाँहि ॥"

(पानी के कीड़े पानी में चमकते हैं। पँखुड़ियाँ फूलों में चमकती हैं। मेरा प्रीतम अपने तेज से चमकता है। उसके चेहरे की मुसकराहट कभी गायब नहीं होती।)

लोक-साहित्य

(३)

उड़िया लोक-साहित्य

हर देश के लोक-साहित्य की तरह उड़िया लोक-साहित्य को भी मोटे तौर पर दो भागों मे बाँटा जा सकता है लोक-गीत और लोक कथा।

उडीसा की लोक-कथाएँ और देशों की लोक कथाओं की तरह ही सदियो से दादी नानी के मुँह से बच्चो को विरासत मे मिलती रही है। उनमे बढाना घटाना भी होता रहा है। इसीलिए एक ही कहानी अलग अलग जगह अलग अलग रूप मे मिलती है।

ये कहानियाँ आमतौर से मनगढत होती है। इनमे हँसी, मनोरजन और उपदेश कूट कूटकर भरे होते है। राजा और रानी, विदेश जानेवाला सौदागर, भूत प्रेत, देव दानव, परियाँ और चुडैल, पशु पक्षी, पेड़ पौधे आदि इन कथाओ के पात्र होते है। उडीसा की जनता धर्म की बातो मे अधिक दिलचस्पी रखती है। उसका पुराण चर्चा मे विश्वास है। इसलिए अक्सर कहानियो मे शिव पार्वती आ जाते है। कुछ कहानियाँ ऐतिहासिक भी है। उडीसा के इतिहास ने कभी अच्छे दिन भी देखे थे। वे दिन इन कथाओ मे अब तक सुरक्षित है। कोणार्क के सूर्य मदिर के बारे मे कई कथाएँ प्रचलित है। उड़िया वीरो की बहादुरी, दूर दूर के टापुओ तक उडिया सौदागरो की समुन्दरी यात्रा आदि का वर्णन भी बहुत सी कथाओ मे मिलता है। उनमे सच्चा इतिहास न हो, पर सच्चे इतिहास की यादगार जरूर है। मेलो, पर्वो और त्यौहारो मे धर्म सम्बन्धी कामो से अधिक लोकाचार होता है। उड़ीसा के लोक-साहित्य मे उनकी भी अच्छी झाँकी मिल जाती है। चारो धामो मे से एक जगन्नाथ धाम उडीसा मे ही है। उसके बारे मे भी लोक-कथाएँ मिलती है।

कहा जाता है कि उडीसा के सँपेरे गीत गा गाकर साँपो को वश मे कर लेते है। केल जाति की औरते नटो के करतब दिखाने के लिए प्रसिद्ध है। उनके गाने भी होते है। गाते समय वे लोग अपने को भूल जाती है।

वह कई दिन तक भटकता रहा। फिर उसने सौदागर के घर जाने की ठानी। वहाँ जाके उसने बडी धमाचौकडी मचाई। बहुत ऊधम मचाया। घर उजाड दिए, पेड पौधे उखाड डाले। आखिर सौदागर के नौकरो ने तग आकर उसे गुलेल से मार डाला। अब सोना रूपा मायके में ही रहने लगी। साथ में वह बदर बच्चा भी पलता रहा।

बहुत दिन बीत गए। सौदागर बहुत रुपए पैसे लगाकर उस बच्चे के के लिए दुल्हन ले आया। बडे धूमधाम से उसका व्याह किया। लेकिन बहू पर जब यह भेद खुला तो उसने माथा ठोक लिया। पर नसीब का फेर समझकर चुप रही। जब सभी सो जाते और रात गहरा जाती तो वह बाहरवाली अँगनाई मे जा बैठती और सिर धुन धुन कर विलाप करती, रोती और बिलखती।

एक दिन वह ऐसे ही बैठी रो पीट रही थी कि उधर से शिवजी निकले। वे पार्वती को सग लिए टहलने निकले थे। पार्वती जी ने वह रोना धोना सुना तो बोली, "महादेव, यह रुलाई किसकी है?"

महादेव ने कहा, "होगी कोई डाइन जोगिन, या भुतनी चुडैल या डाकिनी पिशाचिनी। कही बैठी ठुनक रही होगी। उससे हमे क्या लेना देना है?"

पर पार्वती भी ठहरी एक हठीली, हठ ठान बैठी। जिधर से रोने की आवाज आ रही थी उधर ही दोनो बढ चले। जाकर क्या देखते है कि कोई सोलह बरस की एक अत्यत सुदर बहू बैठी रो रही है। उन्हे देखते ही वह दडवत कर के पैरो मे लेट गई और बोली, "बेमानी जीवन किस काम का? मुझे मारते जाओ।"



महादेव ने अपनी जटा से एक फूल निकालकर उसे दिया और बोले, "वह बंदर नहीं है। उसे तो पिछले जनम का शाप है। अमावस की रात को वह अपने चोले से निकलकर देवलोक जाता है। भोर होने के पहले ही लौटकर फिर अपने चोले में घुस जाता है। तेरे सो जाने पर ही जाता है वह। अगली बार अमावस आए तो रात को जागती रहना। चुपचाप गुड़ीमुड़ी मार कर पड़ी रहना। जैसे ही चोला छोडकर वह बाहर निकले, वैसे ही क्या करना कि प्रसादी के इस फूल को पानी में भिगोकर उसके चोले पर छिडक देना। देवलोक से लौटने पर जब वह अपने चोले में घुसने लगेगा तो सुंदर आदमी बन जायगा। देवताओं के रूप का।"

बहू ने यह बात किसी को नहीं बताई। फूल को पल्ले के छोर से बांधे रही। अमावस की रात आधी से अधिक बीत चुकी थी। सौदागर की बहू चौकन्नी सो रही थी। सचमुच ही उस बंदर की चमड़ी के भीतर से चिड़िया जैसी कोई चीज निकली और फुर्र से उड़ गई। उस चिड़िया के उड़ते ही बहू ने फूल को पानी मे भिगोकर उस बंदर के चोले पर छिडक दिया। रात बीते वह चिड़िया लौटी। लौट के चोले मे घुसी। उसके घुसते ही बहू क्या देखती है कि वह बंदर सचमुच एक अत्यंत सुंदर जवान आदमी बनकर उठ बैठा।

जवान बोला, "हाय तूने यह क्या किया? मेरे चोले को नष्ट कर दिया। अब मै देवलोक नही जा सकूंगा।"

परंतु बहू की खुशी का ठिकाना न रहा। दोनो पास पास बैठकर सुख दुख की बाते करने लगे। बातो ही बातो मे सारी रात बीत गई। सुबह सवेरे लोगो ने उस सुंदर जवान को देखा।

बहू ने सारी कहानी पढ़ सुनाई। सुनकर सभी को बड़ी खुशी हुई। सौदागर के कोई बेटा नहीं था, उसे सहज ही में एक इतना अच्छा बेटा मिल गया। सौदागर ने उसको अपनी सारी धन दौलत दे दी। उसे अपना बेटा बना लिया, पाला पोसा, राज भर के तमाम लोगों को खिलाया पिलाया, उस लड़के को राजा के पास ले गया और राजा ने अपने हाथ से उसके सिर पर पगड़ी बाँधी। तब बेटे ने बहू को साथ लेकर पूरे युग भर राज किया। दोनों बड़े सुख से रहे। पोते, परपोते, लकड़पोते, न जानें कितनी पीढ़ियाँ अपनी आँखों से देखी। जब दोनों की नाक धरती पर घिसटने लगी, सारे बाल सन की तरह सफेद हो गए, तब कहीं दोनों को 'नारायण' हुआ।

उड़िया लोक-कथा—२

परलोक की आरसी

एक था ठग। उसके घर में ठगी की विद्या पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही थी। वह ठग अब बूढ़ा हो चला था। उसके दो बेटे थे। एक दिन उसने दोनों को अपने पास बुलाकर कहा, "देखो बेटे मेरा तो बल गया, उमर गई और अब तो माटी चेतने के दिन आ पहुँचे हैं। तुम दोनों ऐसे हो कि अब तक ठगी के लिए कभी निकले ही नहीं। हमारी कुल विद्या डूबी जा रही है। दिन रात इसी सोच में घुलता रहता हूँ कि मेरे बाद हमारा नाम डूब जाएगा।" बड़ा बेटा उठ खड़ा हुआ। वह बोला, "मुझे सौ रुपए दो, मैं जाता हूँ।"

उसने सौ-एक रुपए लिए और निकल पड़ा। एक दुलकी घोड़ा मोल लिया, अग्गड़ पग्गड़ बाँधा, पाट पटम्बर पहने, फेटा कछनी कसी। पहन ओढ़कर एड़ी चोटी सजा धजा ली और घोड़े पर सवार होकर चल पडा। वह एक राजा के राज मे पहुँचा। उसने जाकर राजा से कहा, "मैं घोड़े फेरने वाला आया हूँ।" यह कहकर वह राजा के ही घर मे रहने लगा।

एक दिन राजा ने कहा, "मेरे पछीराज घोड़े को फेर लाओ।" पंछीराज राजा के घोड़ो मे सिरमौर था। ठग बच्चे ने उसकी पीठ पर चढते ही तड़ातड़ कोड़े जड़ दिए। कोड़े खाकर पंछीराज एक ही छलाँग मे सौ कोस फाँद गया। राजा बैठे घोड़े की बाट जोहते रहे और ठग घोड़े को लेकर उड़नछू हो गया।

तड़ातड़ कोड़े लगाता वह पछीराज को एक दूसरे राजा के नगर में ले गया। उस राजा ने जैसे ही पंछीराज घोड़े को देखा, उस पर लट्टू हो गया। ठग बच्चा बोला, "मैं घोड़े का सौदागर हूँ, सरकार! आपके ही श्री चरणों में यह घोड़ा भेट करने आया हूँ।" राजा बहुत खुश हुआ। उसने उसे हज़ार रुपए नक़द, जोड़े जोड़े पाट पटम्बर, बीरबली कुंडल, कंगन, कंठा और राह खर्च देकर विदा किया। घर पहुँच कर सारी धन दौलत बाप के आगे रखकर उसने बाप के पाँव छुए तो बाप ने सारा हालचाल पूछा। वह बेटे के करतब सुनकर बहुत खुश हुआ।

अब उसने छोटे बेटे से कहा, "अरे पूत, तेरा बड़ा भाई तो इतना कुछ लाया, अब तू भी तो अपना कोई करतब दिखा। बुढापे में मेरी परवरिस जैसी तू करेगा, सो तो मैं खूब जानता हूँ। तू अपना ही पेट पाल ले और कुल का नाम रख ले तो बहुत है।" छोटा बेटा बोला, "भैया को

चलती बेर आपने सौ रुपए दिए थे। मैं एक पाई भी नहीं माँगता।" यह कहकर वह घड़ी साइत देख के घर से निकल पड़ा। उसने राह बाट से एक लोंदा गोबर उठाया और उसकी एक बड़ी सी पिंड़िया बना ली। पिंडिया की चोटी पर एक आरसी चिपका दी। फिर उसे रेशम के एक टुकड़े में अच्छी तरह लपेट लिया। ऊपर तहाई हुई पीताम्बरी डाल दी। फिर उस पिंडिया को कंधे पर उठाकर चल पड़ा। एक राजा के राज में पहुँचा। राजा का दरबार लगा था। बड़ी भीड़ भाड़ थी। दूर से ही चहल पहल सुनाई पड़ रही थी। दरबार में अमीर उमरा का ठट्ठ लगा था। कितने ही वजीर, सौदागर, कोतवाल, हारी गुहारी, मुद्दई मुद्दालेह, तमाशबीन, फौज फाटे, नायक सामंत, प्यादे सिपाही, सभी जुटे थे। वह सीधे कचहरी में जा पहुँचा। उसने राजा के आगे वह पिंड़िया डाल दी। राजा ने पूछा, "अबे, यह क्या है?"

जवान बोला, "प्रभो! यह परलोक की आरसी है। जिसके माँ बाप मर चुके हो, वह इस आरसी मे झाँके तो उसे साफ दिखाई पड़ जाएगा कि परलोक मे उसके माँ बाप सुख में हैं कि दुख में। सुख है तो कैसा और दुख है तो कैसा?"

राजा ने कहा, "हमारे माँ बाप क्या कर रहे है, हम यह देखना चाहते हैं।"

ठग बच्चा बोला, "प्रभो! यह तो चुटकी बजाते हो जाएगा, पर यह आरसी भी अजीब है। जब तक एक हजार रुपये की 'दर्शनी' इसके पास न रखी जाए, तब तक इसमें कुछ सूझता ही नहीं। सिर्फ धुँधला धुँधला जाला सा दिखाई देता है।"

राजा माँ बाप को देखने के लिए बेचैन हो चले थे। और राजा के घर रुपयों की क्या कमी? भंडारी को हुक्म भर देने की देर थी कि एक

नौजवान ने रुपए लाकर ढेर कर दिए। 'दर्शनी' रख दी गई तो राजा माँ बाप को देखने लपके। ठीक उसी समय ठग बोल उठा, "प्रभो, जान बख्शे तो कहूँ। उस आरसी मे एक और बात है। जिसके बाप का कोई ठीक ठिकाना न हो उसको उसमे माँ बाप नही दिखाई दे सकते। उसे बस अपना ही चेहरा दिखाई देगा।

राजा ने आरसी मे झाँका तो उन्हें बाप बाप कुछ भी नही दिखा, दिखा तो बस अपना ही चेहरा। राजा ने सोचा यह भी अच्छा गड़बड़ झाला हुआ। सच्ची कहूँ कि माँ बाप नही दिखे तो इतने लोग समझेगे कि मेरे बाप का कोई ठिकाना नही। फिर तो मेरा मोल चवन्नी भर भी नही रह जाएगा।

ठग बच्चे ने राजा के मन की बात भाँप ली। हँस हँसकर पूछने लगा, "प्रभो! सरकार के माँ बाप परलोक मे क्या कर रहे है? सरकार तो उन्हे देख ही रहे होगे?"

राजा के दिल मे तो खुद ही चोर था। लाजो गडते हुए बोले, "हाँ हाँ, देख रहा हूँ। बापू तो देवलोक मे बडे आनन्द से है।"

तब वजीर ने सोचा कि राजा ने तो अपने माँ बाप को देख लिया, जरा मै भी देखूँ कि मेरे माँ बाप क्या कर रहे है? यह सोचकर वे भी एक हजार रुपया ले आए और उन्हे ठग के आगे रख दिया। वजीर को भी बस अपना ही चेहरा दिखा। वह भी दुविधा मे पड गया। सोचने लगा, राजा ने अपने माँ बाप को कैसे देख लिया? मुझे अपने माँ बाप क्यो नही दिखते? तो क्या मै अपने माँ बाप का नही हूँ? यह बात अगर सब लोग जान गए, तो मेरा बड़प्पन धूल मे मिल जाएगा।



वजीर ने झट कहा, 'हाँ, हाँ'......

तब तक ठग बच्चा पूछ बैठा, "देखा महाराज ?" वजीर ने झट कहा, "हाँ, हाँ। आहा, मेरे माँ बाप तो देवलोक में बड़े आनन्द से हैं, खूब सुख लूट रहे हैं।" उसके बाद वजीर भी अपने आसन पर जा बैठा। उसके बाद एक सौदागर आया। उसने भी हजार रुपए की ढेरी लगा दी और आरसी में झांकने लगा। उसे भी वस अपना ही चेहरा दिखा। अब अगर उतने लोगों के आगे कुछ कह दे तो शरमिंदा होना पड़े। बोला, "अहा, मेरे माँ बाप भी स्वर्ग में बड़े मजे में हैं।"

उधर राजा सोच रहा था कि "सबने तो देखा, मैं ही रह गया। तो क्या मैं अपने बाप का नहीं हूँ ?" वजीर और सौदागर भी ठीक यही सोच रहे थे। चोर की मैया या तो लाजों रोती ही नहीं या रोती है तो किवाड़ लगा के। सो, लाज के मारे कोई भी अपनी बात नहीं बताता था। अपनी अपनी आँखों में सब आप ही चोर बन बैठे थे। फिर कोतवाल ने भी एक हजार रुपये की गठरी देकर राजा, वजीर और सौदागर की तरह अपने माँ बाप को देखा। लेकिन जब तक उस ठगी का भेद कोतवाल पर खुले, तब तक ठग बच्चा चार हजार की गठरी बाँधकर राजा के दरबार से चम्पत हो चुका था। घर लौटकर उसने बाप के आगे रुपयों की ढेरी लगा दी और सारा हाल कह सुनाया। हाल सुनकर बाप ने कहा, "शाबाश रे पूत, शाबाश। तू तो मुझसे भी इक्कीस निकला !" फिर वह दोनों बेटों को लेकर शान से ठगी करता हुआ घर गिरस्ती चलाने लगा।

(४)

जापान का लोक-साहित्य

हमारे देश की भाँति जापान मे भी लोक-साहित्य बहुत है। वह धर्म और पुराण, देवी देवता और दैत्य दानव, व्रत और त्योहार आदि से संबंध रखनेवाली अनेक कथाएँ प्रचलित है।

'कोजीकी' जापान की सबसे पुरानी किताब है। उसमे देवी देवताओ और दुनिया के जन्म के संबंध मे बडी रोचक कहानियाँ दी हुई है। उसमें लिखा है कि ईजानागी नामक देवता और उसकी पत्नी ईजानामी दोनों को धरती बनाने का काम सौंपा गया। वे अपनी रत्नजटित तलवार लेकर आकाश के झूलते हुए पुल इंद्रधनुष पर खड़े हुए और जब उन्होंने अपनी तलवार समुन्दर के जल मे डुबोकर निकाली तो पानी की एक बूंद टपककर नीचे गिर पड़ी और उसी से ओनोगोरी टापू बन गया। वे दोनो उसी टापू पर घर बनाकर रहने लगे और इसके बाद उन्होंने जापान के आठो मुख्य टापुओं को जन्म दिया। अग्नि, वायु, चन्द्र और सूर्य आदि असख्य देवी देवता इन्ही ईजानागी और ईजानामी की संतान बताए जाते है। जापान की पौराणिक कहानियों मे इन्ही सब की चर्चा है और वे कहानियाँ जापान के लोक साहित्य का अच्छा नमूना हैं।

भारत और चीन के प्रभाव से जापान में भी दैत्यों और राक्षसों की कल्पना पैदा हुई। कल्पना के उन दैत्यो को वहाँ 'ओनी' कहा जाता है। जापान की लोक कथाओ, कहावतो और कहानियो में हर जगह उनका वर्णन मिलता है। जापान की लोक-कथाएँ बडी दिलचस्प और अनोखी होती है। उनमे से कुछ कहानियाँ तो इतनी लोकप्रिय है कि लगभग हर घर मे कही और सुनी जाती है उनमे से एक 'उराशिमा टारो की कहानी' है।

उराशिमा टारो एक मछुआ था। उसने सागर की राजकुमारी के महल मे तीन सौ साल हँस खेलकर गुजार दिए फिर भी वह बराबर यही समझता रहा कि 'अभी तो आया हूँ'। राजकुमारी से विदा होकर जब वह अपने गाँव लौटा तो उसने देखा कि हर चीज बदल चुकी थी। न पहले के लोग थे न पहले के मकान। बेचारे उराशिमा टारो की समझ मे न आया कि आखिर हुआ क्या? घबराहट और अचरज के मारे उसका बुरा हाल हो गया। राजकुमारी ने चलते समय उसे एक बोतल दी थी और कहा कि 'इसे भूलकर भी न खोलना'। परेशानी में उसने वह बोतल खोल डाली। उराशिमा को क्या पता था कि बोतल मे उसके जीवन के तीन सौ साल बद थे। ज्योही उसने बोतल की डाट खोली त्योही उसकी जीवन शक्ति भाप बनकर उड गई। नौजवान उराशिमा टारो पर तीन सौ साल का बुढ़ापा फट पडा और वह तुरत मर गया।

इसी प्रकार मोमोटारो की मजेदार कहानी भी बहुत लोकप्रिय है। मोमो' (आडू) मे किसी नन्हे से बच्चे को बैठा पाकर एक बुड्ढा उसे अपने घर ले आया। बुड्ढे और उसकी पत्नी ने बच्चे को पाला पोसा और उसका नाम मोमोटारो रखा। बडा होकर मोमोटारो ओनिगाशिमा नाम

के टापू की ओर चल पड़ा। वह राक्षसों का टापू था। राह मे उसने एक कुत्ते, एक बंदर और एक तीतर को अपना दोस्त बनाया। उन तीनो की सहायता से उसने राक्षसों को हराया और उनका सारा खजाना लेकर अपने दोस्तो के साथ घर लौट आया।

उन कहानियो को पढते हुए ऐसा लगता है जैसे हम अपने ही देश की कहानिया पढ़ रहे हो। इसमे शक नही कि हर देश की अपनी कुछ विशेषताएँ होती है। उनके कारण अलग अलग देशो की लोक कथाओ मे कुछ अंतर होता है। पर उनकी आत्मा एक होती है।

आगे के पन्नो मे हम चाँद की राजकुमारी और बाँस काटनेवाले बुड्ढे की कहानी दे रहे है। यह कहानी जापान की बहुत मशहूर कहानियो मे से है।

जापानी लोक-कथा

कागुयाहिमे

प्रशान्त महासागर मे एक छोटा सा सुन्दर टापू है जिसे जापान कहते है। बहुत पुराने जमाने मे वहाँ एक राजा था। उसकी राजधानी के पास एक गाँव मे एक बुड्ढा बँसफोर रहता था। उसका नाम ताकेतोरिनो ओगिन था। उसके साथ उसकी पत्नी भी रहती थी। पत्नी का नाम किकी था। ताकेतोरिनो जगल से बाँस काट काटकर लाता था और उन्हे बेचकर अपना और अपनी पत्नी का पेट पालता था।





एक दिन तानेतोग्निो बाँस काट रहा था। सहसा उसे बंसवारी की जड़ों में पड़ी हुई एक नन्ही सी बच्ची दिखाई दी। बच्ची चाँद जैसी सुन्दर थी और हीरे की कनी जैसी उसकी कांति थी। तानेतोग्निो खुशी के मारे उछल पड़ा। वह बच्ची को अपने घर ले गया। उसको देखकर स्त्री भी बहुत खुश हुई। उसने कहा, "हमारे कोई आल औलाद तो है नहीं। हम इसे ही अपनी संतान समझेंगे और अपनी संतान की तरह ही इसे पालेंगे।"

पति पत्नी ने मिलकर उस बच्ची का नाम रक्खा, तयौदावेतो कागुयाहिमे। कागुयाहिमे ज्यों ज्यों बड़ी होती गई, त्यों त्यों चाँद की कला की तरह उसकी सुन्दरता भी बढती गई। और वह समय जल्दी ही आ गया जब उसके रूप की चर्चा घर घर में होने लगी। एक से एक सुन्दर, गुणी और धनी नौजवान उससे शादी करने के लिए बैचेन हो उठे। बेचारा तानेतोग्निो बहुत दुखी हुआ। वह अपनी बेटी को इतना प्यार करता था कि उसे पल भर के लिए भी आँखो से ओझल नही होने देना चाहता था। एक दिन उसने कागुया से कहा, "बेटी! तू हमें ही अपना माता पिता समझती है। मगर असल में तू देवताओ की कन्या है। मैंने तुझे एक दिन बँसवारी में पडी पाया था। तब से इतने दिनो तक तुझे अपनी बच्ची की तरह पाला पोसा। अब तू बडी हो गई और देश के एक से एक योग्य लडके तुझसे शादी करना चाहते है। अब तू जल्दी ही पराई हो जाएगी, यह सोच सोच कर मेरा दिल बैठा जाता है।"

कागुया ने उत्तर दिया, "मेरे लिए तो आप ही लोग सब कुछ है। न मै कभी शादी करूँगी और न आपके पास से कही जाऊंगी। आप सबसे कह दीजिए कि आपकी बेटी शादी नही करना चाहती।"

कागुया के विचार सुनकर उससे शादी करने के इच्छुक सभी नौजवान निराश हो गए। लेकिन उनमे से पॉच ने अपना हठ नही छोडा। उनमे से दो तो राजकुमार थे, जिनके नाम थे ईशित्सुकुरि नोमिको और कुरामोचि नोमिको। बाकी तीन भी कुछ ऐसे वैसे न थे। वे भी ऊँचे घरानो के लडके थे। उनके नाम थे अबेनो उदाईजिन, ओतोमोनो दाईनोगोन और इसोनो-कामिनो च्यूनागोन। उन पॉचो का कहना था कि "या तो कागुया शादी करने के लिए राजी हो, या फिर यह बताए कि हममे क्या खराबी है।"

लाचार होकर कागुया ने एक दिन उन पॉचो को बुलाकर कहा, "अगर आप लोग सचमुच मुझसे शादी करना चाहते हो तो मेरी एक मॉग पूरी करना पडेगी। मै आप मे से हर एक को दो साल का समय देती हूँ। दो साल मे जो मेरी मॉग पहले पूरी कर देगा, मै उससे शादी कर लूँगी।"

पॉचो नौजवान तुरत राजी हो गए। उन्होने कागुयाहिमे से कहा, "तुम हमे जल्दी से अपनी माँग बताओ। हम उसे जरूर पूरा करेगे।" कागुया ने पॉचों से एक एक मॉग की।

उसने कहा, "अच्छा राजकुमार ईशित्सुकुरि, आप वह कटोरा लाकर मुझे दीजिए, जिसमे भगवान बुद्ध भिक्षा माँगा करते थे।

"और आप, राजकुमार कुरामोचि! आप उस पेड़ की एक डाली तोड़ लाइए, जिसकी जड़े चाँदी की, तना सोने का और फल चमकदार मणियों के है। वह पेड़ आपको होराईसान पहाड के ऊपर



" पाँचो नौजवान सहम गए।"

मिलेगा, जो पूर्वी समुद्र में है।

"महाशय अबेनो उदाईजिन! आप चीन देश में मिलनेवाले आग के चूहे की खाल लाइए।

"और महाशय ओतोमोनो दाइनोगोन! आप हवाई साँप की पँचरंगी मणि लाकर मुझे दीजिए।

"रह गए महाशय इसोनोकामिनो च्यूनागोन, सो आप! अबाबील के पेट से पैदा कोयासुगाई[1] ले आइए।"

कागुया की माँगें सुनते ही पाँचो नौजवान सहम गए। उन्हें पूरा करना लगभग असम्भव ही था। पर वे पाँचो साहसी थे। आसानी से हार मानना नही जानते थे। उनमे से हर एक ने तुरत सँभल कर उत्तर दिया, "यह कौन सी बडी बात है। मै अभी जाता हूँ और बात की बात मे तुम्हारी मनचाही चीज लेकर लौटता हूँ।"

कुछ ही दिन बाद राजकुमार ईशित्सुकुरि भगवान बुद्ध का कटोरा लेकर लौट आया। लेकिन वह कटोरा नकली साबित हुआ। फिर राजकुमार कुरामोचि सोने चाँदी के पेड की डाली लेकर आया। पर बात चीत मे यह भेद खुल गया कि वह डाली नकली है और सुनारो से बनवाई गई है। इसी तरह उदाईजिन ने एक कपडा लाकर पेश किया और बताया कि वह आग के चूहो की खाल का बना हुआ है। पर वह आग मे डालते ही जल गया। दूसरा रईसजादा दाइनोगोन जहाज मे सवार होकर हवाई साँप की पँचरंगी मणि लाने गया था। वह कुछ ही दूर गया था कि समुद्र मे बडे जोरो का

१. कोयासुगाई का जापानी भाषा में लगभग वही अर्थ होता है जो हिन्दी मे गूलर के फूल का होता है।

तूफान आ गया। उसने इस तूफान को नागराज का कोप समझा और डर के मारे घर लौट आया। इस प्रकार चार को कागुआ के सामने लज्जित होना पड़ा। सभी अपना सा मुंह लेकर रह गए।

पांचवां बेचारा च्युनागोन सब में अभागा निकला। उससे किसी ने बताया कि अंडे देते समय अबाबील अपनी कोयासुगाई निकाल कर बाहर रख देती है। इसलिए वह एक दिन सीढी लगाकर अबाबील के घोसले से कोयासुगाई निकालने की कोशिश करने लगा। एकाएक उसका पैर फिसला और वह गिरकर मर गया। कागुया ने सुना तो बहुत दुखी होकर बोली, "आप पाचो में एक वह ही ऐसा था जिसने असली मॉग पूरी करने की सच्ची कोशिश की, और उस कोशिश मे बेचारे को अपनी जान से भी हाथ धोना पडा।"

बात आई गई हो गई। कागुया पहले की ही तरह अपने माता पिता के साथ रहती रही। पर उसके रूप का बखान फैलता रहा, और होते होते उसकी सुन्दरता की खबर राजा तक पहुँच गई। राजा ने कागुया से शादी करने की इच्छा प्रगट की। लेकिन कागुया राजी नही हुई। राजा को बडा ताज्जुब हुआ कि आखिर उसमे कौन से लाल जडे है जो राजमहल की रानी बनने से भी इन्कार करती है। एक दिन राजा चुपके से उसके घर पहुँचा। पर वह ज्योही कागुया के कमरे मे घुसा, वह अन्तर्धान हो गई। बेचारे राजा को बहुत अचभा हुआ। वह सोचने लगा "हो न हो कागुया देवकन्या है। इसलिए उससे विवाह की बात सोचना उचित नही है। ज्योही राजा के मन मे यह बात आई, त्योही कागुया फिर प्रगट हो गई। राजा बोला, "अब मै तुमसे कभी शादी करने की बात नही सोचूंगा। मगर दया करके मेरी एक बात मान लो। मै पत्र लिखूं तो उसका उत्तर जरूर

देना। मै उसी से सतोष कर लूंगा।" कागुया ने राजा की बात मान ली।

राजा और कागुया एक दूसरे को तीन साल तक बराबर पत्र लिखते रहे। चौथे साल के बसत मे कागुया बहुत उदास रहने लगी। चांद को देखते ही उसकी आँखो से आँसू टपकने लगते। उसके माता पिता बहुत चिन्तित हुए। उन्होने बेटी से कारण पूछा तो उसने उत्तर दिया, "मै सचमुच इस दुनिया की नही हूँ। मै चन्द्रलोक की परी हूँ। मुझे वहाँ लौटकर जाना ही होगा। आज से तीन दिन बाद चन्द्रलोक के दूत आकर मुझे ले जाएंगे। इसीलिए, आप लोगो से बिछुडने की बात सोच कर मेरी आँखों मे आँसू भर आते है।"

कागुया की बात सुनते ही ताकेतोरि और किकी ने भी रोना धोना शुरू कर दिया। फिर उन्होने सोचा कि किसी न किसी तरह कागुया को चन्द्रलोक जाने से रोकना चाहिए। उन्होने राजा को खबर दी, और राजा ने तुरत कागुया को बचाने के लिए लाव लश्कर भेज दिए। तीसरे दिन रात होने से पहले ही कागुया को एक कमरे मे बद करके दरवाजे मे भारी भारी ताले डाल दिए गए। राजा का लश्कर चौकसी से पहरा देने लगा। पर ज्योही रात हुई और चाँद की आभा भीगने लगी कि देवदूत एक उडनखटोला लेकर आ पहुँचे। वे तुरत कागुया के कमरे मे पहुँच गए, जहाँ वह पडी आँसू बहा रही थी। देवदूतों को न राजा का लाव लश्कर रोक पाया और और न भारी भारी ताले।

देवदूत कागुया के सामने अमृत का प्याला और परियो के कपडे रखकर बोले, "यह अमृत पीकर और ये कपडे पहनकर उडन खटोले मे बैठ जाओ।"

कागुया अपने कमरे से बाहर आई। उसने रोकर ताकेतोरि से कहा, "पिता जी, राजा की सेना भी मुझे न रोक सकी। अब मुझे जाना ही पडेगा। पर यह अमृत और ये कपड़े ऐसे है कि इन्हे पीने और पहनने के बाद आदमी





"उडनखटोला चन्द्रलोक की ओर उड चला।"

इस दुनिया की सभी बातो को भूल जाता है। इसलिए ये कपडे आपके लिए और अमृत की शीशी राजा के लिए छोडे जाती हूँ। मै कुछ भी भूलना नही चाहती। सब कुछ याद रखना चाहती हूँ—आपको और माँ को, राजा को, सबको। आप मेरा यह पत्र रख ले। इसके साथ अमृत की शीशी राजा के पास भेज दीजिएगा और कभी कभी मेरी याद करते रहिएगा।"

यह कहकर रोती हुई कागुया उडनखटोले पर बैठ गई। उडनखटोला चन्द्रलोक की ओर उड चला। लोग बुत बने देखते रह गए।

ताकेतोरिनो ने कागुया की चिट्ठी और भेंट राजा के पास भेज दी। राजा ने पत्र पढ़ा। उसमें लिखा था, "मै आपकी याद सीने से लगाए हुए चन्द्र-लोक जा रही हूँ। मेरी प्रार्थना है कि आप यह अमृत पीकर मुझे भूल जाइए।"

राजा कागुया की चिट्ठी पढकर बेचैन हो उठा। उसने कहा, "जब कागुया ही नही रही तो मै सुखी होकर क्या करूँगा ?"

इतना कहकर उसने आज्ञा दी कि कागुया के सारे पत्र और अमृत का प्याला फूजीयामा पहाड़ की चोटी पर लेजाकर जला दिया जाए।

कहा जाता है कि उन पत्रो के जलने से जो आग पैदा हुई वह अमृत का सयोग पाकर अमर हो गई। आज तक वह आग बुझी नही और फूजीयामा[1] की चोटी से धुँआँ निकलता रहता है।

" आज भी चोटी से धुँआँ निकलता रहता है।"



ज्ञान सरोवर

१. फूजीयामा जापान का एक ज्वालामुखी पहाड है। उसमें पहले पहल विस्फोट होने का जो कारण इस लोक-कथा में बताया गया है, वह सच न होते हुए भी दिलचस्प है।



आदमी के शत्रु कीड़े

संसार मे जितने कुल जानवर है, उनमे ७५ फीसदी कीड़े मकोड़े है। वैज्ञानिको की छान बीन से पता लगा है कि कीड़े मकोड़े आदमी के पैदा होने से बहुत पहले इस धरती पर पैदा हो चुके थे। वे लगभग ५० करोड वर्ष से इस धरती की छाती पर रेंग रहे है।

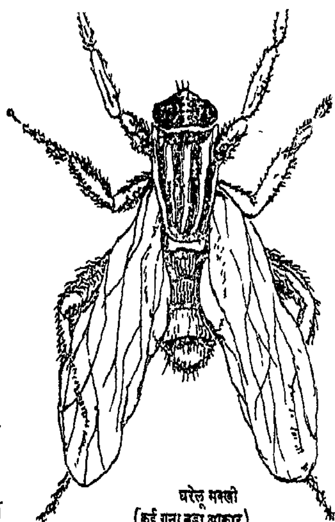
आदमी को पैदा होते ही कीडे मकोडो से पाला पड़ा। उनके साथ आदमी का गहरा सम्बन्ध कायम हो गया। जिन कीडो को उसने लाभदायक पाया उन्हे पाल पोसकर लाभ उठाया, और जिन कीडो को उसने अपने लिए हानिकर पाया उनसे वह लड भिड़कर अपनी रक्षा करता रहा। पर हानिकर कीडो की तादाद बहुत अधिक थी। उनसे निपटना जरा कठिन था। वे आदमियो और पालतू पशुओ मे तरह तरह के रोग फैलाते रहते थे। आज भी ६० फीसदी मौतें केवल छोटे से मच्छर के कारण होती है। मक्खियो से हैजा, पेचिश और दूसरी अनेक बीमारियाँ फैलती है। आदमी कीडो

से बराबर लड़ता आया है, और जैसे जैसे उसका अनुभव और ज्ञान वढता गया है, वैसे वैसे वह इस लड़ाई में सफल होता गया है। फल यह हुआ है कि आज बहुत से देशों मे कई तरह के हानिकारक कीडे लगभग विल्कुल नष्ट कर दिए गए हैं।

अधिकतर कीड़े मकोड़े अडो मे निकलने के वाद कई कई हालतो से गुजरकर अपने असली रूप मे आते हैं। कीडे दो तरह के होते है। एक तो वे हैं जो पैदाइश के समय से ही आकार के सिवा रग रूप मे विल्कुल अपने मा बाप जैसे होते हैं—जैसे टिड्डी, झींगुर आदि। दूसरे वे हैं जिनके बच्चे अडो मे निकलने के वाद कई अवस्थाओ मे से होकर तव मॉ वाप की शक्ल पाते हैं।

वहुत से कीड़े ऐसे होते है जो थोडे दिनो मे ही लाखों अडे दे डालते है। उनकी मादाएँ एक खास स्थान और वातावरण मे अडे देती है। पौधो पर रहने और पलनेवाले कीडे पत्तो, तनो, फलो या फूलो पर अडे देते है। पशु पक्षियों के शरीर पर रहनेवाले कीडो के अडे पशु पक्षियो के वाल, खाल या गोश्त पर पाए जाते है। अडो से वच्चो के निकलने के लिए एक खास तापमान और नमी की जरूरत होती है। अडे से ताजा निकले हुए कीडे को अग्रेजी मे 'लार्वा' कहते है। अडे से वाहर आते ही लार्वा जी खोलकर खाना पीना शुरू कर देता है। वरसात के मौसम मे पौधो पर ढेरो रग विरगे लार्वे पाए जाते है। उनमे कुछ के शरीर पर ल बे कॉटे होते है। छूने से उन कॉटो की नोक टूट जाती है, और उनमे से एक तरह का जहरीला रस निकलने लगता है। वह रस अगर आदमी के शरीर मे लग जाए तो खुजली पैदा होने लगती है। हानिकर कीडे प्राय. लार्वे के रूप मे ही सबसे अधिक हानि पहुँचाते है।

लार्वा बडा होकर 'प्यूपा' कहलाता है। प्यूपा की शक्ल मे आने पर उसका खाना पीना बद हो जाता है, और उस पर एक पतली सी झिल्ली चढ जाती है। झिल्ली के फटने पर वह कीड़े के असली रूप मे आ जाता है।



घरेलू मक्खी
(कई गुना बडा आकार)

घरेलू मक्खी हानिकर कीडो की उन अनेक किस्मो मे से एक है, जिनमे से हर एक की सख्या दुनिया मे बहुत अधिक है।

'भिन भिन' करनेवाली छोटी सी मक्खी आदमी के लिए शायद शेर और चीते से भी ज्यादा खतरनाक है। मक्खी को बीमारियो की सवारी कहना चाहिए। और वह भी हवाई जहाज जैसी तेज सवारी, क्योकि वह पलक मारते बीमारी के कीडो को एक जगह से दूसरी जगह पहुँचा देती है।

गदगी मे ही बीमारी के कीडे होते है, जिनके कारण लोग बीमार पडते है या मरते है। मक्खी को गदगी ही प्यारी है। वह अदबदाकर गंदी चीजों पर बैठती है। फिर अपने परो और पैरो मे गदगी लगाकर खाने पीने की चीजों पर जा बैठती है। इस प्रकार उन चीजो के साथ हमारे पेट के अदर बीमारी के कीडे पहुँच जाते है।

संग्रहणी, हैजा आदि छूत की बीमारियाँ मक्खी के ही कारण फैलती है।

कहा जाता है कि प्लेग, तपेदिक, चेचक आदि रोग भी मक्खी ही फैलाती है। मक्खी के कारण हर साल न जाने कितनी जाने जाती है। यही कारण है कि हर देश और हर जाति के लोग मक्खी से घृणा करते है।

जिन जगहो पर जूठन, पाखाना, लीद, सडा हुआ गोबर, बदबूदार कूडा कर्कट आदि पड़ा होता है, मक्खी उन्हीं जगहो पर अंडे देती है। उसकी नस्ल इस तेजी से बढती है कि सोचकर हैरत होती है। मादा मक्खी एक बार मे कुछ नही तो १००–१५० अडे देती है। उसके अंडे गोल और बहुत छोटे छोटे होते है। इतने छोटे कि सटाकर रखने पर एक इंच जगह मे करीब २५ अडे आ जाएँगे। मक्खी के अडे मे से कम से कम १० और अधिक से अधिक २४ घटे मे बच्चे निकल आते है।

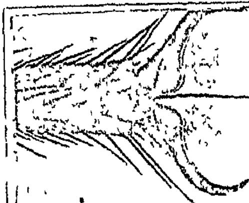
मक्खी के बच्चों को अग्रेजी मे 'लार्वा' कहते है। लार्वा ३ से ७ दिन के भीतर पूरी तरह बढ जाता है। उन तीन से सात दिनो के बीच वह तीन बार केचुल बदलता है। पूरी तरह बडा होकर वह कूडा, लीद आदि मे रेगना और जमीन मे बिल बनाना शुरू कर देता है। कुछ ही दिनो मे लार्वा की शक्ल फिर बदलती है। उस नई शक्ल के बच्चे को 'प्यूपा' कहते है। प्यूपा शुरू मे पीला होता है। लेकिन थोडे ही दिनो मे उसका रग गहरा भूरा हो जाता है। प्यूपा तीन से छे दिन में मक्खी बन जाता है। उसके ऊपर एक झिल्ली होती है। जब वह झिल्ली फट जाती है तो उसमे से परदार मक्खी निकल आती है। मादा मक्खी उड़ना शुरू करने के तीन चार दिन बाद से ही अडे देने लगती है। यही कारण है कि मक्खियो की सेना

बहुत ही छोटे (ऊपर का। और प्यूपे (का चित्र) ...में ... देते है।









खुर्दबीन से देखने पर मक्खी की नन्ही सी टाँग (ऊपर का चित्र) और नन्ही सी जबान (नीचे का चित्र) कैसी डरावनी लगती है।



तेजी से बढ़ती रहती है।

मक्खी डील डौल में बहुत छोटी होती है। उसके शरीर के तीन हिस्से होते हैं—सिर, पेट और मुँह। उसकी गर्दन लचकदार होती है, जिससे वह अपने सिर को इधर उधर घुमा सकती है। उसका मुँह चोंच की तरह होता है। मक्खी उस चोंच से ही खाती पीती है और उसमें ही उसकी लार इकट्ठा होती है। मक्खी के कद को देखते हुए उसकी आँखें बहुत बड़ी होती हैं, और उसकी एक आँख में करीब ४,००० छोटी छोटी चित्तियाँ होती हैं। उसके पंख और पैर पेट से जुड़े होते हैं।

मक्खियों से बचने के कई तरीके निकल आए हैं। उन तरीकों को अपनाकर हम इस छोटी मगर खतरनाक चीज से बच सकते हैं। मक्खी से बचने के खास तरीके दो हैं। पहला तरीका तो यह है कि मक्खी के परिवार का बढ़ना रोका जाए, और दूसरा तरीका यह है कि उन्हें नष्ट कर दिया जाए। हम बता चुके हैं कि मक्खी गंदगी में ही अंडे देती है। इसलिए अगर गंदगी पैदा ही न होने दी जाए या होते ही उसे साफ कर दिया जाए, तो मक्खियों का पैदा होना बहुत हद तक रुक जाएगा। थोड़ी बहुत जो कहीं कोने अंतरे में पैदा भी होंगी, वे अधिक हानि नहीं पहुँचा सकेंगी। कारण यह है कि जब उनके अड्डा जमाने के लिए आस पास सड़ी, गली और गंदी चीजें न होंगी, तो वे हमारी खाने पीने की चीजों में रोग के कीड़े न मिला पाएँगी। मगर इसका मतलब यह



बारीक जाली से ढक कर रखी खाने की चीजें

बारीक जाली लगे दर्वाजे और खिड़कियाँ

कीड़ेमार दवाएँ छिड़ककर मक्खी मारने का दृश्य

नही कि जो मक्खियाँ रह जाएँ, उन्हे घर मे घुसने दिया जाए और खाने पीने की चीजो पर आजादी से बैठने दिया जाए। दर्वाजो और खिड़कियो पर जाली या पर्दे लगाकर उन्हे घर मे आने से रोकना, और खाने पीने की चीजों को ढककर रखना जरूरी है।

लेकिन मक्खियो से जान बचाने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि उन्हे नष्ट कर दिया जाए। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। कई देशो मे कामयाबी के साथ ऐसा किया जा चुका है। मक्खियो को नष्ट करने की कुछ दवाएँ अब हमारे देश में भी प्रचलित हो गई है, जिनका इस्तेमाल बडे पैमाने पर किया जा सकता है।

गीली चीजो पर बैठना मक्खियो की आदत है। कही भी कोई गीली चीज मिली कि मक्खी उसके किनारे बैठकर चाटने लगेगी। इसलिए कुछ जहर मिली गीली दवाएँ घर मे रख दी जाएँ, तो झुड की झुड मक्खियाँ मारी जा सकती है।

अगर पानी मे एक फीसदी 'कमर्शियल फार्मलेन' मिलाकर उसमे थोडी सी चीनी डाल दी जाए, तो अच्छा मक्खीमार घोल बन जाएगा। उस घोल को थोडा थोडा बर्तनो मे डालकर उन्हे घर मे कई जगह रख देने से मक्खियो की तादाद मे काफी कमी हो सकती है। और भी कई कीडेमार दवाएँ है, जिनका इस्तेमाल करके मक्खियो को अडे बच्चे समेत समाप्त किया जा सकता



है। डी० डी० टी० अचूक मक्खीमार दवा है। इसे अच्छी तरह छिड़कने से मक्खियो पर फौरन असर पडता है, और वे तुरत ढेर हो जाती है।

मक्खी मारने के लिए कई पाउडर भी बनाए गए है। घूरो पर या सफाई के बाद नालियो मे उन पाउडरो को छिडक देने से बहुत लाभ होता है। इधर कुछ दिनो से 'आल्ड्रिन' नाम की एक दवा भी इस्तेमाल की जाने लगी है, और बहुत सफल साबित हुई है। पर हजार दवाओ की एक दवा गदगी से बचना है।

'नोज फ्लाई' या 'नाक की मक्खी' नाम की एक और मक्खी होती है, जो शक्ल सूरत मे लगभग घरेलू मक्खी जैसी ही होती है। वह बड़ी तादाद मे भेडो और बकरियो के दल मे घुस जाती है, और उनके मुँह, आँख या नाक के पास अडे दे देती है। उससे बचने के लिए भेड बकरियाँ इधर उधर भागती फिरती है और जमीन पर पैर पटकती है, पर उन्हे छुटकारा नही मिलता। जिस समय नाक की मक्खी के अडो से उनके लार्वे निकलकर भेड़ बकरियो की नाक मे घुसने लगते है, उस समय उन जानवरो को बहुत कष्ट होता है। लार्वे नथुनो से होते हुए दिमाग की हड्डियो मे जाकर बैठ जाते है, और एक एक साल तक वही रहते है। वे कभी कभी साँस की नली या सीगो की खोल के अदर भी घुस जाते है। कभी कभी नाक की मक्खी आदमी की नाक या आँख के करीब भी अडे दे देती है, जिससे कभी कभी आदमी अधे तक हो जाते है।

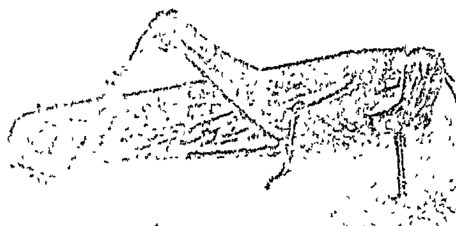
फसलो को नष्ट करनेवाले कुछ कीडे पौधो के पत्तो और तनो को चबा डालते है। कुछ केवल

नाक की मक्खी (कई गुना बडा आकार)

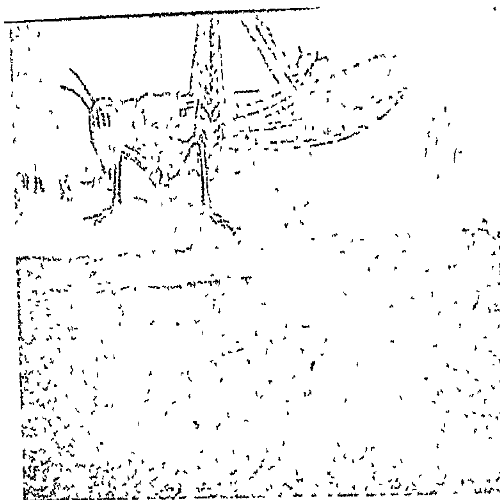


[illegible] कीड़ों की तादाद सबसे अधिक है जो [illegible] हमारे सब गल्ला नष्ट कर डालते हैं।

टिड्डी [illegible] में [illegible] हानिकारक एक [illegible] है। टिड्डियां बड़े बड़े दल बना कर चलती हैं। इनके दल एक एक मील तक लम्बे होते हैं और जहां खड़ी फसलो पर टूटते हैं, वहां पूरी की पूरी खेती को चाट जाते हैं। जिन स्थानो पर औसत वारिश २५ इंच से कम होती है, वहा टिड्डियों का हमला सबसे अधिक होता है। रेगिस्तानी टिड्डियो के दल लगभग हर साल उत्तर भारत में आकर हरी भरी फ़सलो को बर्बाद करके आदमी को करोडो रुपए का नुकसान पहुँचाते हैं। जाडों के दिनो मे एक मादा टिड्डी लगभग १२० अंडे देती है। उन अंडो को वह एक थैली में रखकर जमीन मे छेद करके दबा देती है। मई से जुलाई तक अपने आप बच्चे निकल आते हैं, और कुछ ही दिनो मे बड़े हो जाते हैं। उनके बदन पर काले और नारंगी रंग के धब्बे होते हैं। बच्चे बड़े होकर बड़े बड़े झुडो मे उड़ते और फसलों को बर्बाद करते हुए चलते हैं। टिड्डी की रोकथाम के लिए हमारे



टिड्डी



टिड्डी इसी तरह अडा देती है।

देश में एक बहुत बड़ा सरकारी महकमा कायम है, जो टिड्डी दल के चलने से पहले ही सारे देश में सूचना दे देता है। टिड्डियों की रोक थाम कई तरह से की जाती है। अडा देने के दिनो मे अडो की खोज की जाती है और उनको बडी सख्या मे जमा करके नष्ट कर दिया जाता है। बच्चो को, अडो से निकलने के बाद, खाइयो मे जमा करके मार डालते है। परदार पतगो को मारना आसान काम नही होता। पर इसान ने उनको भी मारने की तरकीबे निकाल ली है। हवाई जहाज के जरिए विषैली गैस छिडककर या तरह तरह की दवाएँ मिलाकर बनाया जानेवाला जहरीला चारा जमीन पर छिडककर टिड्डियो को आसानी से खत्म कर दिया जाता है।

आदमी की सबसे पहली आवश्यकता रोटी है। हमारे देश मे मनुष्यो की बहुत बडी सख्या आधे पेट खाकर ही दिन बिताती है। यह समस्या हल

करने के लिए जहाँ हमें खेती, अच्छे अच्छे कानून तथा उचित व्यापारिक नियमों की आवश्यकता है, वहाँ एक बड़ी जरूरत यह भी है कि हम अपनी फसलों को कीड़ो के हमलों से बचाए रक्खे, और नए औजारों, मशीनो और दवाओं से उनका मुकाबला करे।

खटमल एक छोटा सा गेरुए रग का बेपख का कीड़ा है। जब आदमी आराम करता है तो वह उसको काटकर, उसका खून पीकर और ऊपर से एक असह्य दुर्गंध फैलाकर आदमी की नीद हराम कर देता है। यह दुर्गंध एक तेल जैसे पदार्थ से निकलती है, जो खटमल के जिस्म मे एक विशेष प्रकार की गिल्टियो से रिसता रहता है। ये गिल्टियाँ दूसरे और तीसरे पैरो के बीच दोनों तरफ होती है। दो बारीक छेदो से यह तेल निकलता रहता है। ये गिल्टियाँ बहुत छोटी होती है। इस बात का कोई सबूत नही मिलता कि दूसरे कीड़ो की तरह खटमल भी रोग के कीटाणु एक जगह से दूसरी जगह ले जाता है। खटमल के काटने से खाल मे जलन, हल्की सूजन और लाली पैदा हो जाती है।



खटमल (कई गुना बडा आकार)

खटमल का मुख्य भोजन आदमी का खून है। आसानी से मनुष्य का खून प्राप्त करने के लिए यह कीडा मकानों, मुसाफिरखानों और सिनेमा-घरो वगैरह मे बिस्तरो, कुर्सियों, गद्दो और दूसरी लेटने बैठने की चीजों मे छिपकर रहता है। खटमल का मुँह एक नली जैसा होता है। खटमल इंसान की खाल मे उस नली का सिरा घुसाकर खून चूस लेता है। खून से पेट

भर जाने के बाद यह नन्हा सा कीडा रेगकर अपने अँधेरे घर में छिप जाता है। चारपाई की चूले, कुर्सी के जोड, दीवार के कागज, दीवार और फर्श की दरारे भी इनके निवास स्थान है।

यदि कोई बाधा न पडे तो खटमल को पेट भर भोजन प्राप्त करने मे ३ से ५ मिनट तक लगते है। एक बार खूराक प्राप्त कर लेने पर खटमल कई महीने तक जीवित रह सकता है। मुर्गियो, कुत्तो, पालतू चौपायो, खरगोश और चूहो जैसे गरम खूनवाले जानवरो से भी खटमल अपनी खूराक हासिल कर लेता है। पर आदमी का खून उसे बहुत पसन्द है।

खटमल अपने सुरक्षित स्थान से आदमी तक आने जाने मे बडी चतुराई से काम लेता है। इसे एक घर से दूसरे घर जाते हुए कभी नही देखा गया। एक स्थान से दूसरे स्थान तक इसके पहुँचने के साधनों मे कपडे, बिस्तर, इस्तेमाल मे आनेवाली मेज, कुर्सी, चारपाई और इसी तरह की दूसरी वस्तुएँ है। मादा खटमल अपनी ६ से ८ महीने की जिदगी मे लगभग ५०० अडे देती है। एक मादा एक दिन मे तीन चार अडो से अधिक नही देती। खटमल के बच्चे अपने माँ बाप की ही तरह होते है लेकिन उन्हे बडे होने तक चार दफा अपनी खाल बदलना पडती है। बडे होने की अवधि चार से छे सप्ताह तक है।



खटमल का अडा
(कई गुना बडा आकार)

खटमल मनुष्य को तकलीफ पहुँचाते है इसलिए उन्हे मार डालने की सफल रीतियाँ बताना आवश्यक है। चारपाई को पटक पटक कर खटमलो को बाहर निकालना और उन्हे मार डालना या चारपाई को धूप मे रखना या उसमे खौलता पानी डालना वगैरह तो हर आदमी जानता है। मेज़,

कुर्सी, चारपाई और खटमलो के छिपनेवाली दूसरी जगहों पर पानी मे डी० डी० टी० घोलकर छिड़क देने से लगभग १२ महीने तक खटमल वहाँ पहुँचने का नाम नहीं लेते। पानी मे ५ प्रतिशत डी० डी० टी० डालकर छिडकने से पहले उसे पानी मे खूब घोल लेना चाहिए।

खेती के लिए वन का महत्त्व



जिन वडी वडी सभ्यताओ का कभी सारे ससार मे बोलबाला था, आज उनका केवल नाम बाकी रह गया है। उनमे से कई इसलिए भी नष्ट हो गई कि उन्होंने अपने देश के वनो और पेड़ो को काटकर अपनी

उपजाऊ धरती को रेगिस्तान बन जाने दिया। बाबुल और अदन के लटकते हुए बाग कभी दुनिया मे अचभे की चीज थे। पर आज उनका केवल नाम ही नाम रह गया है। मेसोपोटामिया मे दजला और फरात नदियों के बीच की जमीन कभी दुनिया मे अनाज की खत्ती कहलाती थी, पर आज वहाँ चारो ओर रेत ही रेत है। सीरिया (शाम) की प्राचीन सभ्यता, वालबेक और उसके जगत प्रसिद्ध एक सौ शहर आज रेगिस्तान में दबे पडे है। इसी तरह भारत मे राजपूताने के थार रेगिस्तान मे सरस्वती की सभ्यता गुम हो चुकी है। थार का रेगिस्तान बढता ही चला जा रहा है। और यदि पूरी कोशिश करके उसकी बाढ को न रोका गया, तो वह दिन दूर नही है, जब आज की दिल्ली और उसके आस पास का हरा भरा इलाका रेगिस्तान के पेट मे चला जाएगा।

बन और खेती का चोली दामन का साथ है। यदि बन उजड़ गए तो समझ लो कि खेती थोडे ही दिनो की मेहमान है। धरती पर सबसे पहले पेड ही पैदा हुए। पेडों ही ने धरती की ऊपरी मिट्टी को उपजाऊ बनाकर उसकी रक्षा की, उसे हवा और पानी के हमलो से बचाया।

जहाँ पेड होगे वहाँ न अधिक सरदी होगी न अधिक गरमी, वहाँ मौसम सदा एक सा रहेगा। खेतो के इर्द गिर्द पेड़ अवश्य होने चाहिए। वे वायुमडल को नम रखते है और फसलो को सूखने से बचाते है। इसीलिए रूस, चीन और जापान मे आजकल खेती खुले मैदानो मे नहीं, बल्कि पेडो की पाँतो के बीच बीच में की जाती है।

पहाड़ो पर मैदानो की ओर बहते हुए जल की तेज धारा को पेड ही रोकते है, जिससे धरती का कटाव और नदियों मे बाढ का आना रुकता है। मैदानी इलाको मे पेड ही खेती को हवा के झोंको से बचाते है।



पेड़ों, झाड़ियों और घास से ढकी घाटी में धीरे धीरे बहता हुआ एक सोता

जहाँ पेड़ पौधे नही होते वहाँ मेह बरसते ही पानी तेजी से वह जाता है। वहाँ पानी मिट्टी को उपजाऊ बनाने के बजाए, बनी बनाई मिट्टी को बहा ले जाता है। इस तरह जब पानी को रोकनेवाली कोई चीज नही होती, तो नदियों मे बाढ आ जाती है। हमारे देश मे सालो से जगल कटते रहे है। इसीलिए बाढे अधिक आ रही है और उनका जोर बढता जा रहा है।

लोग तो यहाँ तक कहते है कि वन बारिश भी लाते है। चाहे यह बात सच हो या न हो पर इतना तो मानना ही पडेगा कि पेड़ बारिश के पानी को तुरंत बह जाने से रोकते है खेतीवारी के लिए यह आवश्यक नही है कि कितना पानी बरसा, बल्कि यह आवश्यक है कि जमीन में उस पानी का कितना भाग रुका। पानी आया और बह गया तो किस काम का?

पेड़ों पर लगी या जमीन पर गिरी पत्तियाँ पानी को सोख्ते की तरह सोख लेती है। पत्तियाँ पेड़ों पर से झडकर मिट्टी मे मिलती रहती है। वे मिट्टी को उपजाऊ ही नही बनाती, उसे पानी रोकने की शक्ति भी देती है।

बिना सोचे समझे गाँवो के इर्द गिर्द के छोटे

कुल्लू घाटी की हरियाली का एक मनोहर दृश्य



मोटे बनो के काटने का एक फल यह भी हुआ कि गाँववालो को जलाने के लिए लकडी नही मिलती। और कीमती गोबर जो खाद बनकर खेती की उपज बढाता है, ईंधन के रूप मे जलाया जाने लगा है। इसलिए जब तक गाँवो की खाली जमीनो मे फिर से पेड नही लगाए जाएँगे, तब तक न जमीन उपजाऊ बन सकेगी न ईंधन की समस्या ही हल हो सकेगी।

प्यासी ज़मीन का पेड़—झंड

पच्छिमी भारत मे पानी कम बरसता है। वहाँ की जमीन अक्सर प्यासी रहती है। इस कारण पजाब, राजस्थान, गुजरात और पच्छिमी उत्तर प्रदेश मे यमुना के बेहडो मे मामूली पेड नही पनप सकते। वहाँ केवल झड का पेड ही पनप सकता है और जगह जगह पाया भी जाता है। सूखे इलाको के लोगो को अपने अधिकतर कामो के लिए झड का ही सहारा लेना पडता है। किसान अपने हल, पाथे, झोपड़ी की बल्ले, थून्ही और बैलगाडी के सामान झड की लकड़ी से ही बनाते हैं। झंड की लकड़ी सुन्दर, मजबूत और पाएदार होती है। जलाने के लिए उसका ईंधन बहुत अच्छा होता है, और उसका कोयला भी अच्छा माना जाता है। झड पजाब और गुजरात तक ही नहीं, सिध, बलोचिस्तान, ईरान आदि दूर दूर के पच्छिमी इलाको मे और दक्खिन के सूखे इलाको मे भी पाया जाता है।

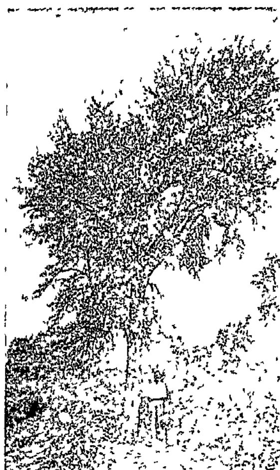
झड का पेड बहुत बड़ा नही होता। वह झाड जैसा होता है। उसकी अधिक से अधिक ऊँचाई ५० फुट और अच्छी जमीन पर झड के तने का घेरा बहुत से बहुत चार फुट होता है। झड बहुत धीरे धीरे बढता है। उसके

तने का घेरा कोई पचास वर्ष में चार फुट हो पाता है।

झड का पेड़ काँटेदार होता है, जिससे वह भेड़ बकरियो से बचा रहता है। पर उसमे तभी तक काँटे अधिक होते है जब तक पेड छोटा रहता है। बड़ा होने पर, जहाँ वह भेड बकरियों की पहुँच से ऊँचा हुआ कि काँटे कम होने लगते है। पत्ते छोटे छोटे होते है, जिनके सहारे वह कडी गरमी सहन कर लेता है। जब तक नए पत्ते नही निकल आते, तब तक पुराने पत्ते नही गिरते। यही कारण है कि झड का पेड दूर से सदा हरा भरा मालूम होता है। झड का वक्कल मोटा और मटमैले रग का होता है। वह लम्बाई मे फटा होता है। झड का पेड टेढ़ा मेढा होता है। उसका तना कभी सीधा नही होता।

झड बबूल का साथी है। बबूल भी झड की तरह सूखे इलाको मे ही उगता है। बहुत सी जमीनों मे झड और बबूल दोनो होते है। पर बबूल झड का साथ वही तक देता है जहाँ तक मामूली खुश्की होती है। जितना ही अधिक सूखा इलाका होगा, बबूल वहाँ उतने ही कम होगे। यहाँ तक कि बेहद सूखे इलाके मे या उन जगहो मे जहाँ पाला पड़ता है, झड अकेला ही रह जाता है।

झड



झड राजस्थान की मटियाली जमीनों मे उगता है, रेतीली जमीनों मे नहीं। वहाँ लगभग हर खेत के किनारे झड के पेड़ दिखाई देते है। रेगिस्तान या रेतीली जमीन मे 'मेसकिट' बहुत अच्छी तरह

उगता है। मेसकिट विदेशी पेड है, पर वह झड की ही बिरादरी का है।

झड को अलग अलग जगहो पर अलग अलग नाम से पुकारा जाता है। उसे गुजराती मे 'सिमल', या 'सुमरी', सिंधी मे 'कंडी', राजस्थानी में 'खेजड़ा', मराठी मे 'शीमा' या 'सौनदर', कन्नड मे 'बन्नी', तामिल में 'जम्बृ' या 'पाराम्बे', तेलुगू मे 'जम्बी', और वैज्ञानिक भाषा मे 'प्रौसोपिस स्पेसीगेरा' कहते है।

जिस जमीन की मिट्टी नदियो की बाढ से हर साल नम होती रहती है, उस जमीन मे झड बहुत अच्छी तरह उगता है। उसकी मूसल जैसी जडें बहुत गहरी जाती है, और उनके लिए ५०–६० फुट तक गहरे पहुंचकर पानी की सतह पा लेना बहुत आसान होता है।

झड के पत्ते जाडो के अंत मे धीरे धीरे कम होने लगते है। और गरमी शुरू होने पर झड मे नए पत्ते आ जाते है। नए पत्तो के साथ साथ झड मे बसंती रंग के फूलो के ढेरो लटकन निकल पड़ते है। मई जून तक उसमे फलियाँ आ जाती है, जो जुलाई अगस्त तक पक जाती है। बरसात में झड की फलियाँ झड़कर नीचे गिर जाती है और उसके बीज मिट्टी मे मिलकर सड जाते है। झड के सब बीज नही जमते। जो जमते भी है, वे बहुत कठिनाई से।

बारिश मे झड की पौध जगह जगह जम जाती है, और किसान लोग, छोटे पौधो को उखाड़कर खेतो की मेड़ पर लगा लेते है। यदि सिंचाई न की जाए तो छोटे पौधो की बढन बहुत कम होती है।

छोटी पौध को पाले से बचाना जरूरी है। चूहे, बीज और पौध दोनो को ही नुकसान पहुँचाते है। झंड के पेड़ की पत्ती को ढोर, भेड़, बकरी और ऊँट आदि बड़े चाव से खाते है। इसलिए झड का पेड़ लगाने मे उसे जानवरो से बचाने की समस्या ही सबसे बड़ी समस्या है।





गुणकारी और साएदार नीम

हमारे देश में तरह तरह के पेड है, पर नीम जैसा उपयोगी और साएदार पेड़ शायद कोई नही। शायद नीम ही एक ऐसा पेड है जो तराई, और बाढ के इलाको को छोड़कर और सब जगह होता है। नीम का पेड ऐसी जगहो पर भी नहीं होता जहाँ पानी मरता हो। इन तीन तरह की जमीनों को छोडकर नीम ककरीली, पथरीली, ऊबड, खाबड, सूखी, नम, हर तरह की जमीन मे पैदा हो सकता है। पर असल मे वह पच्छिमी भारत के उन इलाकों का पेड़ है जहाँ साल मे लगभग ३० इंच बारिश होती है।

नीम हमारे देश मे लगभग हर जगह पाया जाता है। पर वह इक्का दुक्का ही मिलता है, उसके बन देखने मे नही आते। कुछ लोगो का कहना है कि नीम पहले भारत मे नही होता था। उसे ईरानी या अरब अपने साथ भारत लाए। पर इसका कोई सबूत नही मिलता। नीम को तेलुगू में 'येपा', और तमिल मे 'वेपा' कहते है।

पतझड़ के मौसम को छोड़कर नीम सदा हरा भरा रहता है। बड़ा

होने पर उसके तने के ऊपर का हिस्सा छतरीनुमा हो जाता है। उसकी छाल पतली और खुरदरी होती है। उसका ऊपरी रंग कालापन लिए हुए भूरा, और भीतरी रंग लाली लिए हुए कत्थई होता है। नीम के पेड़ में मोटी मोटी डालियाँ होती है, जिनमें से पतली पतली डालें निकलती है। उन्ही पतली पतली डालो के दातुन बनते है। नीम के पेड में मार्च से अप्रैल तक नए पत्ते आ जाते है, और पुराने पत्ते झड़ जाते है। पर पेड कभी नंगा नही होता। उसके नीचे सदा साया बना रहता है। साए के लिए ही नीम के पेड सडको के किनारे लगाए जाते है। नीम की डाले अप्रैल से मई तक छोटे छोटे सफेद फूलो से ढक जाती है। उन फूलो मे मीठी मीठी सुगन्ध आती है। फूलो के बाद नीम के पेड मे अनगिनत निबोलियाँ आ जाती है, जो जुलाई से अगस्त तक पककर गिर जाती है। लगभग उसी समय से उसके बीज जमने लगते है, और सितंबर के महीने तक नीम के पेड़ों के आस पास की जमीन छोटे छोटे पौधो से ढक जाती है। निबोलियो में आम तौर से एक ही बीज होता है, पर किसी किसी मे दो बीज भी होते है।

अपने आप उगे हुए कुछ ही पौधे बडे हो पाते है। आम तौर से गाय, बैल, बकरी आदि जानवर उन्हे चर जाते है। पर उन पौधो को मिट्टी समेत खोदकर दूसरी जगह रोपना बहुत आसान होता है, और उसे काँटो से रूँधकर जानवरो से बचाया जा सकता है। जानवरो के अलावा नीम के पौधो को पाले और आग से बचाना जरूरी है।

काँटेदार झाड़ियों के बीच नीम का एक पौधा

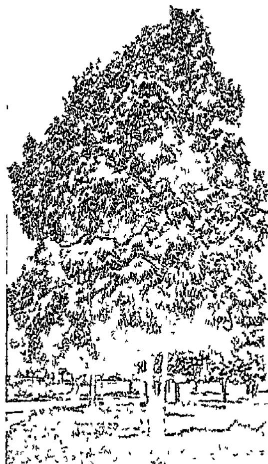


नीम को छोटी उमर मे छाँट दिया जाए तो उसमे नए कल्ले फूट आएँगे। पर पाला मार जाने या जल जाने पर वह मर जाता है। उसमें फिर कल्ले नही फूटते।

नीम की लकड़ी बहुत मजबूत और टिकाऊ होती है। खेती के सामान और घर बनाने मे उसका काफ़ी उपयोग होता है। नीम के पत्तो को उबालकर या जलाकर उससे साबुन और दाँत के मजन बनाए जाते है। नीम के पत्तों के बराबर बीमारी के कीडे मारनेवाली चीज शायद ही कोई हो। पत्ते उबालकर उनके पानी से हर तरह के घाव धोए जाते है। नीम के सूखे पत्ते कपडो को कीड़ों से बचाने के काम आते है। नीम ठढक देता है, खून को साफ करता है, और आँख की रोशनी बढाता है। नीम की छाल, गोद और निबोली भी दवाएँ बनाने के काम मे आती है। उसके बीज से तेल निकलता है। नीम की लगभग हर चीज बडे काम की है। किसी किसी पुराने नीम के पेड से सफ़ेद सफेद रस बहने लगता है। वह रस भी अनेक रोगो की दवा है।

घनी छाँहवाला सुन्दर अशोक

अशोक हमारे देश का पेड नही है। वह भारत को श्रीलका की भेट है। कहा जाता है, लका के राजा रावण ने सीताजी को ले जाकर अशोक वाटिका मे ही रक्खा था।





यह मालूम ही नही होता। उसकी डाले और पत्तियाँ छतरी की तरह होती है। इसीलिए उसके नीचे घनी छाँह रहती है। पत्तियो का रग चटकीला हरा होता है और वे डाले जिन पर पत्ते लदे होते है, दो फुट तक लम्बी होती है। गुलमोहर के लाल लाल फूल बहुत सुन्दर होते है। उनकी लम्बाई चार इच तक होती है। फूलो से फिर फलियाँ निकलती है। फलियाँ भी काफी बड़ी होती है। कोई कोई तो दो फुट तक लम्बी होती है।

गुलमोहर हमारे देश का पेड नही है। उसे फ़ासीसी लोग मेडागास्कर के टापू से लाए थे और उन्होने पहले पहल उसे दक्खिन मे पाडेचेरी जैसी जगहो पर लगाया था। पर अपनी शोभा के कारण वह देश भर मे फैल गया।

गुलमोहर का वैज्ञानिक नाम 'प्वाइन्सियाना रेगिया' है। अग्रेजी मे उसे 'गोल्ड मोहर' कहते है, जिससे हिन्दी मे 'गुलमोहर' बना है।

सौराष्ट्र मे गुलमोहर की एक और नस्ल होती है जिसे 'वरदे पहाडियाँ' कहते है। उसके फूल बसती और सफेद होते है। उसका पेड गुलमोहर के पेड से छोटा होता है, और उन जगहो मे उगता है जहाँ बारिश कम होती है। अच्छी और नम जमीन मे वह बहुत तेजी से बढता है।

गुलमोहर की पौध लगाना कठिन नही होता। अगर फली मे से बीज को निकालकर उसे चौबीस घटे गरम पानी मे भिगोने के बाद बोया जाए तो जल्दी अकुर फूट आते है। बीज का छिलका इतना सख्त होता है कि बिना भिगोए बोने से अँखुआ छिलके को आसानी से फोड कर बाहर नही निकल पाता। अँखुए फूटने के बाद पेड तैयार होने मे बस एक ही बाधा रह जाती है, और वह है पाले का खतरा। पौधे को पाले से बचाना कोई कठिन काम नही है। उसे घास से ढक देने से पाले का खतरा दूर हो जाता है।



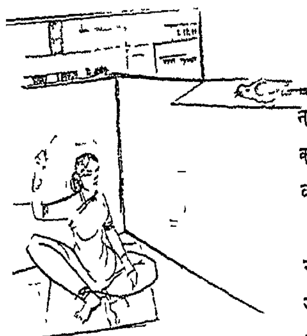
गुलमोहर का पेड़ बहुत दिनों तक नहीं रहता, क्योंकि उसकी जडे ज़मीन में बहुत गहरी नहीं जाती। वह आंधी या तेज हवा में उखड सकता है।

गुलमोहर बस देखने में ही भड़कीला होता है। उसकी लकड़ी किसी काम में नहीं आती। यहाँ तक कि उसका ईंधन भी अच्छा नहीं होता। फिर भी अपनी सुन्दरता के बल पर वह लोकप्रिय बना हुआ है।

देसी कौआ या काग



भारत, पाकिस्तान, श्रीलका और बर्मा मे कौए बहुत होते है। भारत मे तो कौओ से अधिक तादाद शायद ही किसी और पक्षी की हो। शायद ही कोई घर, गांव या शहर होगा जहाँ दिन मे अनेक बार "कॉव कॉव" की आवाज सुनने को न मिलती हो। हवाई अड्डा हो या समुन्दर का किनारा, होटल हो या सराय, घर हो या खेत, रेलवे स्टेशन हो या नदी का घाट हर कही कौआ अवश्य विराजता मिलेगा, चाहे दूसरा कोई पक्षी मिले या



...मुंडेर पर से कौआ उड़ाने का एक दृश्य

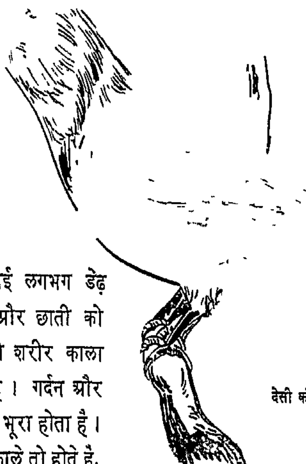
न मिले। यहाँ तक कि जो जगहें समुन्दर की सतह से ४ हजार फुट की ऊँचाई पर है, वहाँ भी उसकी पहुँच है।

पर एक शर्त है। कौए वहीं रहेंगे, जहाँ आदमी हो। आदमी अगर जंगल या रेगिस्तान में पहुँच जाए, तो पीछे पीछे कौआ भी जरूर पहुँचेगा और अगर सुन्दर से सुन्दर राजमहल मे भी किसी आदमी का वासा न हो, तो कौआ वहाँ पर भी न मारेगा। इसीलिए पुराने लोग कहा करते हैं कि जहाँ भी कौए दिखाई दें जाँय, समझ लो कि आदमी वहाँ जरूर होगा या आनेवाला होगा। शायद काग के इसी गुण पर रीझकर भारत की स्त्रियों ने यह मान लिया है कि घर की मुंडेर पर कौए का बैठना किसी परदेसी मेहमान के आने का लक्षण है। देहातो मे यह बात इस तरह मान ली गई है कि कहीं कहीं तो घर की मुंड़ेर पर से कौए को उडाने का रिवाज पड गया है। लोगों का, खास तौर से औरतो का, ख्याल है कि हो सकता है, कौआ मुंड़ेर पर एक बार यो ही बैठ गया हो। इसलिए उड़ाकर देख लो कि वह फिर मुँड़ेर पर बैठता है कि नही। अगर वह दूसरी बार भी बैठ जाए तो निश्चित समझो कि कोई पाहुना आ रहा है। जिस समाज मे ऐसी धारणा मौजूद हो उस समाज के कवि भला कैसे पीछे रह सकते थे ? हिन्दी के अनेक कवियो की विरहिणी नायिकाएँ कौए को 'पिय का संदेसा लानेवाला' कहती हुई मिलेंगी। प्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत की नायिका,

नागमती, कहती है—

"पिय सो कह्यो सदेसडा,
हे भौंरा ! हे काग !"

चोंच से लेकर



देसी कौआ

दुम तक कौए की लंबाई लगभग डेढ़ फ़ुट होती है। गर्दन और छाती को छोडकर उसका बाकी शरीर काला और चमकीला होता है। गर्दन और छाती का रग मटमैला भूरा होता है। छाती से नीचे के अंग काले तो होते है, पर चमकदार नही होते। उसी तरह पख भी काले होते है, पर उन पखो के किनारो पर नीली, हरी या बैगनी चमक होती है। कौओं की कई जातियाँ होती है, लेकिन उनमे बहुत कम फर्क होता है। काले पखों पर चमकने वाले रगो के फर्क से ही उनकी जाति पहचानी जाती है।

कौए आम तौर से मैदानो मे रहते है। कभी कभी वे आदमी के पीछे पीछे नीलगिरि और हिमालय पहाड़ के ६–७ हजार फुट ऊँचे स्थानो पर भी पहुँच जाते है। पर वे वहाँ टिकते कम है, क्योकि एक तो वहाँ की सर्दी उनसे नही सही जाती, दूसरे उन्हे अपने पहाडी भाई बदो से खतरा रहता है।

कौए को मनुष्य की तरह सगठन का यानी मिलकर रहने का शौक है। वे झुड के झुड एक साथ रहते है। इतना ही नही वे अक्सर हजारो की तादाद मे एक ही पेड पर या आसपास के कुछ पेडो पर बसेरा करते है, और दूसरे दिन सवेरे साथ साथ ही अपने दिन के धधे पर रवाना हो जाते है।

सबेरे झुड के झुड कौओ का किसी जगह से गुजरना और शाम को उसी तरह झुड के झुड लौटना किसने न देखा होगा ? सुबह को कौए तेजी से गुजर जाते है, क्योकि वे भूखे होते है, और उन्हे चारा चुगने की जल्दी होती है। पर शाम को बसेरे की जगह पहुँचने के लिए उनकी वापसी दिन ढलने से घंटे दो घटे पहले से शुरु होकर अधेरा होने तक जारी रहती है। शाम को किसी गॉव के बाहर खडे हो जाइए तो आसमान मे जहाँ तक नजर पहुँचेगी, वहाँ तक पाँति की पाँति कौए ही दिखाई देगे।

आदमी की सगत मे रहते रहते कौए ढीठ और चोर हो गए है। इतना ही नही वे बटमारी भी करते है। उनका चुपचाप आँगन या कमरे मे घुसना, बराबर चौकन्ना रहना और देखते देखते झट हाथ से रोटी छीनकर उडनछू हो जाना आए दिन की बाते है। दूकानो से खाने की चीजों को ले भागना, उनके लिए मामूली सी बात है। बेचारे खोंचेवालो को तो कौओ से पनाह मॉगते ही बीतता है। यहाँ तक कि वे रेल के डिब्बो मे से भी मुसाफिरो के हाथ से खाने की चीजे झपट ले जाते हैं। और तो और कौए भगवान श्रीकृष्ण के साथ भी शरारत करने से नही चूके। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि रसखान ने लिखा है -

"काग के भाग कहा कहिए
हरि हाथ सो ले गयो माखन रोटी।"

श्रीकृष्ण के साथ तो कौए ने शरारत भर की, पर भगवान राम के साथ तो उसने बदतमीजी भी की। रामायण मे एक कथा है कि जब श्रीरामचन्द्र जी लक्ष्मण और सीता के साथ बन मे घूम रहे थे, तब जयंत नाम के एक ढीठ कौए ने सीताजी के शरीर मे चोच मारकर घाव कर दिया था, जिसके लिए श्रीराम ने उसकी एक ऑख फोडकर उसको सजा दी थी। यह कथा



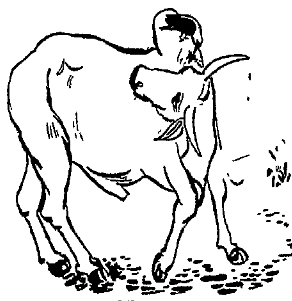
पुराणो मे भी आती है। जयत नाम के उस कौए को 'शक्रज' यानी इंद्र का बेटा बताया गया है, और वैसे भी शक्रज का अर्थ कौआ होता है। शायद इद्र का बेटा कहकर प्रतीक रूप से यह बताया गया है कि कौए मे बिगडे हुए राजकुमारो के भी गुण होते है।

शायद राम द्वारा जंयत की एक आँख फोड़ी जाने के बाद से ही यह लोकोक्ति शुरू हुई कि कौए एक आँख के होते है। आम लोगों का ऐसा विश्वास है कि कौए की दोनो आँखो मे एक ही पुतली होती है, और उसी पुतली के जरिए वह कभी एक आँख से देखता है तो कभी दूसरी आँख से। इस प्रकार दोनो आँखो से देखता हुआ मालूम होते हुए भी वह किसी एक ओर देखता होता है। यह बात कौए के शरीर की बनावट को देखते हुए सच नही है। मगर उसके चौकन्ने रहने की इससे अच्छी और तारीफ नही हो सकती।

कौआ स्वभाव से ही सदा चौकन्ना रहकर अपनी ताक मे लगा रहनेवाला पक्षी है। इसीलिए कुछ पुराने कवियो ने अच्छे विद्यार्थी के पाँच लक्षणो मे से एक को 'काक-चेष्टा' कहा है। 'काक-चेष्टा' का अर्थ है, चौकन्ना रहकर अपने काम मे ध्यान लगाए रहना।

ढीठ और निडर कौए से सिर्फ मनुष्य ही नही जानवर भी परेशान रहते है। गृद्धराज को तो देखकर दया आती है। वेचारे कौओं के गिरोह मे मन मारे बैठे रहते है और कौए उनकी पीठ पर फुदक फुदक कर उनके नाक मे दम कर देते है। बैलो और घोडो की पीठ पर भी कई कई कौए इकट्ठे बैठ जाते है, और कभी कभी काठी या जुए के कारण नर्म पडी हुई खाल को खोद खोद कर घाव कर देते है। पर कभी कभी कौवो का आना

" नर्म पडी खाल को खोद खोदकर "



जानवर पसद भी करते है। घोडो और बैलो की पीठ, गर्दन तथा पेट पर बहुत से कीडे और मक्खिया अड्डा जमा लेती है और उन्हे बुरी तरह काटती है। ऐसे समय जब कौए पहुंच कर मक्खियो और कीडो को एक एक करके चट करने लगते है तो बैल, घोडे आदि जानवर बहुत सुख मानते है।

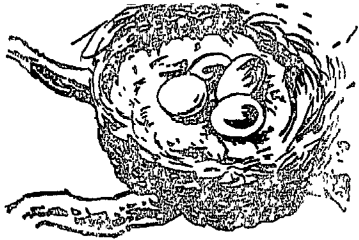
कौआ चोरी बटमारी करके स्वय तो लाभ उठाता ही है, पर कभी कभी आदमी को भी लाभ पहुँचाता है। इतना ही नही आदमी को लाभ पहुँचाने मे कभी कभी वह खुद हानि भी उठाता है। कौआ आदमी के रहने की जगह के ऐसे ऐसे कोनो की गदगी साफ कर देता है, जहाँ कभी कोई भंगी झाँके भी नही। यहा तक कि छोटे मोटे मरे हुए जानवर भी सड़कर बीमारियाँ फैलाने के लिए उससे नही बचते। कौए उन्हे भी साफ कर देते है। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास ने कौए को 'चाडाल पक्षी' यानी 'डोम का काम करने-वाला पक्षी' कहा है। इस तरह वह अनेक बीमारियो से आदमी की रक्षा करता आया है। पर शायद इसी काम मे वह खुद तरह तरह की बीमारियो का शिकार हो जाता है। यो तो आम तौर से कौए की उम्र लगभग ४० साल की होती है, पर वे लगातार बडी सख्या मे मरते रहते है। जिन बाग-बगीचो मे रात के समय कौए बसेरा लेते है, वहाँ पेडो के नीचे और डालियो पर बहुतेरे मुर्दा कौए पाए जाते है। कारण यही है कि उन्हे तरह तरह की बीमारियाँ लगती रहती है। दूसरा कारण यह भी है कि बाज, गरुड, उल्लू आदि बहुत से पक्षी कौओ की जान के गाहक होते है।

कौओ से आदमी और जानवर सभी परेशान रहते है। पर चिडियो की एक जाति कौओ को सदा से बेवकूफ बनाती आई है और बनाती रहेगी। वह है कोयल। कोयल का वश कौए को बेवकूफ बनाकर ही बढता है।

कौए का पीछा करते हुए बाज, गरुड और उल्लू







कौए का घोंसला

कोयल अपने अंडे घोंसले में नही जमीन पर देती है, और उन अडों को फ़ौरन ही दूसरे पक्षियों के घोंसले में पहुंचा देती है, ताकि सेने का झंझट दूसरों के सिर रहे। कोयल की इस चालाकी के शिकार सबसे अधिक कौए ही होते है। वे कोयल के अंडों को अपना समझकर सेते है। अंडे फूटने पर बच्चों को पालते-पोसते रहते है, और बच्चे बड़े होकर उन्हें धत्ता बताकर चल देते हैं। इसीलिए कोयल और कौए में पुश्तैनी दुश्मनी चली आती है, और कौओ के झुड अक्सर कोयल का पीछा करते हुए देखे जाते है।

कौए और कोयल के अंडे लगभग एक जैसे होते है। मादा कौआ सिर्फ़ एक बरस की हो जाने पर अंडे देना शुरू करती है, और एक बार में ढेरों अंडे देती है। कौए के अडे आकार में १.४५×१.०५ इंच के होते है। भारत के उत्तरी और पश्चिमी भागों में मादाए १५ जून से १५ जुलाई तक अंडे देती है। दूसरी जगहो पर वे अप्रैल या मई में भी अडे देती है।

नर कौए अंडों को पालने के लिए पेडों की फुनगियो के पास घोंसले बनाते है। तरह-तरह की लकडियो को जोड़-गांठकर वे कटोरे की शक्ल के घोंसले तैयार कर लेते हैं। कोई-कोई घोंसला तो इतना खूबसूरत होता है कि जैसे किसी कारीगर ने उसे गढ़कर बनाया हो। कौए घोसले के अन्दर चारों ओर ऊन, रुई, गूदड़, घास, तिनके आदि लगाकर उन्हे बहुत गुलगुला और आरामदेह बना लेते हैं। कही-कही कौओ के घोंसले तारो से बने हुए भी मिलते हैं।



लंगूर

हमारे देश मे बदरो की सख्या बहुत है। कुछ ऐसे होते है, जिनकी दुम आम बदरों की दुम से कही अधिक लम्बी होती है। ऐसे बदरो को लगूर कहते है। लगूर की शारीरिक बनावट दूसरे बदरों से अधिक नाजुक होती है।

लंगूर कई तरह के होते है। ये हमारे देश में प्रायः सभी जगह हिमालय की तराई, बम्बई, गुजरात, पश्चिम बगाल और दक्षिणी भारत तथा श्रीलंका मे पाए जाते है। देश के विभिन्न भागों में इन्हे विभिन्न नामों—पहाडी, गूनी, बाद्रा, वाना, कंडामुचु आदि—से पुकारा जाता है। इनके अलावा असम में टोपी वाले लंगूर भी मिलते हैं। इनके सिर पर बालो की टोपी-सी बनी होती है।

लगूर के माथे पर उल्टे बालो की एक तह होती है, जो छज्जे की तरह माथे को ढके रहती है। गालो पर के बाल इतने लम्बे नही होते कि कानो को ढक ले। उसके कान भी कुछ बडे होते हैं। उसके शरीर का रंग हल्का भूरा होता है, पर चेहरे, कान, हाथ और पैर का रंग कोयले की तरह काला होता है। उत्तर भारत में पाए जाने वाले लंगूरो के हाथ-पैरो का रंग एकदम काला होता है, परन्तु दक्षिणी भारत के लगूरों का रंग



भूरा। दक्षिण-पूर्वी भारत के शुष्क इलाकों में पाए जाने वाले लंगूर लगभग सफेद रंग के होते है। हिमालय प्रदेश मे पाए जाने वाले लंगूर वजन

मे भारी और आकार मे बडे होते है। इनके हाथ-पैर एकदम सफेद होते है। लंगूर की दुम की लम्बाई शरीर की लम्बाई से भी अधिक होती है। औसत दर्जे के लंगूर की लम्बाई २५ इंच तक होती है। कई लंगूरों की दुम की लम्बाई कही-कही ३८ इंच तक भी पाई गई है।

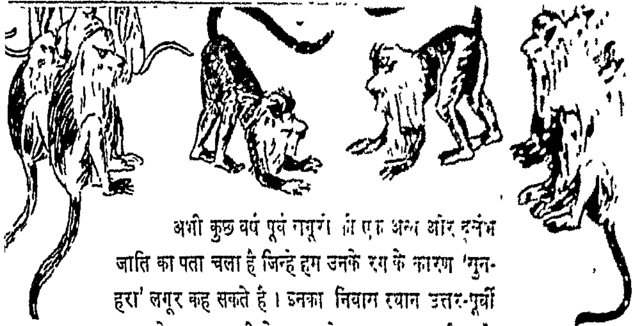
अधिकतर लंगूर झुड बनाकर रहते हैं। छोटे-छोटे बच्चे मां के साथ ही रहते है। उनमें जो बहुत छोटे-छोटे होते हैं, वे मां के पेट से चिपके रहते हैं। झुड का बुड्ढा नर प्रायः एकान्त जीवन बिताता है। कभी-कभी कुछ मादाए अपने बच्चों के साथ एक अलग टोली बनाकर रहने लगती है। शायद इसीलिए आम लोगो का ख्याल है कि नर और मादा लगूरों की अलग-अलग टोलियां होती हैं। पर असल में ऐसा है नही।



पेड़ो की मुला-यम टहनियां और पत्तियां लगूरो का मुख्य भोजन हैं। परन्तु बाजारो और बस्तियो मे वे हर तरह के अनाज खाते हैं। वे स्वभाव से सीधे होते है और छेडे जाने पर ही किसी पर हमला करते हैं।

लंगूर की आवाज बहुत तेज होती है। अक्सर जंगलों मे उसकी चीख-पुकार सुबह-शाम सुनाई देती है। खुशी और खेल-कूद की मस्ती में वह एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर जोर-जोर से चीखता हुआ उछलता, कूदता और कुलाचे भरता है। क्रोध में होने पर या किसी शत्रु को देख लेने पर वह बड़ी भद्दी आवाज में चीखता है, जिससे घृणा और भय दोनों प्रकट होते है। शेर के शिकारी इस आवाज को अच्छी तरह पहचानते हैं। शिकारियों को देखते ही लंगूर एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूदता और चिल्लाता हुआ उस ओर चल पड़ता है जिधर शेर गया होता है। इस प्रकार शेर का पता लगाने में वह शिकारियों का सहायक सिद्ध होता है।

लंगूरों की टोलियों में अक्सर लड़ाई हुआ करती है। उनकी लड़ाई का ढंग बड़ा मनोरंजक होता है। लड़ाइयां प्राय: सायंकाल और अधिकतर रहने की जगह या भोजन के स्थान के लिए होती है। दो टोलियों में लड़ाई शुरू होने पर सबसे पहले एक टोली का सरदार दूसरी टोली के सरदार से कुश्ती लड़ता है। कुश्ती काफी देर तक होती रहती है, और दोनों टोलियों के लंगूर आमने-सामने जमीन पर बैठे हुए चुपचाप देखा करते है। जब किसी टोली का सरदार बहुत घायल होकर हारने लगता है, तब जीतने वाले सरदार की टोली दूसरी टोली पर टूट पड़ती है। फिर दोनों टोलियों में गुरिल्ला युद्ध शुरू हो जाता है। कमजोर टोली के लंगूर भाग खड़े होते हैं, या अपने सरदार को छुड़ाने की कोशिश करते है। अन्त मे लड़ाई के मैदान का अनुशासन भंग हो जाता है। जीती हुई टोली हारी हुई टोली के लंगूरों को हिरासत में लेने की कोशिश करती है, और जिन्हे पकड़ पाती है उन्हे अपनी कैद मे ले लेती है।



अभी कुछ वर्ष पूर्व लगूरों की एक अन्य और दुर्लभ जाति का पता चला है जिन्हे हम उनके रग के कारण 'सुन-हरा' लगूर कह सकते है। इनका निवास स्थान उत्तर-पूर्वी भारत मे ब्रह्मपुत्र नदी के उत्तर मे भारत-भूटान सीमा से लगता वन-प्रदेश है।

'सुनहरे' लगूरो का रग हल्का सुनहरा होता है। इनका रहन-सहन और अन्य आदत अन्य लंगूरों की तरह ही होती है। ये भी झुण्ड बनाकर रहते है।

एक अनुमान के अनुसार इस जाति के लंगूरों की कुल सख्या ५५० के लगभग आकी गई है।

जिराफ़

जिराफ एक चौपाया है जो केवल अफ्रीका मे पाया जाता है। वह खुर वाले चौपायो की जाति का है, पर रूप-रग मे दूसरे चौपायों से बिल्कुल भिन्न होता है। उसकी गर्दन और अगले पैर बहुत लम्बे होते है। अपने बच्चो को दूध पिलाने वाले चौपायो मे जिराफ का कद सबसे ऊंचा होता है। शरीर का अगला भाग पिछले भाग से काफी ऊंचा और उठा हुआ होता है। सिर कोमल और लम्बा होता है। आखे बड़ी-बडी होती है, जिसकी वजह से वह दूर तक देख सकता है। उसके दो सीग होते है और दोनों आंखो के बीच माथे के नीचे सीग की तरह उभरी हुई एक हड्डी होती है। उस हड्डी को कुछ लोग तीसरा सीग भी कहते है। आंखो से ऊपर का भाग काफ़ी उभरा हुआ

होता है। कान नुकीले और नथुने बड़े बड़े होते हैं। अपने नथुनों को वह इच्छानुसार बद कर सकता है। उसकी जीभ काफी लम्बी होती है, जो दूर तक मुँह से बाहर निकल आती है। वह अपनी जीभ से खुराक को अच्छी तरह पकड़ सकता है। उसकी गर्दन पर काफी दूर तक बाल होते है। उसकी पूंछ काफी लम्बी होती है। दुम के सिरे पर बालो का एक गुच्छा होता है। अपनी शक्ल सूरत की वजह से उसे अर्द्ध रेगिस्तानी इलाकों मे रहने मे बडी आसानी होती है।



जिराफ दो तरह के पाए जाते हैं। दक्खिनी अफ्रीका के जिराफ का रग हल्का भूरा होता है। उसके पूरे शरीर मे जगह जगह पर गहरे बादामी या गहरे भूरे रग के धब्बे होते है। चेहरा बिल्कुल भूरे रग का होता है। शरीर और पैरो के निचले भाग का रग लगभग सफेद होता है। उस भाग मे धब्बे नही होते है। उत्तरी और मध्य अफ्रीका मे बादामी रग का जिराफ पाया जाता है। नर जिराफ की ऊँचाई सिर से पैर तक १८–१९ फुट होती है। मादा नर से एक आध फुट छोटी होती है।

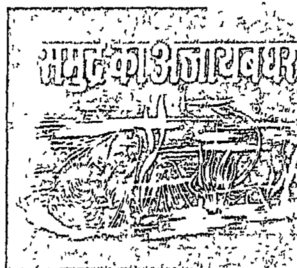
जिराफ टोलियो मे रहते है। यह आवश्यक नही कि किसी टोली के सब जिराफ एक ही परिवार के हो। कम से कम आठ जिराफो की एक टोली होती है।

जिराफ का शिकार खेलना अफ्रीका के बाज शिकारियो का खास मनोरंजन है। वे उसके लिए तेज दौड़नेवाले घोडे पालते है। जिराफ घोडे से बहुत तेज दौडता है। मामूली घोडे तो उसकी गर्द भी नही पा सकते। उसकी खाल बडी सुन्दर और कीमती होती है।

लाखो बरस पहले जब दूध पिलाने वाले पशु विकास की शुरू की अवस्था मे थे, तब ससार के बहुत से भागो मे जिराफ पाए जाते थे। उस समय युरोप, यूनान, एशिया, दक्खिनी अरब, ईरान, उत्तरी भारत मे हिमालय की तराई, और चीन मे मिलते थे। ज्यो ज्यो पृथ्वी पर और आस पास के वातावरण मे परिवर्तन होते गए, त्यो त्यो हालात उनके खिलाफ होते गए। उनकी नस्ल बढने के बजाय घटती गई। आज से हजारो साल पहले उनकी नस्ल एशिया और युरोप से मिट गई। उनकी हड्डियाँ मनो मिट्टी के नीचे दब गई, जो जमीन की खुदाई के दौरान मे कही कही निकल आती है। लेकिन अफ्रीका मे जिराफ की नस्ल अब तक बाकी है। अफ्रीका मे भी उनकी आबादी पहले पूरे महाद्वीप मे फैली हुई थी। परंतु अब वे मध्य, पूर्वी और दक्खिनी अफ्रीका के कुछ भागो मे ही पाए जाते है। अनुमान है कि दिन पर दिन गिरती सख्या के कारण किसी दिन ये सुन्दर पशु दुनिया से बिल्कुल ही मिट जाएँगे। उनकी कमी का एक कारण यह भी है कि उनकी कीमती खाल की लालच मे अफ्रीका के शिकारी उनका शिकार खेलते रहे है, और उनके बचाव या उनकी नस्ल के बढाने का कोई उपाय नही किया गया। अब पूर्वी अफ्रीका की कीनिया सरकार ने अपने देश मे जिराफ के शिकार पर पाबंदी लगा दी है। इस राष्ट्रीय पूँजी को सुरक्षित रखने के लिए एक राष्ट्रीय पार्क बनाया गया है। अफ्रीका में पाए जाने

वाले सभी जानवर इस पार्क मे रक्खे गए है। वह पार्क मीलो लम्बा चौडा एक संरक्षित जगल है, जो कीनिया से ६ मील की दूरी से शुरू होता है। आशा की जाती है कि कीनिया सरकार की इस योजना से जिराफ की नस्ल दुनिया मे बनी रहेगी।

जीव जन्तु और पौधे



बिना रीढ़वाले समुद्री जीव

समुद्र के अथाह जल मे भी एक दुनिया आबाद है, जिसमे शायद समुद्र के बाहर की दुनिया से भी अधिक जीव रहते है। उस दुनिया मे कही ऊँचे ऊँचे पहाड है, तो कही लम्बे चौडे समतल स्थान, और कही बहुत गहरे बडे बडे खड्ढ। उसमे हजारों तरह के जीव पाए जाते है। झुड के झुड, रग विरगे और चित्र विचित्र। वे कही समुद्री मोथो के जगल से लगते है, तो कही घास के तैरते हुए मैदान जैसे, और कही फल फूल की तरह एक जगह





ये बाग में खिले फूल नहीं हैं, बल्कि जानलेवा समुद्री जीव (एनीमोन) हैं।

इसे विस्तृत बाग जैसे। समुद्री जीव दो तरह के होते हैं, रेंगने और तैरनेवाले।

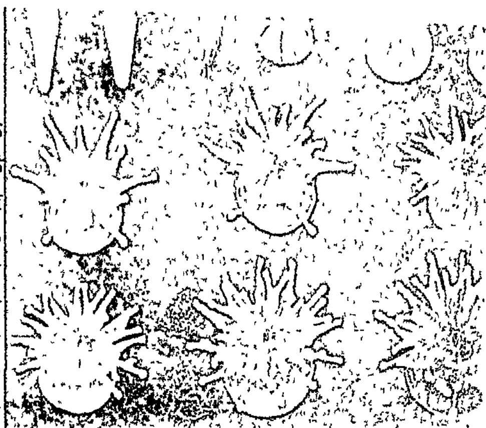
हजारों छोटे छोटे पौधों और मरे हुए जीवों के सड़ने गलने से समुद्र की तली में कीचड़ की तह बन जाती है, जो कहीं कहीं १०० फुट तक मोटी होती है। जिन बहुत ही नन्हे अणु जैसे जीवों के सड़ने गलने से कीचड़ बनता है, उन जीवों के हाथ, पाँव वगैरह नहीं होते। उनका शरीर बस एक गोल जर्रे जैसी जानदार चीज होता है, जिसे खुर्दबीन से ही देखा जा सकता है। इस जाति के बहुत से जीवों के शरीर में प्रकाश निकला करता है। उनमें से कुछ सुन्दर फूल जैसे होते हैं, और कुछ की खाल पर चाँदी के सिक्कों जैसी गोल गोल चित्तियाँ होती हैं। उन्ही जर्रों जैसे कीटाणुओं की जाति के कुछ बडे जीव भी होते हैं, जो एक कोठ के समुद्री जीव कहलाते हैं।

समुद्र की तली में रहकर बैठे हुए कीटाणु खुर्दबीन से देखने पर अलग अलग नमूने की कढ़ाई बुनाई जैसे दिखाई देते हैं।





एक कोठ के जीवो के अलावा समुद्र मे अनेक कोठ के जीव भी बहुत पाए जाते है। मूंगे की जाति का स्पज उन जीवो का सबसे सादा रूप है। कुछ स्पजो



मूंगा जाति के विभिन्न जीव

का ढॉचा काफी कडा होता है, और कुछ मुलायम। स्पज के शरीर मे कई हिस्से होते है। उन सब हिस्सो के अलग अलग काम है। उन पर अक्सर चमकीले रगो (लाल, बैगनी, नारगी, पीले और हरे) की धारियाँ होती है। स्पज पैदा होने के बाद कुछ ही घटे तक चलता फिरता है। उसके बाद पौधो की तरह किसी एक जगह पर जम जाता है।

एक तरह का स्पंज समुद्र के बहुत गहरे जल मे रहता है। वह बडा रग बिरगा होता है। इसलिए उसे 'पुष्प वैदल' (अनेक दलोवाला फूल) कह सकते है। उसका खूबसूरत ढॉचा चमकीले रेशो से गुँथा होता है।

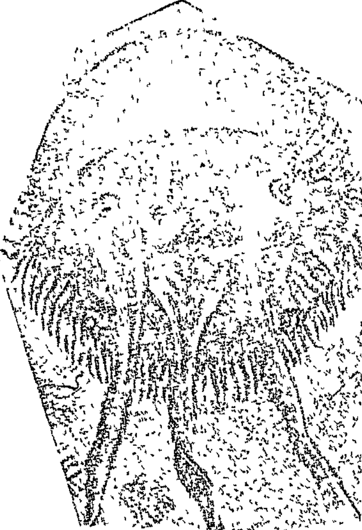
समुद्री जीवो की एक जाति 'आन्तरगुही' कहलाती है। आन्तरगुही का अर्थ होता है जो किसी चीज के अन्दर रहता हो। उस जाति के प्राणियों का ढॉचा कोमल और थैलीनुमा खोखला होता है, जिसमे रेशों

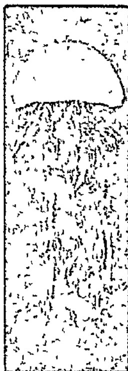
से ढका हुआ एक मोहरा होता है। उन जीवों में स्पंज से अधिक हरकत होती है। वे एक स्थान से दूसरे स्थान तक जा सकते हैं। आन्तरगुही जाति के कुछ जीव काफी कड़ा खोल बनाकर रहते हैं। 'कुसुमाभ' और मूंगों को 'पुष्पजीव' कहा जाता है, क्योंकि वे फूलों की तरह रंगीन और खूबसूरत होते हैं। कुसुमाभ का अर्थ है, जिसकी आभा फूलों की तरह हो। भड़कीले रंगोंवाले उन जीवों की बनावट 'डैजी' नाम के फूल की तरह होती है, और वे उथले जल में जमीन पर फैलते हैं। पुष्प जीव के मुँह पर बहुत से नुकीले रेशे होते हैं। उन रेशों से पुष्पजीव अपनी खुराक हासिल करता है। कुसुमाभ अलग अलग रहते हैं। किन्तु मूंगे बस्तियाँ सी बनाकर एक साथ रहते हैं। छोटे मूँगे कई रंग के होते हैं। लम्बे गुब्बारेनुमा लाल, और



म जैसा मूंगा

बैंगनी मूंगे एक दूसरे से बराबर दूरी पर सीधी कतारों में फैलते जाते हैं। दूसरी तरह के मूंगे पेड़ की शाखाओं की तरह फैलते हैं। जेली मछली भी उसी प्रकार का एक मूंगा होती है। उनके अलावा कुछ मूंगे पंखे की तरह, कुछ पुराने ढंग के पाँखदार कलम की तरह और कुछ अँगुलियों की तरह, फैलते हैं। कुछ मूंगे ऐसे भी पाए जाते हैं, जो चट्टानों और टापुओं को जन्म देते हैं। समुद्र में एक





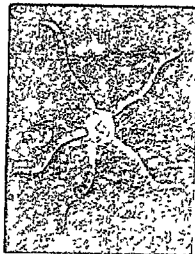
पुर्तगाली युद्ध मानव

तरह के छोटे छोटे, रंगीन परतु जहरीले जीव भी पाए जाते है, जिनको 'पुर्तगाली युद्ध मानव' कहा जाता है।

चमकने और रग बदलनेवाले कीडो की एक दूसरी नस्ल भी होती है। वे वरुण जाति के कीडे कहलाते है। उनका रग कॉसे की तरह, शरीर रोएँदार और अँगूठीनुमा होता है। वे मूँगो, स्पजो और आन्तरगुही जीवो से भी अधिक चल फिर सकते है। समुद्र मे सुनहरे रग के चूहे भी रहते है, उनमे यह खूबी होती है कि चलते समय उनके सुनहरे रोएँ गहरे नीले रग के दिखाई पडते है।

समुद्र मे एक तरह के ऐसे जीव भी है, जिनकी खाल पर कॉटे होते है। वे 'शल्यपृष्ठ' जाति के जीव कहलाते है। शल्य का अर्थ होता है कॉटा और पृष्ठ पीठ को कहते है। इस तरह शल्यपृष्ठ का मतलब हुआ—वह जीव जिसकी पीठ पर कॉटे हो। तारक मछली, ब्रिटल स्टार, समुद्री लिली, फ़ेदर-स्टार, समुद्री साही और समुद्री खीरा 'शल्यपृष्ठ' जाति के खास जीव है। उन सबकी बनावट पॉच कोनेवाले सितारे की तरह होती है।

'ब्रिटल स्टार' नामक मछली



यह बात दूसरी है कि कुछ जीवो की बनावट मे यह रूप साफ साफ दिखाई नही देता। उस जाति के बहुत से जीवो के शरीर मे न तो अगले पिछले भाग होते है, और न दाएँ बाएँ भाग ही होते है। पांच कोनोवाले तारे जैसी बनावट-वाले उन जीवो के शरीर के निचले हिस्से मे छोटी छोटी नलियो की कतारे होती है। उन नलियो के छोर पर बारीक रेशे होते है, जिनमे वे अपनी खुराक हासिल करते है। तारक मछली उन नलियो के सहारे ही चलती फिरती है। शरीर के निचले भाग के बीचोबीच उसका मुँह होता है। तारक मछली के शरीर के चारो ओर एक खोल सा मढा रहता है। शरीर के अन्दर हड्डियों का ढाँचा नही होता है। लिली समुद्र मे रेंगती भी है और तैर भी सकती है। लिली जाति के बहुत से जीव बडे बडे घोघो और पत्थरो पर चिपक जाते है। उनमे से कुछ अपने छोटे छोटे रेशो के कारण पौधो की तरह मालूम पडते है। समुद्री साही की बनावट सतरो, अडो या मोटे बिस्कुटो से मिलती जुलती है, क्योकि शरीर की पाँचो हड्डियो से मिलकर बना हुआ उसका खोखला शरीर सतरे की तरह गोल भी होता है और कोई कोई बिस्कुट की तरह चपटा भी। उसी मे से काँटे और नलियोनुमा पैर निकले होते है। समुद्री खीरा एक ऐसा जीव है, जो बनावट मे सुअर के मास के लम्बे टुकड़े की तरह होता है। उसकी खाल चमडे की तरह होती है। शरीर के एक ओर उसका मुँह होता है, जो नलियो और ऐसे रेशो से ढका रहता है, जिनसे उसे बाहरी चीजो का अनुभव होता रहता है।

कोमल शरीरवाली जाति के प्राणियो के शरीर पर एक कड़ा गिलाफ सा चढा होता है। दूसरे जीवो के मुकाबले मे उनके शरीरके भिन्न भिन्न हिस्से अधिक विकसित होते है। दूसरे जीवो को देखते हुए उनके शरीर मे भोजन

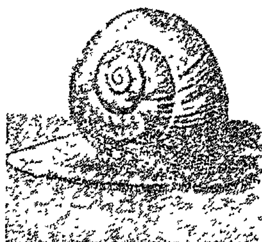


शख जाति का घोघा

पचाने और नस-नाडियों का अधिक अच्छा प्रबध है। उनके शरीर मे दिल, खून दौडने-वाली रगे, और गलफड़ होते है। उनमे से बहुतो के आँखे भी होती है। रग बिरगे घोघे, स्लग, स्नेल मछली, स्क्विड जाति की काला रग छोडनेवाली मछलियाँ, दस सिरोवाले केकडे, और आठ भुजाओ वाले जीव इसी जाति मे आते है। काला रग छोडनेवाली मछलियो की दस भुजाएँ होती है, जिनमे से दो काफी लम्बी होती है। उन दो भुजाओ से वह मछली हाथो का काम लेती है। वे भुजाऐं काफी तेजी से अपने आहार का शिकार करती है। वे मछलियाँ अपने शरीर से काली स्याही के समान 'सेपिया' नाम

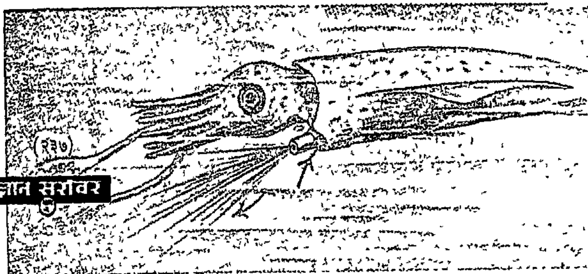


स्लग



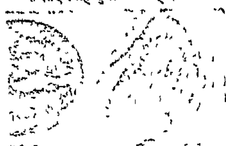
रोमन जाति की स्नेल मछली

साधारण किस्म की स्क्विड जाति की मछली, जिनमें से कई ५० से ६० फुट तक लम्बी होती हैं।



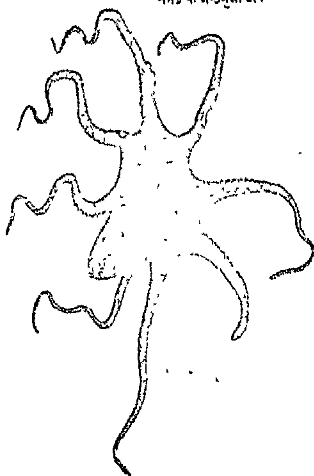
का एक काला पदार्थ छोड़कर अपने आस पास के पानी को रंग देती है, और अपने को उसमें छिपाकर शत्रुओं की आँखों में धूल झोंकती है। आठ भुजाओंवाली जाति के दैत्याकार जीव ३० से ५० फुट तक लम्बे होते हैं। ये आठभुजी दैत्य बिना रीढ़वाले प्राणियों में सबसे बड़े जीव हैं। ये जीव अपने ताकतवर पैरों से नावों और जहाजों को नुकसान पहुँचा सकते हैं। इनके अलावा, समुद्र में 'सन्धिपाद' जाति के जीव भी अधिक पाए जाते हैं। सन्धिपाद उन जीवों को कहते हैं, जिनके शरीर के हिस्से जुड़वाँ होते हैं। इन जीवों के कोमल शरीर की रक्षा के लिए उस पर हड्डियों का कड़ा ढाँचा चढ़ा रहता है।

भागती हुई एक स्क्विड मछली छिपने के लिए स्याह धुआं उगल रही है।



स्क्विड की चोंच और आँख

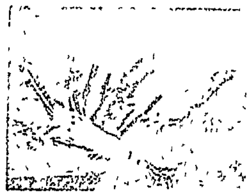
समुद्र के अष्टभुजी दैत्य



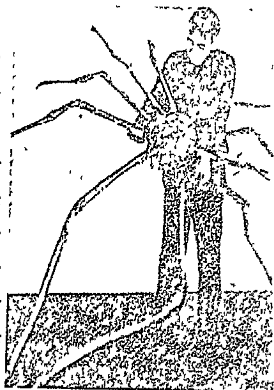


समुद्र में पाए जानेवाले श्रिम्प, लाब्सटर (बडे झींगे), क्रैब, दस पैरोवाले केकड़े आदि सभी संधिपाद जीवो को कठिनी (क्रेस्टेसिया) नाम की जाति मे रखा जाता है। उस जाति मे छोटे से छोटे पिस्सू से लेकर जापान के मकडीनुमा बडे से बडे केकडे के आकार तक के प्राणी मिलते है। जापानी केकडा अपने पजो को ११ फुट तक फैला सकता है। कठिनी जाति के कुछ जीवो के शरीर से रोशनी निकलती रहती है और वे इतने गहरे समुद्र मे रहते है, जहाँ बराबर अँधेरा बना रहता है। यो तो कठिनी जाति के अधिकतर जीव समुद्र मे ही रहते है, लेकिन उनमे से कुछ नदियो आदि मे भी पाए जाते है। उनमे से कुछ जीवो ने पानी से बाहर जमीन पर भी चलना सीख लिया है। एक तरह का वैरागी केकड़ा समुद्र से बाहर निकल जाता है, और केवल अंडा देने के समय ही समुद्र मे वापस जाता है। बहुत से वैरागी केकडे पानी मे ही रहते है।

:के खाने का ढग



श्रिम्प



दस पैरोवाला जापानी क्रैब केकडा



नाटिलस

वे झीगा मछली से मिलते जुलते होते है, लेकिन उनके कोमल शरीर पर सख्त ढक्कन नही होता। अपने शरीर की रक्षा के लिए वे केकडे दूसरे जीवो की खोलों मे घुस जाते है। नाटिलस भी एक प्रकार का केकडा ही होता है। उसकी खोल सख्त होती है, और उसके शरीर के निचले भाग मे बहुत बारीक तारो जैसे ढेरों हाथ पैर होते है, जिनसे वह अपने शिकार पकडता है। कुछ केकडे दूसरे जीवो और पौधो द्वारा अपना बचाव करते है। दस्यु केकडा अपना ज्यादातर समय किनारे की जमीन पर ही बिताता है, और ताड के ऊँचे ऊँचे पेडो पर चढकर उनके फल खा जाता है। स्पज केकडा अपनी रारो से स्पज के टुकडो को पकडकर अपनी पीठ पर इस तरह रख लेता है कि उसका अपना रूप ही बदल जाता है। मकडीनुमा केकडा अपने खोल पर समुद्री पौधो और जिदा स्पजो को इस तरह रख लेता है कि वे वही पर बढने लगते है, और केकडे को पूरी तरह ढक लेते है।

हमले के लिए तैयार एक लाब्स्टर





कृषि विज्ञान ★

मिट्टी की रचना और उसके गुण

मनुष्य का जीवन बहुत कुछ खेती पर निर्भर है। पर हर मिट्टी मे खेती नही हो सकती। मिसाल के लिए रेत मे खेती होना कठिन है। खेती के लिए मिट्टी की कुछ खास किस्मे होती है। पेड पौधे उन्ही से अपनी खुराक हासिल करते है।

जिन चट्टानों से पृथ्वी का चप्पड, यानी ऊपर का छिलका बना है, उसके पिसने, घिसने और कुटने से जो पदार्थ निकलते है उन्ही से मिट्टी बनती है। पृथ्वी का चप्पड तीन तरह की चट्टानों से बना है।

ज्ञान सरोवर के पहले भाग मे बताया जा चुका है कि शुरू मे पृथ्वी की सतह पिघले हुए सीसे की तरह बेहद गरम थी



और उसके भीतरी भाग से आग की ज्वालाएं निकलती रहती थीं। बहुत दिन बीतने पर पृथ्वी ठंडी होती गई और उसकी ऊपरी सतह सख्त होकर कड़ी चट्टान बन गई। इस प्रकार जो चट्टानें बनीं, वे शुरू में तो एक तरह की थीं। पर आगे चलकर उनकी एक तीसरी किस्म भी बन गई।

जिन स्थानों पर आग की ज्वालाएं निकलती थीं, वहां पर जो चट्टानें बनीं उनको 'आग्नेय (आग से बनी) चट्टानें' कहते हैं। पर जिन स्थानों पर अंदर से ज्वालाएं नहीं निकलती थीं, वहां भी पृथ्वी की सतह के ऊपर गले हुए सीसे जैसा तरल पदार्थ गर्मी से बजबजाया करता था। जैसे जैसे पृथ्वी की अंदरूनी गर्मी कम होती गई वैसे वैसे वह तरल पदार्थ जमने लगा, और हवा के साथ उड़कर आई हुई रेत धूल इत्यादि चीजें उस पर जमा होने लगीं। धीरे धीरे उस तरल पदार्थ और उसके साथ दूसरी चीजों ने मिलकर चट्टानों का रूप धारण कर लिया। इस तरह जो चट्टानें बनीं उन्हें 'अवसाद (तरल पदार्थ पर दूसरी चीजों के जमने से बनी) चट्टानें' कहते हैं।

इन दो किस्म की चट्टानों के अलावा एक तीसरी किस्म की चट्टान भी बनी। उसे 'रूपान्तरित (बदली हुई शक्ल की) चट्टानें' कहते हैं। वे चट्टानें ऊपर बताई हुई दो तरह की चट्टानों की ही बदली हुई शक्ल हैं। आग्नेय या अवसाद चट्टानों के ऊपर जो बहते हुए गरम या ठंडे तरल पदार्थ होते हैं, उनके दबाव से उन चट्टानों के रूप बदल जाते हैं। इसलिए उन्हें 'रूपान्तरित चट्टानें' कहते हैं।

आँधी, वर्षा, तूफान आदि के कारण चट्टानें टूटती, फूटती, घिसती और खुदरती रहती हैं। ऐसा होने पर जिन पदार्थों से मिलकर चट्टानें बनी हैं, वे पदार्थ इधर उधर बिखरते रहते हैं। उन्हीं पदार्थों से खेती

योग्य मिट्टी बनती है। उन मूल पदार्थों को 'मिट्टी का कर्ता' कहते हैं।

जिस चट्टान के पिसे कुटे पदार्थों से किसी जगह की मिट्टी बनती है उस चट्टान का मिट्टी पर काफी असर होता है। फिर भी किसी मिट्टी को देखकर यह आसानी से अनुमान नही किया जा सकता कि वह किस किस्म की चट्टान से बनी होगी। कारण यह है कि मिट्टी एक दिन में नही बनती। चट्टान से निकले पदार्थों के ऊपर कितने ही साल तक सूरज, हवा, पानी और पेड पौधे अपना काम करते है, तब जाकर उनसे मिट्टी बनती है।

मिट्टी हमे पृथ्वी की सतह की उन परतो से मिलती है, जो मौसम के उलट फेर से प्रभावित होती है, और जो खनिज पदार्थों, लसदार (जीवधारी या आर्गेनिक) तत्वो, पानी, घुलनेवाले नमको और हवा से बनी होती है। मौसम के उलट फेर के कारण धरती पर इन पदार्थों की परते एक पर एक जमती जाती है। हर मिट्टी मे इन पाँचों पदार्थों का होना जरूरी नही है। पर हर मिट्टी मे इनमे से कुछ पदार्थ अवश्य होते है। वैज्ञानिको ने इन पाँचों पदार्थों का सामूहिक नाम 'मिट्टी का ढाँचा' रखा है।

मिट्टी मे खनिज पदार्थो के कण भिन्न भिन्न आकार के होते है। उनकी मिलावट के अनुपात के अनुसार हर मिट्टी मे कुछ विशेषताएँ पैदा हो जाती है, जो लगभग सदा कायम रहती है।

मिट्टी के कण चार आकार के माने गए है। सबसे बड़े कणों को 'कंकड़', उनसे छोटे कणो को 'बालू' और बालू से भी छोटे कणो को 'रबदा' कहते है। 'रबदा' के कण तलछट के रूप मे पानी के अंदर बैठ जाते है।

सबसे छोटे कणो को 'छुह' कहते है, जिनसे छुही या चिकनी मिट्टी बनती है।

मिट्टी की किस्म को जानने के लिए यह देखा जाता है कि उसमे किस तरह के कण अधिक है। जिस मिट्टी मे लगभग सारे कण बालू के होते है, उसको 'बलुई', और जिसमे छुह के कण बहुत अधिक होते है, उसको 'छुही' मिट्टी कहते है। बालू खुरदरी और ढीली होती है। उसके दाने अलग अलग होते है जो आपस मे चिपकते नही है। इसलिए बलुई मिट्टी पानी को तुरंत सोख लेती है और फिर भी सूखी की सूखी बनी रहती है। बलुई मिट्टी मे हवा की पहुँच आसानी से हो जाती है, इसलिए उसमे रहे सहे लसदार पदार्थ भी सूख जाते है। मगर बलुई जमीन की जोताई बहुत आसान होती है। इसलिए तौल मे भारी होने पर भी किसान बलुई मिट्टी को हल्की मिट्टी कहते है।

'रबदा' के कण मझोले आकार के होते है। उनके आपसी गुंथाव मे केवल इतनी ही साँस होती है कि उनमे काम भर को हवा और पानी घुसता रहे, पर लसदार पदार्थ सूखने न पाएँ। इसीलिए रबदा कणो से बनी मिट्टी खेती के लिए अच्छी होती है।

'छुह' के कण और सब कणो से अच्छे होते है, और उनका आपसी गुंथाव बहुत ठोस होता है। इसीलिए छुही या चिकनी मिट्टी के पिड कड़े होते है, पर गीले होने पर लोचदार और लसदार हो जाते है।

मिट्टी मे खनिज तत्वों के अलावा जीव जतुओ के सड़ने और गलने के कारण कुछ और तत्व भी होते है। उनमे एक को बेजान और दूसरे को जानदार तत्व कहते है। वे दोनो ही 'छुह' के कणो मे एक तरह के लसदार पदार्थ के रूप मे मौजूद होते है। इसलिए 'छुह' के कण न पानी मे घुलते है न तलहटी मे बैठते है। वे बीच मे मंडल बनाकर थमे रहते है। पेड़

पौधों को खुराक और पानी पहुँचाने में वे बहुत सहायक होते है। यही कारण है कि 'ह्यूमस' को मिट्टी का प्राण कहा जाता है।

धरती के नीचे क्या भरा है और क्या हो रहा है, इस बात की जानकारी भूगर्भ विज्ञान से होती है। पहले मिट्टी की क़िस्मे भूगर्भ विज्ञान के आधार पर ही तै की जाती थीं। इसलिए चट्टानो की किस्म के अनुसार ही मिट्टी की किस्मे मानी जाती थी। यह तरीका उपयोगी अवश्य था, पर सही नही था। मिट्टी की रचना मे धरती के ऊपर काम करने-वाली शक्तियों का भी बहुत बड़ा हाथ होता है। मिट्टी मे ऐसे गुण भी पाए जाते है, जो उन चट्टानो मे नही होते, जिनमे वे बनी होती है। इसलिए अब मिट्टी की किस्मे प्राकृतिक शक्तियों के प्रभाव के अनुसार तै की जाती है।

यों तो मिट्टी की अनगिनत किस्मे हो सकती है। पर मोटे तौर से जलवायु और स्थान के अनुसार कुछ मोटी मोटी किस्मे मान ली गई है। इस हिसाब से भारत मे मिलनेवाली मिट्टी की ये किस्मे है—दुमट, काली, पीली, लाल, रेतीली आदि। पर इन बड़ी किस्मों के भीतर अलग अलग खेतो की मिट्टी की अलग अलग बहुतेरी किस्मे होती है। इन किस्मो को तै करने मे कई बातों का ध्यान रखा जाता है। जैसे यह कि जिस चट्टान से मिट्टी बनी है वह चट्टान किस तरह की थी, मिट्टी के कण किस आकार के है, उस पर मौसम का क्या प्रभाव पड़ा है; और ढाल, धसन या कटाव के विचार से जमीन की हालत क्या है?

अच्छी फसल उगाने के लिए इन सब बातों की जानकारी जरूरी है। इसके बाद सिंचाई, खाद, हवा, धूप आदि का उचित प्रबंध होना चाहिए।

जमीन में कुछ ऐसी चीजें भी हैं या पैदा हो गई हैं, जो पौधों को हानि पहुँचाती हैं। उन्हें नष्ट कर दिया जाए तो खेत अच्छा उपजेगा।

वनस्पति के और मरे जानवरों के सड़ने गलने से बने जो रसदार तत्व मिट्टी में मिल जाते हैं, वे पौधों के लिए बहुत लाभदायक और आवश्यक होते हैं। इसी जानदार या रसदार तत्व के सहारे पौधे मिट्टी में से अपनी खुराक खींचते हैं, और मिट्टी अपनी नमी ज्यादा समय तक रोकती है। यही रसदार तत्व मिट्टी को बहाने से रोकते हैं।

अधिक ठंडे देशों के मुकाबले में भारत की भूमि में यह जानदार तत्व या लस बहुत कम होता है। इसलिए हमें खाद मिलाकर मिट्टी में लस बढ़ाने की कोशिश करना पड़ती है।

मिट्टी में लस बढ़ाने के लिए गोबर, पाखाना, खली, हरी खाद, नदी आदि डाले जाते हैं। पर भारत में दो तिहाई गोबर जला दिया जाता है। खेत में पाखाना फेंकना कहीं कहीं बुरा माना जाता है, और खली मँहगी पड़ती है। इस तरह एक फसल मिट्टी से जो खुराक खींच लेती है, वह फिर जमीन में वापस नहीं पहुँचती। इसी कमी को पूरा करने के लिए फसलों को हेर फेर कर बोने का ढंग काम में लाया जाता है।

अच्छी फसल पैदा करने के लिए १५ चीजें चाहिए। कार्बन और ऑक्सीजन जो हवा से मिल जाते हैं, हाइड्रोजन जो पानी से मिलता है, बाकी १२ चीजें ये हैं—नाइट्रोजन, फास्फोरस, गंधक, पोटाश, कैल्शियम, मैगनीशियम, लोहा, मैगानीज, ताँबा, जस्ता, सोहागा, और मोलीबडेनम। ये चीजें मिट्टी से ही मिलती हैं। कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन पौध उगाने में मदद

करते है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और गंधक पौधे को जानदार बनाते है। पोटाश, कैल्शियम और मैगनीशियम की मदद से पौधे बढते हैं। अतिम ६ चीज थोड़ी ही काफ़ी होती है।

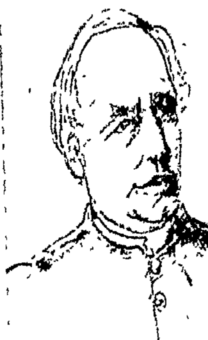
यदि मिट्टी मे कैल्शियम और मैगनीशियम की कमी हो, यानी पौधे ठीक से न बढते हों, तो उस कमी को मिट्टी मे चूना मिलाकर दूर किया जा सकता है। अधिकतर 'वैज्ञानिक खादो' मे गधक होती है। वह मिट्टी मे नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश पहुँचाती हैं। नाइट्रोजन से पौधे जानदार होते है। लेकिन वह जरूरत से ज्यादा हो तो पौधे की बाढ मारी जाती है। फास्फोरस के असर से पौधे जल्दी बढते है, और उनकी जडें मजबूत होती हैं। पर खारवाली मिट्टी मे फ़ास्फ़ोरस के नमक का असर लाभ नही पहुँचाता। पोटाश, नाइट्रोजन और फास्फोरस के असर को ठीक रखता है। तने और जड को इसकी आवश्यकता होती है। पोटाश से ही अनाज मे सत बनता है। चिकनी मिट्टी मे वह बहुत होता है।

खारवाला पदार्थ चट्टान से पैदा होता है। वह वर्षा पर निर्भर है। वर्षा अधिक होने पर तेज खारवाली मिट्टी बनती है। अगर वर्षा नाम मात्र की हो तो कम खारवाली मिट्टी बनेगी।

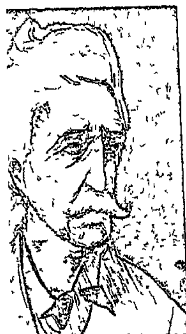
बिहार, उत्तर प्रदेश, पजाब और राजस्थान आदि के कुछ भागो मे वर्षा कम होती है। इसलिए उन इलाको मे सफेद, पपडीदार, नमकीन और खारवाली मिट्टी पैदा हो जाती है। उसे रेह, कल्लर और ऊसर मिट्टी कहते है। ये पदार्थ जिस मिट्टी में घुस जाते है, वह मिट्टी फसल के लिए बेकार हो जाती है। नहर के

है जिन लोगो ने युरोप मे इस नए ढग को चलाया, उनमे से कुछ के नाम ये है—विरोट प्रिस्निज, जे० स्क्राथ, क्नाइप और आर-नॉल्ड रिक्ली।


जे० स्क्राथ


फादर क्नाइप

प्राकृतिक चिकित्सा के माननेवालो का कहना है कि हर जीव के अन्दर एक शक्ति होती है जो उसे जिदा रखती है। उसे 'जीवन शक्ति' कहते है। जब हमारे शरीर मे कोई रोग लग जाता है तो वह शक्ति उससे टक्कर लेती है। जैसे कि जब नाक मे कोई चीज पड जाती है तो छीके आने लगती है, जिससे नाक मे पडी चीज निकल जाती है। इसलिए अगर हम उस जीवनी शक्ति को बढा ले तो वह खुद ही रोगो को नष्ट कर सकती है।


आरनॉल्ड रिक्ली

नींद हजार बीमारियो का इलाज है, और पूरी नीद न सोना हजार बीमारियो को न्यौता देना है। नीद से शरीर को आराम तो मिलता ही है, इसके अलावा और भी बहुत से फायदे है। बहुत से लोग कहते है कि नीद खुद ही सबसे बडी दवा है। दुधमुंहे बच्चे २४ घटे मे २२–२३ घटे सोते है और ४-५ वर्ष की आयु होने तक १०–१२ घटे सोते है। इसीलिए वे तेजी से बढते है।

पर बडे होने के बाद आदमी दूसरे धधो मे फॅसकर नीद की ओर से

आंखें मूंद लेता है। उसे काम काज की इतनी चिंता हो जाती है कि रात को गहरी नीद सोने के बजाए वह बड़बड़ाता रहता है। ऐसी हालत मे नीद से वह पूरा लाभ नही उठा पाता। कायदे से एक तन्दुरुस्त आदमी को कम से कम रोज ८ घंटे सोना चाहिए। जो कमजोर है, उन्हे ९ घटे सोना चाहिए। नींद न आए तो उन्हे दिन में भी घटे आध घटे आराम कर लेना चाहिए।

ताकत का ही दूसरा नाम जिदगी है। मुर्दे मे ताकत नही होती। मनुष्य का शरीर भी एक मशीन की तरह है। जागते मे उस मशीन के सभी कल पुर्जे काम करते रहते है। सोते समय बहुत से पुर्जे थम जाते है। लेकिन वे खून, हवा आदि से उस समय भी शक्ति लेते रहते है। वह शक्ति हर अंग मे आसानी से पहुंचती रहती है। कोई भी मशीन बराबर काम नही कर सकती। हर मशीन को थोडी देर के लिए रोककर उसे ठंडा किया जाता है, और उसमे तेल पानी दिया जाता है। यह काम मनुष्य के शरीर मे सोते समय होता है। सोते समय मस्तिष्क को भी शांत रहना चाहिए। इसलिए दिमाग पर चिंताओ का बोझ लेकर नही सोना चाहिए।



कुछ लोग रात मे जागकर काम करते है। यह स्वास्थ्य के लिए बहुत बुरा है। जल्दी सो जाने और सवेरे तड़के उठकर काम करने की आदत स्वास्थ्य के लिए अच्छी है। स्वास्थ्य की दृष्टि से आधी रात से पहले एक घंटे की नीद, आधी रात के बाद के दो घटो की नीद के बराबर होती है।

खुली हवा मे ही करनी चाहिए। साफ हवा मे टहलना और टहलते समय गहरे साँस लेना नीरोग रहने के लिए बहुत जरूरी है।

पानी पीने से शरीर भीतर से और नहाने से शरीर बाहर से साफ होता है। लेकिन गदा पानी पीने से शरीर के भीतर सफाई के बजाय गदगी बढती है। इसलिए पीने का पानी खास तौर से साफ होना चाहिए। शरीर के अदर की सफाई उस समय बेहतर हो सकती है, जब आदमी खाली पेट ही पानी पिए। इसलिए सवेरे उठने पर, सोते समय, भोजन के एक घटे पहले और २-३ घटे बाद पानी पीना बड़ा गुणकारी है। भोजन के साथ भी थोडा पानी पी लेने मे कोई हर्ज नही है।

शरीर के बाहर की सफाई के लिए नहाने को सभी लोग जरूरी मानते है। ठढे पानी से नहाना अधिक गुणकारी है। उससे पूरे बदन मे ताजगी आ जाती है, और खून पूरे बदन मे तेजी से दौडने लगता है। इसका एक कारण है। बदन हमेशा कुछ न कुछ गर्म होता है। खाल पर ठढा पानी पडते ही नजदीक की नसे (शिराएँ) सिकुडती है और उनका खून शरीर के भीतर की ओर दौडता है लेकिन नसे खाली नही रह सकती, इसलिए शरीर के अदर से साफ खून खाली जगह को भरने के लिए दुगुनी तेजी से आता है। इसी कारण ठढे पानी से नहाते समय पहले सरदी फिर एकाएक गरमी मालूम पडती है। इसके विपरीत गरम पानी से नहाने से खाल के पास की नसे फैलती है, और खून की चाल धीमी पड जाती है। इसलिए गरम पानी से नहाने पर ताजगी के बजाय सुस्ती आती है। ठढे पानी से स्नान का लाभ दूसरे तरीको से बढाया जा सकता है। अगर नहाने के पहले हाथ से या तौलिये से पूरे बदन को रगडा जाय, तो खाल काफी गरम हो जाएगी।

इसके बाद ठढे पानी से नहाने पर अधिक लाभ होगा। इससे रोंओ के छेद खुल जाएँगे और बदन खूब साफ हो जायगा। नहाने के बाद बदन को तौलिये से सुखाने के बजाय हथेली से रगडकर सुखाना और अधिक गुणकारी है।

मिट्टी का भी प्राकृतिक चिकित्सा में खास स्थान है। यह जरूरी है कि जल की ठढक शरीर को अधिक देर तक मिलती रहे और उसका काफी देर तक लाभ उठाया जाय। प्राकृतिक चिकित्सा मे इस काम के लिए मिट्टी का उपयोग होता है। लसदार चिकनी मिट्टी को ठढे पानी मे गूंधकर बदन पर लगाते है। फोड़े, फुसी, दाद, घाव आदि के लिए यह मिट्टी मरहम का काम करती है। थोडी थोडी देर के लिए ठंढी साफ मिट्टी को आँखो और पेडू पर बाँधना भी कई रोगों मे और आम तौर पर स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक होता है।

भोजन हमारे लिए कितना जरूरी है यह सभी जानत है। इसलिए प्रकृति से हमे जो वस्तु जिस रूप मे मिलती है उसे हम उसी रूप मे खाएँ तो अच्छा है। इसी को प्राकृतिक भोजन कहते है। भोजन मे फल, मेवे, कच्ची तरकारियाँ, कच्चा दूध आदि अधिक होना चाहिए और अन्न कम। कच्चे अन्न को इतना भिगोकर खाना कि अकुर निकल आएँ लाभदायक होता है। बात यह है कि अन्न और सब्जियो मे भी प्राणतत्व होते है, जो पकाने से बहुत कुछ नष्ट हो जाते है।

विचार का भी स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव पड़ता है। आप किसी से कहते रहिए कि आप तो दिन पर दिन कमजोर होते जा रहे है, तो उसका चेहरा लटक जाएगा और वह कुछ चिता मे पड़





जाएगा। इसी तरह किसी से कहिए कि आप काफी तन्दुरुस्त, फुर्तीले और खुश नजर आते हैं तो आपने आप उसके चेहरे पर लाली, ओठो पर मुस्कान और बदन मे फुर्ती आ जाएगी। बहुत से लोग सिर्फ इसलिए बीमार और कमजोर रहते है कि उनके मन में यह बात बैठ जाती है कि वे बीमार और कमजोर है। इधर हाल मे डाक्टरी की कुछ नई खोजो ने यह साबित कर दिया है कि स्वस्थ वही है जो अपने को स्वस्थ माने। अब डाक्टरो ने भी शरीर के इलाज के साथ मन के इलाज की जरूरत मान ली है। अगर कोई यह सोचता रहे कि 'मै बराबर स्वस्थ होता जा रहा हूँ' तो उसका स्वास्थ्य सुधरता जायगा। चिन्ताओं मे पड़े रहने से स्वास्थ्य बिगडता ही जाता है। इसीलिए चिन्ता को चिता की सगी बहन कहा जाता है।

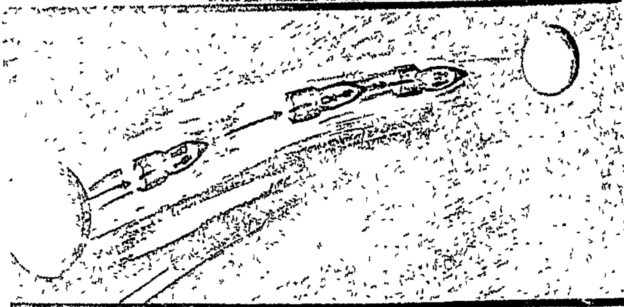
जीवन शक्ति को बढाने के साथ साथ यह भी जरूरी है कि उन कुटेवो से भी बचा जाए जिनसे जीवन-शक्ति के घटने का भय हो। ऊपर के तरीको का उल्टा करने से जीवन शक्ति घटती है। चिन्ता, क्रोध, आदि से जीवन शक्ति घटती है। कम सोने, धूप और हवा न मिलने, न नहाने या गदा पानी पीने से भी जीवन शक्ति घटती है। वक्त बेवक्त भोजन भी हानिकर है। इनके अलावा जीवन शक्ति घटाने वाली कई और भी कुटेवे है। बीडी, सिगरेट, चाय, गांजा, तम्बाकू, भांग, ताड़ी या शराब से और तेज दवा या इजेक्शन से भी जीवन शक्ति घटती है। हमारे बुरे विचार भी जीवन शक्ति को घटाते है। हर आदमी को चाहिए कि वह अपनी आदतो के बारे मे सोचे और जीवन शक्ति घटानेवाली कुटेवो को छोड़ दे।

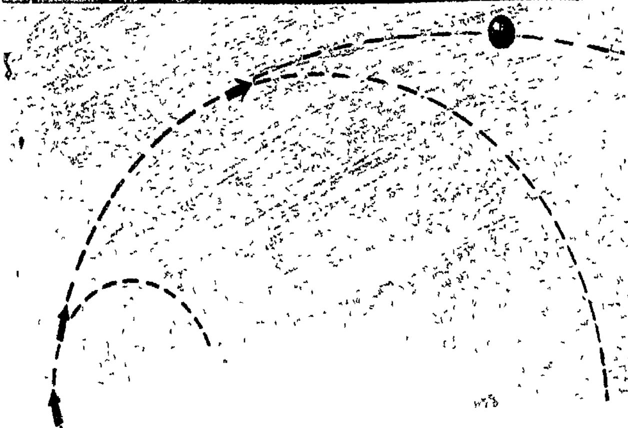
१- नीचे के चित्र मे यह दिखाया गया है कि राकेटो द्वारा नकली चॉद को शून्य मे कैसे छोडते है।

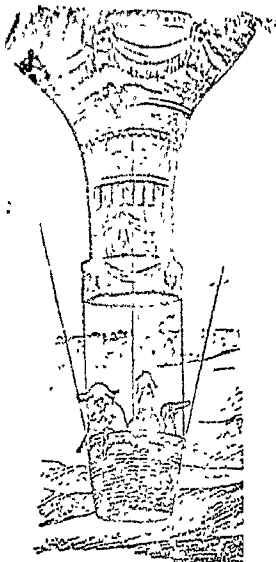
२- बीच के चित्र मे राकेटो की गति दिखाई गई है।

३- ऊपर के चित्र मे एक टैंक के उतरने पर चॉद की सतह की धूल को उडते दिखाया गया है।

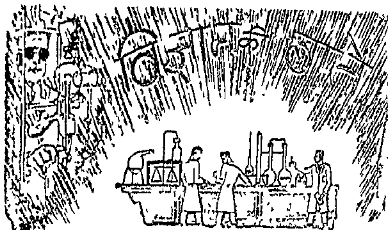








मोन्ट गोल्फियर बन्धुओ का बनाया गुब्बारा जो एक मुर्गा, एक बत्तख और एक भेंड़ को लेकर आठ मिनट तक आकाश में उड़ा था। सबसे पहले आकाश में गुब्बारो द्वारा उड़ने की राह खोलने का सेहरा मोन्टगोल्फियर बन्धुओ के सिर ही है। उन्हीं की सूझ के बलपर आगे बड़े बड़े हवाई जहाजो का बनना संभव हो सका।



आकाश पर विजय

मनुष्य ने शायद आकाश मे उडती हुई चिडियों को देखकर यह सोचा कि काश वह भी उड सकता और उड-कर आकाश की ऊँचाई की थाह लगा पाता।

सोचते सोचते उसने उड़ने के यत्न शुरू किए। उसने गुब्बारे बनाकर आसमान मे छोड़े, गुब्बारे मे बैठकर खुद उडा, और अंत मे उसने हवाई जहाज बना डाले।

मोन्ट गोल्फियर बन्धु







कई प्रोपेलरवाला दुनिया का सबसे बड़ा हवाई जहाज

आम हवाई जहाज की शक्ल सामने से पीछे की ओर गावदुम होती है। उसके ढाँचे पर दाएँ और बाएँ दोनों ओर चिड़ियों के डैने की तरह दो बड़े बड़े पंख लगे रहते हैं। वे पंख ही हवाई जहाज को हवा में पतंग की तरह सँभाले रहते हैं, जिससे हवाई जहाज जमीन पर गिरने नहीं पाता। हवाई जहाज के सामने बिजली के पंखे की शक्ल की एक चीज लगी होती है जिसे 'प्रोपेलर' कहते हैं। यह प्रोपेलर इंजिन की ताकत से तेजी से घूमता और हवा को पीछे ढकेलता रहता है, जिससे हवाई जहाज आगे बढ़ता रहता है।

धीरे धीरे अनुभव से यह भी मालूम हुआ कि आकाश में नीचे हवा का दबाव अधिक होता है और ऊपर कम। इसका मतलब यह हुआ कि हवाई जहाज जितनी ही नीचाई पर उड़ेगा, हवा के दबाव के कारण उसकी रफ़्तार उतनी ही सुस्त होगी और वह जितनी ही ऊँचाई पर उड़ेगा, उसकी रफ़्तार उतनी ही तेज होगी, क्योंकि वहाँ हवा का दबाव कम होगा। इसलिए ऐसे हवाई जहाज बनाए गए जो बहुत ऊँचाई पर उड़ सकें।

लेकिन ऊँची उड़ान में एक और कठिनाई का सामना करना पड़ा। चूँकि ऊपर की हवा हल्की होती है, इसलिए वहाँ प्रोपेलर की पकड़ झूठी पड़



चार जेटवाला दुनिया का सबसे पहला हवाई जहाज

जाती है। ऐसी हालत में हवाई जहाज को आगे बढाने के लिए पूरा जोर नही मिल पाता।

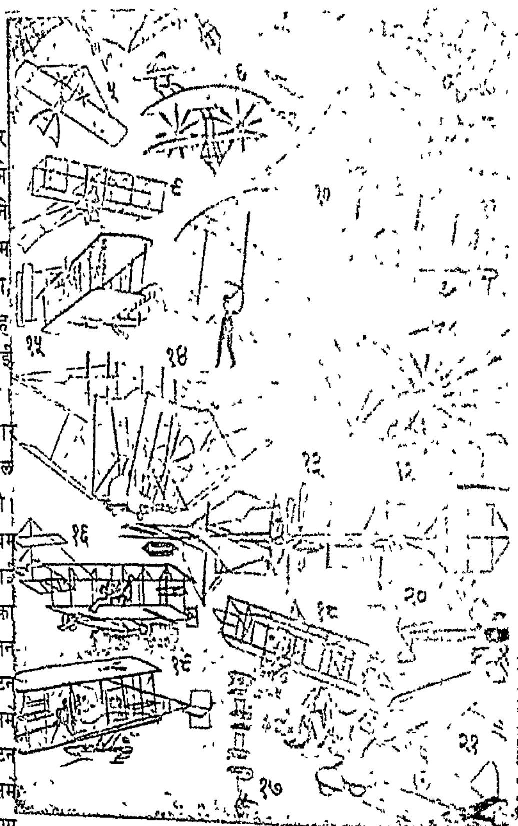
ऊँचे आकाश की हल्की हवा में उडने के लिए ऐसे हवाई जहाज बनाए गए है, जिनमे प्रोपेलर लगाने की जरूरत नही होती है। लेकिन मामूली हवाई जहाज की तरह पंख उसमे भी लगे होते है। वे 'जेट हवाई जहाज' कहलाते है। वे आतिशबाजी के 'बान' के सिद्धांत पर उडते है। बान की शक्ल एक गावदुम बेलन जैसी होती है। उसकी पूँछ मे बारूद भरी होती है, जिसमे पलीता दागने पर धड़ाका होता है। इस धडाके से गैस पैदा होती है, जो बान को एक जोर का धक्का देकर खुद तेजी के साथ पीछे को भागती है। उस धक्के से बान आगे बढता है।

इसी तरह जेट हवाई जहाज के ढाँचे मे भी पीछे की तरफ धडाका करने वाले पदार्थ भरे रहते है। उन पदार्थो मे धडाका पैदा करने के लिए ऑक्सीजन की जरूरत होती है। वह ऑक्सीजन जेट हवाई जहाज के ढाँचे के सामनेवाले हिस्से मे बनी एक झिरीदार खिडकी के रास्ते से भीतर आती है। उस खिडकी की झिरी अपने आप थोडी थोडी देर पर खुलती और बद होती रहती है।

इस तरह जेट हवाई जहाज के ढाँचे के पिछले हिस्से मे जब ऑक्सीजन पहुँचकर उसमे भरे हुए पदार्थो मे धडाका पैदा करती है, तब धडाके से उत्पन्न हुई गैसे पीछे की ग्रोर तेज रफ्तार से भागती है, और उनके धक्के से जेट हवाई जहाज सामने की ग्रोर भागता है।



दूसरे महायुद्ध में जर्मनी ने उडन बम बनाया था, जो एक तरह का जेट हवाई जहाज था। उसकी रफ्तार ४१५ मील फी घण्टा थी। उस उडन बम (जेट हवाई जहाज) का कुल वजन करीब दो टन था, जिसमें एक टन वजन उसमें भरे गए गोले बारूद का था।



वायुयान का विकास

१ लियोनार्डो दा विंची द्वारा कल्पित वायुयान, २ [illegible] का नमूना, ३ [illegible] का नमूना, ४ [illegible] का वायुयान, ५ [illegible] का नमूना, ६ माथ का हवाई स्टीमर', ७ टामस [illegible] का नमूना, ८ [illegible] ९ [illegible] का नमूना, १० लिलिएन्थल का सुप्रसिद्ध ग्लाइडर, ११ [illegible] का ग्लाइडर, १२ [illegible] का ग्लाइडर, १३ [illegible] की मशीन १४ [illegible] का वायुयान, १५ राइट बंधुओं का सुप्रसिद्ध वायुयान १६ कर्टिस का वायुयान, १७ [illegible] द्वारा पहली ऊपर उठ रहा है १८ [illegible] की मशीन, १९ कर्टिस का प्रथम सी-प्लेन २० कई इंजिनों वाला वायुयान, २१ एक आधुनिक वायुयान।

आजकल के जेट हवाई जहाज नौ दस मील की ऊँचाइ पर आसमान में तेज रफ्तार से उड सकते है। उनकी रफ्तार प्रति घटा ७०० मील तक पहुँच चुकी है। आजकल तो नियमित तरीके पर जेट वायुयान काम मे लाए जा रहे है।

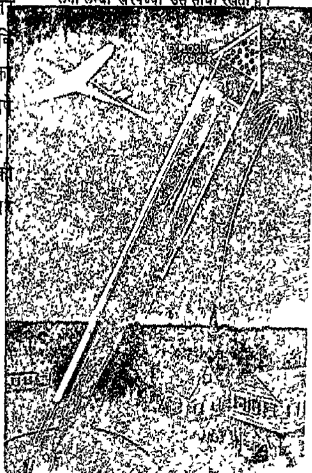
जेट हवाई जहाज के बारे में यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि धडाका पैदा करने के लिए जेट हवाई जहाज आकाश की हवा से ही ऑक्सीजन लेते है।

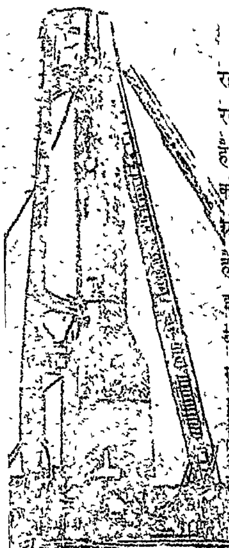
आसमान मे बहुत ही अधिक ऊँचाई पर हवा करीब करीब नही के बराबर है। इसलिए उस ऊँचाई पर जेट हवाई जहाज बिल्कुल ही नही उड़ सकते है। आसमान के उस हिस्से मे केवल राकेट ही उड सकते है।

राकेट के इजिन भी बान के सिद्धान्त पर काम करते है। जेट हवाई जहाज और राकेट मे अन्तर यह है कि जेट हवाई जहाज मे बाहर की हवा की ऑक्सीजन भीतर जाकर धड़ाका पैदा करती है, जबकि राकेट के इजिन मे ईधन को धडाका कराने के लिए राकेट मे ही रखे पी... माल ढोने की ऑक्सीजन काम आती है।

राकेट के ढाँचे मे भी पीछे की तरफ धडाका करनेवाले पदार्थ भ...

साधारण बान एक खोखली नली होती है। ऊपरी सिरे पर टोपी सी होती है जिसमें रगीन अभ्रक और बारूद भरी होती है। नली में भरी बारूद में आग लगाने पर गैसें तेजी से पीछे की ओर भागती है और बान ऊपर या सामने की ओर भागता है। उसमें लगी लम्बी खरपच्ची उसे सीधा रखती है।





-२' नाम के राकेट को आकाश में भेजने
के लिए उसमें ईंधन भरा जा रहा है।

रहते हैं। और अलग पीपे मे ऑक्सीजन भरी रहती है। उनको दागने पर भारी धडाका होता है, जिससे गैसे पैदा होती है। वे गैसे भी राकेट को जोरदार धक्का मारकर खुद तेजी से पीछे की ओर भागती है। उस धक्के से ही राकेट आगे बढता है। दूसरे महायुद्ध मे जर्मनी ने राकेट द्वारा ही इंग्लैंड पर बम बरसाए थे। जर्मनी के उन बम बरसानेवाले राकेटो को 'वी--२' नाम दिया गया था।

राकेट आसमान मे बहुत अधिक ऊँचाई पर ऐसी जगह भी तेजी से उड सकते है, जहाँ हवा बिल्कुल न हो। जर्मनी के राकेट ६० मील की ऊँचाई तक पहुँचते थे। उडने की रफ्तार मे तो वे आवाज की चाल को भी मात करते थे। उनकी चाल फी घटे तीन हजार मील से भी ज्यादा थी, जबकि आवाज की चाल केवल ७०० मील के लगभग है। इन दिनो अमरीका और रूस मे और भी तेज उड़नेवाले राकेट बन चुके है। उनकी चाल हजारो मील फी घटे होती है।

राकेट के इजिन की बनावट बड़ी सीधी सादी होती है। उसमे हरकत करनेवाले कल पुर्जे नही लगते। राकेट की जिस नली मे धडाका पैदा किया जाता है, वह ऐसी धातु की बनी होती है, जो बहुत गर्मी पाकर भी नही पिघलती। चूँकि राकेट मे ईंधन बहुत तेजी से जलता है, इसलिए

उसमे ईंधन बहुत लगता है। उदाहरण के लिए जर्मनी के राकेट के इंजिन का वजन तो केवल ५ मन था, लेकिन उसके अंदर धड़ाका पैदा करने के लिए ५९ मन ईंधन लादना पड़ता था। इतना ही नही वह समूचा ईंधन कुल चार मिनट की उड़ान के लिए ही काफी होता था। यही कारण है कि राकेट हवाई जहाज वजन मे बहुत भारी भरकम होते है।

आकाश मे लगभग २६ मील की ऊँचाई तक तो गुब्बारे भी भेजे जा चुके थे। उन गुब्बारो मे भी तरह तरह के यत्र रखकर उनकी मदद से ऊपर की हवा के बारे मे तरह तरह की जानकारी की गई थी। लेकिन हवा आकाश मे सैकड़ो मील की ऊँचाई तक फैली हुई है। इसलिए हवा की ऊपरी तहो तक तरह तरह के वैज्ञानिक यत्र पहुँचा कर वहाँ की हालत जानने की बराबर कोशिश की जा रही है।

पृथ्वी सूरज के चारो ओर घूमती है। इसलिए धरती की आकर्षण शक्ति के कारण उससे लिपटी हुई हवा का घेरा भी उसके साथ साथ घूमता रहता है। उस घेरे से ऊपर आसमान मे महाशून्य है, जो लगभग बिल्कुल खाली जगह है। उस महाशून्य के बारे मे पूरी जानकारी हासिल करना बहुत जरूरी है। सूरज से आनेवाले विद्युत-कणो (एलेक्ट्रोन) की बौछार उसी महाशून्य मे से होकर धरती की ओर आती है। सूरज से निकलकर और भी कई प्रकार की किरणे महाशून्य मे फैलती रहती है। उनमे से कुछ किरणे तो ऐसी है, जो कई फुट मोटी दीवार को भी पार कर सकती है। महाशून्य मे ऐसी ही और अनेक चीजे है, जिनकी ठोस जानकारी मनुष्य को अभी तक नही है। उन्हे जानने के लिए आवश्यक है कि वैज्ञानिक यत्रो से लैस राकेट आकाश मे ३००-४०० मील की ऊँचाई तक भेजे जाएँ। रूस

ग्रौर अमरीका के राकेट आकाश मे लगभग ४०० मील की ऊँचाई तक पहुँच चुके है । उनकी सहायता मे पृथ्वी की आकृति और आकार का भी ठीक पता लगाया जा रहा है ।

महाशून्य के वातावरण के अध्ययन और इसके ऊपर ब्रह्मांड में दूर दूर तक ऐसे अनगिनत तारे है, जिनके बारे मे सही सही जानकारी प्राप्त करना अभी बाकी है । धरती पर से जब इन तारों के फोटो लिए जाते है, तो बीच की हवा की तहो की गर्द और कुहरे के कारण फोटो साफ नही आते । इस बाधा को दूर करने के लिए भी राकेट से मदद लेने की कोशिश की जा रही है । राकेट मे कैमरे लगे होगे जो वायुमडल की तहो से ऊपर पहुँचकर तारो और ग्रहो के साफ फोटो खुद बखुद उतार सकेंगे ।

राकेट द्वारा उन अनेक कठिनाइयो को भी मालूम किया जा रहा है, जिनका ऊँचे आकाश की यात्रा मे मनुष्य को सामना करना पड सकता है । अभी हाल मे ही रूस के वैज्ञानिको ने एक राकेट के अदर चारो ओर से बंद पिजरे मे दो कुत्तो को बैठाकर राकेट को ऊँचे आकाश मे भेजा था और राकेट में लगे रेडियो की मदद से राकेट मे बद कुत्तो के दिल की धड़कन, उनके शरीर के तापमान आदि का हाल वे मालूम करते रहे । निस्सदेह इस तरह की जानकारी आकाश मे बहुत ऊँचे उडने के लिए अत्यत उपयोगी साबित होगी ।

धरती के गिर्द नकली चन्द्रमा

राकेट ऊपर जाकर फिर तुरत ही नीचे वापस आ जाते है । इसलिए वे अनन्त आकाश के किसी छोटे से कोने मे जितनी देर उडते रहेगे, केवल उतनी ही देर की जानकारी हमे मिल पाएगी ।

इसलिए वैज्ञानिको ने ऐसे राकेट बनाने की कोशिश शुरू की,

जो आकाश में ऊँचे से ऊँचे जाकर धरती के गिर्द अधिक दिनों तक चक्कर लगाते रहे। ऐसे राकेट ही वायुमंडल के हर भाग के बारे मे लम्बे समय तक रेडियो द्वारा आवश्यक जानकारी हमे दे सकेंगे इसलिए पृथ्वी की परिक्रमा करने वाले एक 'नकली' चाँद के बनाने की कोशिशें शुरू हुई।

हम जानते हैं कि चांद एक निश्चित गति से पृथ्वी के गिर्द चक्कर लगाता रहता है। आकाश मे जितनी ऊँचाई पर चॉद है, उतनी ऊँचाई पर पृथ्वी की आकर्षण शक्ति केवल इतनी ही रह जाती है कि वह चॉद को अपनी पकड मे रखकर उसे इधर उधर भटकने न दे। पर उस ऊँचाई पर पृथ्वी की आकर्षण शक्ति इतनी नही रह जाती कि वह किसी चीज को खीचकर नीचे उतार ले। यदि हम यह चाहे कि कोई चीज जाकर फिर नीचे न आए या बहुत दिनो तक ऊपर टिकी रहे तो हमको उसे धरती की आकर्षण शक्ति के बाहर करने के लिए कम से कम ७ मील फी सेकेंड की रफ्तार से ऊपर फेकना होगा। वैज्ञानिको ने हिसाब लगाया है कि धरती से छोडे हुए राकेट की रफ़्तार ५ मील फी सेकेंड हो तो वह राकेट आकाश मे ५०० मील से भी ऊपर पहुँच जाएगा। अगर राकेट उतनी ऊँचाई पर पहुँचकर पृथ्वी के समानान्तर हो जाए तो वह पृथ्वी के इर्द गिर्द बहुत दिनो तक चक्कर लगाता रहेगा।

लेकिन अकेले एक राकेट की रफ्तार उतनी तेज नही हो सकती। इसलिए वैज्ञानिको ने हिसाब लगाकर देखा कि तीन राकेटों को एक के पीछे एक जोडकर उडाया जाए तो उनकी रफ्तार उतनी तेज हो सकेगी। इस तरह जुडे हुए तीनो राकेटो की कुल लम्बाई लगभग ७५

फुट होगी। उनमे सबसे ऊपरवाला राकेट सबसे भारी होगा। ऊपरवाले राकेट के ऊपरी सिरे पर एक गोला रखा होगा। उसके अन्दर वैज्ञानिक यत्र होगे जिसमे आकाश के वातावरण का हाल दर्ज होता रहेगा और उसकी खबर हमे धरती पर रेडियो द्वारा मिलती रहेगी।

उडान शुरू करने के लिए सबसे पहले नीचे का राकेट दागा जाएगा, जो लगभग ५०–६० मील की ऊँचाई पर पहुँच कर बाकी दोनों से अलग हो जाएगा। ठीक उसी समय दूसरा राकेट अपने आप दगेगा, और लगभग ५०० मील की ऊँचाई पर पहुँचकर वह भी अलग हो जाएगा। उसी क्षण तीसरा राकेट अपने आप दग जाएगा, जो गोले को और ऊँचा चढाएगा और उसकी दिशा को मोडकर उसे धरती के समानान्तर कर देगा। उस समय उसकी चाल करीब १८ हजार मील फी घटा या ५ मील फी सेकेड होगी। ठीक उसी समय वह गोले से अलग हो जाएगा। तब वह गोला एक छोटे चाँद के रूप मे पृथ्वी के गिर्द चक्कर लगाने लगेगा। लगभग डेढ घटे मे वह नकली चाँद पृथ्वी के गिर्द एक चक्कर पूरा कर लेगा, और कई महीने तक धरती के चारों ओर चक्कर लगाता रहेगा।

आदमी सदियो से चाँद मे पहुँचकर वहाँ बसने का सपना देखता रहा है। रूस के वैज्ञानिको ने ४ अक्तूबर १९५७ को राकेट की सहायता से लगभग २३ इंच व्यास का स्पुतनिक नाम का एक गोला आकाश मे पहुँचा दिया। वह गोला एक नकली चाँद की तरह आकाश मे ५६० मील की ऊँचाई पर पृथ्वी के चारो ओर चक्कर लगाता रहा। उसका नाम 'स्पुतनिक–१' रखा गया। उसका वजन लगभग सवा दो



मन था। उस गोले के अन्दर बैटरी और रेडियो ट्रांसमीटर लगे हुए थे और वह ऊँचे आकाश से दुनिया में संदेश भेजता रहा। रूस के वैज्ञानिकों ने उन संदेशों से आकाश के बारे में अनेक नई बातें मालूम की हैं।

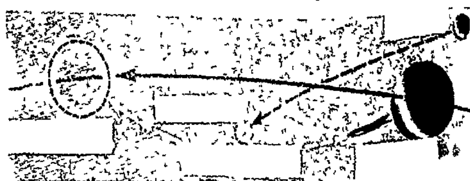
उस पहले नकली चाँद को आकाश मे भेजने के लगभग महीने भर बाद ही रूस ने एक दूसरा नकली चाँद भी आकाश मे भेजा, जिसे 'स्पुतनिक २' का नाम दिया गया। उसका वजन १३ मन था, यानी पहले स्पुतनिक के वजन का लगभग ६ गुना। दूसरे नकली चाँद के अन्दर चारों तरफ से बन्द एक पिंजरे मे 'लाइका' नाम के एक कुत्ते को भी रख दिया गया था। उस पिंजरे में उसके खाने पीने और साँस लेने के लिए उचित प्रबंध कर दिया गया था। स्पुतनिक-२ को ऊपर भेजने के लिए बहुत शक्तिशाली राकेट का प्रयोग किया गया था। इसीलिए वह धरती से लगभग १,००० मील की ऊँचाई पर पहुँचकर पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाने लगा। वह लगभग १०२ मिनट मे पृथ्वी का एक चक्कर पूरा कर लेता था। उससे भेजे हुए रेडियो संदेश पूरे एक सप्ताह तक पृथ्वी पर सुनाई देते रहे। इसका भी पूरा प्रबंध किया गया था कि कुत्ते के हृदय की धड़कन, उसके खून का दबाव और उसके शरीर का तापमान ठीक ठीक बना रहे। पिंजरे के अन्दर एक नली द्वारा कुत्ते के पेट में भोजन पहुँचाते रहने का प्रबंध था। इसका भी प्रबंध किया गया था कि रूस की राजधानी मास्को मे रेडियो का बटन दबाया जाए, तो कुत्ता अपने पिंजरे समेत नकली चाँद से बाहर निकल कर तेजी से धरती की ओर खिंच आवे। उसके नीचे गिरने की चाल

बहुत तेज होती, इसलिए हवा की रगड़ से बहुत ही गर्म होकर पिंजरे के जल जाने का डर था। इस वजह से उस पिंजरे की उल्टी दिशा में ऐसे पख आदि लगा दिए गए थे, जो गिरने की चाल को कम करते हैं। जब पिंजरा धरती के निकट आता तो उसमें लगा हुआ पैराशूट आप से आप खुलकर पिंजरे की रफ्तार को काबू मे कर लेता। इस प्रकार कुत्ता सही सलामत पृथ्वी पर उतर आता। किन्तु इतना कुछ करने के बाद भी लगभग ८ दिन के बाद ऑक्सीजन की कमी के कारण कुत्ता मर गया। उसके बाद अमरीका भी 'एक्सप्लोरर' नाम का एक छोटा नकली चांद छोडने मे सफल हुआ। फिर १५ मई सन् १९५८ को रूस ने तीसरा स्पुतनिक आकाश मे छोडा है। वह पृथ्वी से लगभग ११६८ मील की दूरी पर चक्कर लगा रहा है। एक चक्कर पूरा करने मे उसे १०८ मिनट लगते है। उसका वजन करीब साढ़े तीस मन है।

अनुमान किया जाता है कि स्पुतनिको से प्राप्त जानकारी के आधार पर रूस और अमरीका के वैज्ञानिक ऐसे राकेट तैयार कर सकेंगे, जिनमे बैठकर मनुष्य भी हजार डेढ हजार मील की ऊँचाई पर पृथ्वी के चारो ओर चक्कर लगा सकेगा, और फिर धरती पर सकुशल वापस भी आ सकेगा।

शायद वह दिन दूर नही जब रूस के वैज्ञानिक आकाश मे ऐसे राकेट भी छोड सकेंगे जो धरती से बहुत दूर पहुँचकर चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति की पकड मे आ जाएँगे, और तब चन्द्रमा के चारो ओर चक्कर लगाएँगे। उन राकेटो से हमें चन्द्रमा के बारे मे नई जानकारी मिलने की आशा है।

१००० मील फी घटे की रफ्तार से चॉद तक पहुँचने में १० दिन लगेंगे, सलिए राकेट का रुख उधर को रखना पडगा जिधर १० दिन में चॉद पहुँचने वाला होगा और लौटने में उसका रुख उधर रखना होगा जहाँ २० दिन बाद पृथ्वी की स्थिति होगी।



चन्द्रमा तक पहुँचने की कोशिश

राकेट और नकली चांद की ईजाद ने मनुष्य के मन मे यह आशा जगाई है कि वह जल्दी ही एक दिन राकेट मे बैठकर चन्द्रमा की सैर कर सकेगा। विज्ञान के बडे बड़े पडित इस कोशिश में लगे हुए हैं कि वे ऐसे राकेट जल्द तैयार कर ले जो इसान को चन्द्रमा तक पहुँचा सके।

धरती से चन्द्रमा की दूरी लगभग ढाई लाख मील है। इसलिए धरती से चला हुआ राकेट अपनी ताकत से वहाँ नही पहुँच सकेगा। चन्द्रमा तक पहुँचने के लिए जरूरी है कि आकाश मे करीब करीब १,००० मील की ऊँचाई पर नकली चाँद की तरह एक बनावटी प्लेटफार्म बनाया जाए। वहाँ तीन राकेटो को एक साथ एक के पीछे एक जोड़कर 'हवाई राकेट' बनाया जाए। उस प्लेटफार्म से दागने पर वे राकेट, बारी बारी से धडाका करके, हवाई राकेट को चन्द्रमा तक पहुँचा सकेंगे। ऐसे राकेटो की चाल शुरू मे लगभग २५ हजार मील फी घटा होगी। काफी ऊँचाई पर पहुँचने के बाद हवाई राकेट के इजिन को बद कर दिया जाएगा। और तब उसके आगे चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति से खिचकर ही वह चन्द्रमा तक पहुँच जाएगा। चन्द्रमा के करीब पहुँच कर उसकी चाल इतनी कम कर दी जाएगी कि चन्द्रमा पर उतरते समय उसे धक्का न लगे। फिर इजिन को चालू करके उसी तरह वापसी भी सम्भव होगी। इस प्रकार हमें चन्द्रमा तक आने जाने मे कुल १० दिन लगेंगे। चन्द्रलोक की यात्रा का यह सपना शायद दस बरस मे ही पूरा हो जाए।

(२) संदेशा भेजने के नए साधन

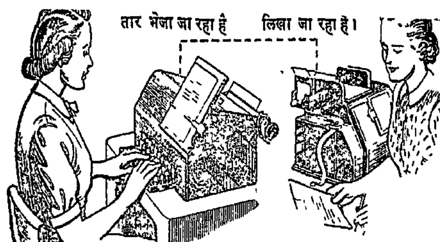
बहुत पुराने जमाने में दूर तक संदेशा भेजने के लिए लोग नगाड़े की आवाज, धुंए और सूरज की किरणों आदि से मदद लेते थे। बाद में लम्बे फासले तक सदेशा पहुँचाने के लिए घुड़सवार हरकारों से काम लिया जाने लगा। सडके बन जाने के बाद घोड़ागाड़ी, रेलगाड़ी और फिर मोटरें भी इस काम के लिए इस्तेमाल होने लगीं। हाल में हवाई जहाज भी इस काम में आने लगे हैं। पर बिजली के आविष्कार के बाद इस काम के लिए बिजली ही सबसे उत्तम और उपयोगी साधन साबित हुआ।

यदि किसी लोहे के टुकडे पर ऐसा तार लपेट दिया जाए जो धागे से ढका हो और तार के दोनो सिरो को बैटरी से जोड़ दे, तब उस तार मे बिजली की धारा तेजी से बहेगी और लोहे का टुकड़ा चुम्बक बन जाएगा। नजदीक रखे लोहे के दूसरे नन्हे टुकडो को वह अपनी ओर खीच लेगा। धारा के बन्द होने पर वह चुम्बक अपना गुण खो देगा और लोहे के टुकड़े को अपनी ओर नही खीच सकेगा। इस तरह के चुम्बक को बिजली का चुम्बक कहते हैं। तार के यत्र मे बिजली का ही चुम्बक इस्तेमाल होता है।

तार के यन्त्र के खास हिस्से ये होते हैं (१) मोर्स कुजी, (२) साउण्डर, जो आवाज़ पैदा करता है, (३) तार की लाइन, और (४) बैटरी।

तार को ईजाद करनवाले कार्ल्स मारिसन पहला तार भज रहे हैं





संदेशा भेजने-वाले स्थान से मोर्स कुंजी के सिरे को दबाने से बैटरी का सम्बन्ध दूसरे स्थान के साउण्डर से जुड जाता है। सम्बन्ध जुडते ही साउण्डर का बिजलीवाला चुम्बक लोहे की एक पट्टी को नीचे की ओर खींचता है, जो एक पेच से टकराकर 'गट्ट' की आवाज़ पैदा करती है। कुजी के सिरे को छोड़ देने से सिरा ऊपर उठ जाता है, बैटरी का सम्बन्ध साउण्डर से टूट जाता है और साउण्डर के चुम्बक की खीचने की शक्ति के खत्म होते ही लोहे की पट्टी ऊपर उठती है और एक पेच से टकराकर फिर 'गट्ट' की आवाज पैदा करती है। मोर्स नाम के वैज्ञानिक ने अंग्रेजी के हर अक्षर के लिए इशारे बना दिए है। जिन्हे 'मोर्स इशारे' कहते है। उन इशारों के सहारे 'गट्ट गट्ट' की आवाजो को अक्षरो मे लिख लिया जाता है।

तार भेजने के लिए तारों की एक लाइन खम्भों के सहारे खीची जाती है। बिजली की धारा बैटरी में से निकल कर तार मे से होकर जाती है, लेकिन वापस वह धरती मे से होकर लौटती है। इस तरह तार की इकहरी लाइन से ही काम चल जाता है।

तार से भेजी हुई खबरो को केवल वही समझ सकता है जो मोर्स के इशारो को जानता हो। लेकिन टेलीफोन पर की गई बात को हर कोई समझ सकता है और हर कोई टेलीफ़ोन पर बात कर सकता है। पर टेलीफ़ोन द्वारा बात करने मे एक जगह से दूसरी जगह खुद हमारी आवाज नही जाती, बल्कि पहले हमारी आवाज बिजली की लहरों में बदल



टेलीफोन यन्त्र का एक भाग

जाती है। फिर ये लहरें टेलीफोन के तार पर होकर दूसरे छोर पर पहुँचती हैं और वहाँ के पर्दे उन लहरों को फिर आवाज मे बदल देते हैं।

टेलीफोन का आविष्कार ग्राहम बेल नाम के एक अमरीकी वैज्ञानिक ने किया था। इसीलिए ग्राहम बेल को टेलीफोन का जन्मदाता कहते है। टेलीफोन यंत्र के खास पुर्जे ये होते है (१) माइक्रोफोन, (२) बैटरी, (३) लाइन और (४) रिसीवर।

माइक्रोफोन एक छोटी डिबिया की शक्ल का होता है। उसमे कार्बन के कण भरे होते है और उसके सामने कार्बन का एक चादरनुमा पर्दा लगा होता है। माइक्रोफोन के सामने बोलने पर हवा मे आवाज की लहरे पैदा होती है। ये लहरे माइक्रोफोन के पर्दे पर थरथराहट पैदा करती है। कार्बन के पर्दे की थरथराहट की वजह से माइक्रोफोन में बहनेवाली बिजली की धारा मे चढाव उतार पैदा होता है। वही धारा टेलीफोन के तार की लाइन पर से होकर टेलीफोन के रिसीवर तक पहुँचती है। तार का सिरा रिसीवर मे रखे एक चुम्बक से जुडा होता है।

टेलीफोन के तार न केवल धरती पर ही बिछे है, बल्कि उनके जाल समुद्र की तह मे भी फैले हुए है। उन्ही तारों की मदद से समुद्र पार देश के लोगों से भी टेलीफोन पर बात कर सकते है।

तार और टेलीफोन द्वारा हम उन्ही जगहो को सदेशा भेज सकते है, जहाँ तार या टेलीफोन की लाइन खिची हुई हो। सदेशा भेजने की यह मजबूरी लोगो को खलने लगी। इसलिए वैज्ञानिक इस कोशिश मे लगे कि

विना तार की मदद के वे दूर देश के लोगों से वातचीत कर सकें। इस कोशिश में उन्होंने सफलता पाई और रेडियो की ईजाद हुई। इटली के एक इंजीनियर मार्कोनी ने रेडियो का सबसे पहला यंत्र वनाया।

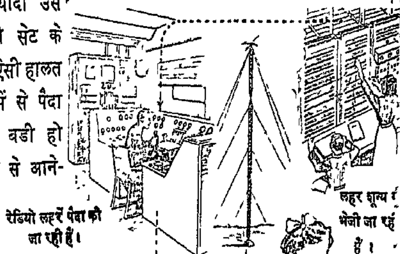
मार्कोनी

स्टूडियो, यानी एक खास तरह के बन्द कमरे के अन्दर माइक्रोफोन के सामने वोलने से आवाज़ की लहरें माइक्रोफोन के पर्दे से टकराती हैं और उस पर्दे पर थरथराहट पैदा करती हैं। उसी थरथराहट के कारण माइक्रोफोन की बिजली की धारा मे चढ़ाव उतार पैदा होता है। अब एक वड़े 'वाल्व', या एक तरह के बल्व के ज़रिए बिजली की रेडियो-लहरें पैदा की जाती हैं। वे लहरे विना किसी सहारे के शून्य मे तेज रफ़्तार से आगे बढ़ती हैं। उनकी रफ़्तार प्रति सेकेंड १ लाख ८६ हजार मील होती है।



एक आदमी माइक्रोफ़ोन म बोल रहा है।

रेडियो की वे लहरे दूसरे छोर पर रेडियो सेट मे अपना असर डालकर उसमे वही आवाज़ पैदा करने लगती हैं, जिसे लेकर वे चली थी। यह असर सबसे ज्यादा उस समय होगा जब रेडियो सेट के डायल को घुमाकर उसे ऐसी हालत मे लाया जाए कि उसमें से पैदा होनेवाली लहरें उतनी ही वडी हो जाएँ जितनी वड़ी वाहर से आने-


रेडियो लहरें पैदा की जा रही हैं।

लहर शून्य में भेजी जा रही हैं।


आता है।

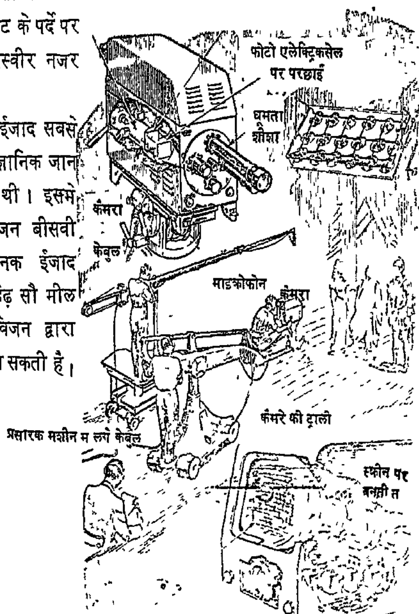
वाली रेडियो-लहरे होती है।

दूर से आने के कारण रेडियो-लहरे कमजोर पड़ जाती हैं। इसलिए रेडियो सेट मे इस बात का प्रबन्ध रहता है कि उन लहरो की शक्ति बढा ली जाए। जिस पुर्जे के कारण रेडियो सेट से जोर की आवाज निकलती है, उसे लाउडस्पीकर कहते है। रेडियो-लहरो को सीधे 'लाउडस्पीकर' मे नही ले जा सकते, क्योकि रेडियो-लहरो की थरथराहट की रफ्तार बहुत तेज होती है, यानी एक सेकेंड मे करीब एक लाख बार। लाउडस्पीकर की बनावट टेलीफोन के रिसीवर जैसी होती है, और उसका पर्दा उतनी तेजी से थरथराहट नही पैदा कर सकता जितनी तेजी से रेडियो-लहरे पैदा कर सकती है। इसलिए रेडियो-लहरो से बिजली की धारा के चढ़ाव उतार को अलग करना जरूरी होता है। यह काम रेडियो सेट मे लगा हुआ 'डिटेक्टर वाल्व' करता है। अन्त में चढाव उतार की वह धारा लाउडस्पीकर के चुम्बक पर लिपटे तारो में बहने लगती है। उस लहर के उतार चढाव के साथ साथ चुम्बक का खिचाव भी घटता बढता रहता है। खिचाव के घटने बढ़ने से उसके सामने लगे लोहे के पर्दे मे भी थरथराहट पैदा होती है, और पर्दे के सामने ठीक उसी तरह की आवाज पैदा होती है, जैसी दूसरी तरफ स्टूडियो मे माइक्रोफ़ोन के सामने पैदा की जाती है।

दूर की खबरे सुनने के लिए तार आदि बिछाने का झंझट जब रेडियो ने खत्म कर दिया, तब दूर से बोलनेवाले की शक्ल देखने की कोशिश होने लगी। इसी से टेलीविजन का आविष्कार हुआ। टेलीविजन मे भी रेडियो की लहरे काम मे लाई जाती है। जिसकी शक्ल देखना होती है उसके चेहरे पर तेज रोशनी की किरणे डाली जाती है। फिर फोटो कैमरे

द्वारा उसके चेहरे की परछाई एक फोटो-एलेक्ट्रिक सेल पर डाली जाती है। इस तरह चेहरे पर जो रोशनी पडती है, उसके चढाव उतार के अनुसार फोटो-एलेक्ट्रिक सेल मे बिजली की एक धारा पैदा होती है, और उसमे भी चढाव उतार होता है। उसी धारा को रेडियो-लहरों पर चढा दिया जाता है। वे लहरे आकाश मे चारो ओर तेजी से फैलकर टेलीविजन के रिसीविंग सेट मे पहुँच जाती है। वहाँ कुछ वाल्व की मदद से बिजली की धारा को रेडियो-लहरो से अलग कर लिया जाता है, और रिसीविंग सेट मे बिजली के जर्रे पैदा किए जाते है। रेडियो-लहरो से अलग होने के बाद बिजली की धारा उन जर्रों की रफ्तार को घटाती बढाती है। तब वे जर्रे एक ऐसे कॉंच के पर्दे पर गिरते है, जिस पर एक खास किस्म का मसाला पुता होता है। जहाँ जहाँ जर्रे गिरेंगे, वहाँ वहाँ का मसाला चमक उठेगा और रिसीविंग सेट के पर्दे पर दूर से बोलनेवाले की तस्वीर नजर आने लगेगी।

टेलीविजन की ईजाद सबसे पहले इंग्लैंड के एक वैज्ञानिक जान बेयर्ड ने १९२६ मे की थी। इसमे शक नही कि टेलीविजन बीसवी सदी की एक आश्चर्यजनक ईजाद है। अभी करीब सौ डेढ़ सौ मील की दूरी तक ही टेलीविजन द्वारा किसी की शक्ल देखी जा सकती है।



घूमती एरियल ... को ... है।

कप्तान ... ओर की चीजों की छाया मशीन में देख रहा है।

जहाज के ... घूमता हुआ ...

... ऐसी मशीन भी बन गई है कि रातों और दूर की चीजों को भी देखा जा सके।

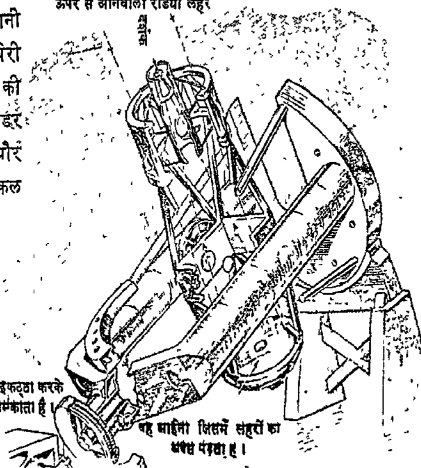
रात के अंधेरे में तथा तूफान या घने कुहरे में भी जहाज ... । ... की ... की ओर ... जाती है। राडार में काम लेने के लिए भी रेडियो की अतिलघु तरंगें ही काम में लाई जाती हैं। राडार यंत्र से रेडियो लहरें चलती हैं और दूर की चीजों से टकराकर फिर उसी यंत्र में वापस आ जाती हैं। यह यंत्र उन्हें ग्रहण करके फौरन उस चीज की दिशा का भी पता दे देता है। जिस तरह तेज चोर-बत्ती की रोशनी जब किसी चीज से टकरा कर दोबारा हमारी आँखों तक पहुँचती है, तो वह चीज हमें दीख जाती है, उसी तरह राडर से जानेवाली लहरें अँधेरे और कुहरे को चीरती हुई जब दूर की चीजों से टकराकर वापस लौटती हैं, तो हमें पता लग जाता है कि वह चीज किस दिशा में है।

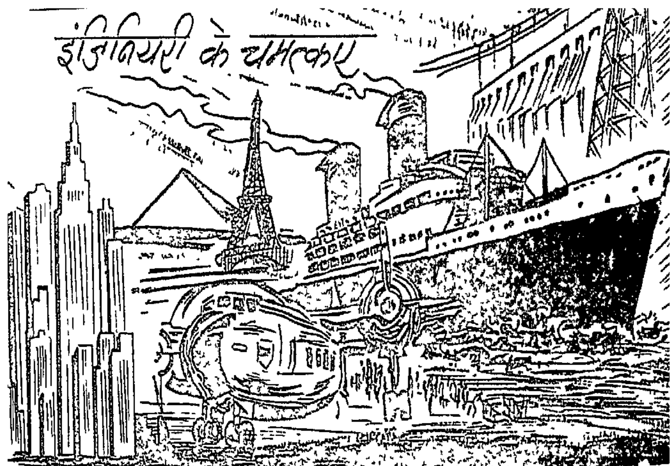
यह हम जानते ही हैं कि रेडियो लहरें एक सेकेंड में १ लाख ८६ हजार मील का फ़ासला तै करती हैं। इसलिए उनके आने जाने का समय

नापकर हम तुरन्त ही यह मालूम कर सकते है कि जिस चीज से लहर टकराकर वापस आई है, वह चीज कितनी दूर है। राडर के कॉच के पर्दे पर एक पैमाना लगा रहता है। जब लहरे किसी चीज से टकराकर वापस आती है, तो उस पर्दे पर रोशनी की एक लकीर प्रकट होती है और पैमाना तुरत उस चीज की दूरी बता देता है।

राडर की ही मदद से मनुष्य पहली बार चन्द्रमा से अपना सम्बन्ध जोड़ सका है। सन् १९४६ मे राडर से रेडियो-लहरे चन्द्रमा की ओर भेजी गई। ठीक ढाई सेकेड बाद वे चन्द्रमा से टकराकर राडर पर वापस आई और तुरत पृथ्वी से चन्द्रमा की दूरी नापी जा सकी।

राडर से ही अँधेरी रात मे भी दुश्मन के हवाई जहाज का पता आसानी से लगा लिया जाता है। शाति के दिनो मे राडर की मदद से घने कुहरे में भी हवाई जहाज बिना किसी खतरे के उडते है। हवाई जहाज का पाइलट या ड्राइवर राडर से यह पता लगा लेता है कि वह कितनी ऊँचाई पर है और किस दिशा में उड रहा है। हवाई जहाज को हवाई अड्डे पर सही सलामत उतारने मे भी राडर की मदद ली जाती है। पानी का जहाज भी अँधेरी रातो मे हिमशिलाओं की दूरी और दिशा का राडर से पता लगा लेते है, और उनसे बचकर निकल जाते है।





वोल्गा नदी के बाँध, नहरें और पनबिजलीघर

वोल्गा युरोप की सबसे बडी नदी है। उसकी लम्बाई २,३०० मील है। वह सोवियत यूनियन के युरोपीय हिस्से के एक बडे इलाके से गुजरती हुई कैस्पियन सागर मे गिरती है। सोवियत यूनियन की लगभग एक चौथाई आबादी वोल्गा की घाटी मे ही बसती है। वोल्गा का उत्तरी इलाका जगलों से ढका हुआ है, और दक्खिन मे बड़े बडे स्तेपी के मैदान हैं, जो आगे चलकर कैस्पियन सागर के पास कुछ रेतीले हो जाते है।

पहले समझा जाता था कि वोल्गा इलाके की धरती बाँझ है। उसमे न कुछ पैदा हो सकता है और न उसके अदर कोई धातु है।

लेकिन हाल की खोजों मे वहाँ बड़े काम की धातुएँ मिली है ।

पहले वोल्गा और उसकी सहायक नदियो का अथाह पानी या तो बेकार समुद्र का पेट भरता था या बाढ के दिनों मे हजारो गाँवो की खेतियाँ नष्ट कर देता था और वोल्गा की घाटी के दक्खिनी इलाके सूखे पडे रहते थे। उधर मध्य एशिया की सूखी हवाएँ स्तालिनग्राद के इलाके के पेड पौधों को झुलसा देती थी।

अन्त मे सोवियत शासन कायम होने पर वोल्गा और उसकी सहायक नदियों पर क़ाबू पाने की योजना बनी। इस योजना के अनुसार काम करके सन् १९३७ और १९४१ के बीच वोल्गा के ऊपरी हिस्से मे, इवानकोवो, उग्लिच और श्चेर्बाकोव के पास तीन बड़े बडे जलागार और तीन बिजलीघर बनाए गए। उनमे श्चेर्बाकोव का जलागार सबसे बड़ा है। उसका रकबा १७५५ वर्ग मील है, उसमे ३१ 1/2 अरब घन गज पानी आता है। वोल्गा के किनारे किनारे जलागार और पनबिजलीघर बनाने के साथ साथ ८० मील लम्बी एक नहर भी बनाई गई। वह नहर वोल्गा को मास्कवा नदी से जोड़ती है। मास्कवा नदी मास्को शहर के बीच से होकर बहती है।

इस तरह ऊपरी वोल्गा को बस मे कर लेने का नतीजा यह हुआ कि वोल्गा के किनारे की सब बस्तियों और शहरों का व्यापार नदी के रास्ते मास्को नगर के साथ होने लगा। पूरा इलाका चमक उठा। बिजली से रोशन इस समूचे इलाके मे नए नए उद्योग धंधे चल पडे और बड़े बड़े शहर बस गए।

दूसरा महायुद्ध छिड जाने से काम रुक गया था। लेकिन लड़ाई बंद होते ही फिर पूरे जोर शोर से काम शुरू हो गया, और एक बहुत बड़ी नई नहर बनाकर वोल्गा को दोन नदी से मिला दिया गया।

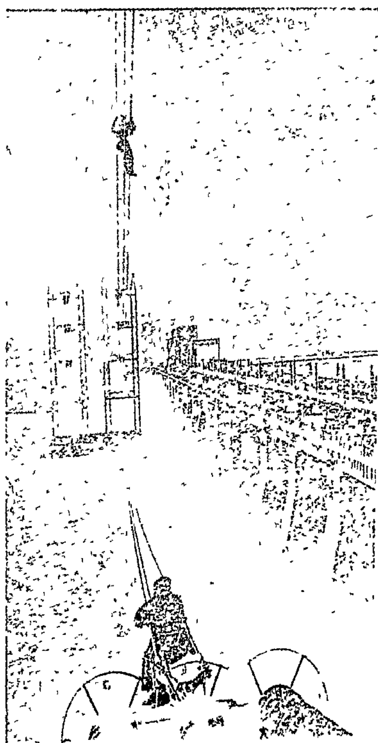
इस नहर को 'वोल्गा-दोन-नहर' कहते है, जो इंजीनियरी का अनोखा चमत्कार है, और जिसने सोवियत रूस की जहाजरानी में एक इनकलाब पैदा कर दिया है। कारण यह है कि उस नहर की बदौलत वोल्गा और दोन नदियो का ही गठबंधन नही हुआ, बल्कि पांच सागर भी एक दूसरे से जुड गए। उन सागरों के नाम हैं—श्वेत सागर, बाल्टिक सागर, केस्पियन सागर, अजोव सागर और काला सागर। इस तरह रूस की सबसे बडी नदी वोल्गा का सारी दुनिया के साथ सम्बन्ध जुड़ गया।

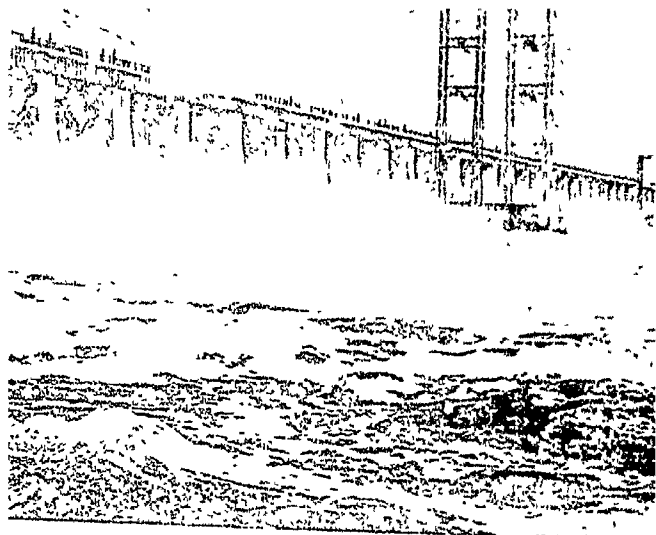
वोल्गा-दोन-नहर की खास चीजें त्सिम्लियास्कोये का जलागार और बिजलीघर हैं। रूसवाले उस जलागार को कृत्रिम सागर कहते है। सचमुच वह इतना बडा है कि सागर कहना गलत नही है। दोन नदी पर बाँध बनाकर उस कृत्रिम सागर मे लगभग १६½ अरब घन गज पानी भर दिया गया है। वहाँ जो बिजलीघर बनाया गया है, उससे १,६०,००० किलोवाट से अधिक बिजली फी घटे तैयार हो सकती है।

वोल्गा-दोन-नहर का बनना एक इनकलाबी बात है। दक्खिन के सूखे मैदानो के लिए भी, जिन्हे स्तेपी कहते है, वह नहर आगे चलकर वरदान सिद्ध होगी, क्योकि उससे स्तालिनग्राद के दक्खिन और पच्छिमी इलाको और रोस्तोव के पूरे इलाके की लगभग ४९½ लाख एकड़ जमीन की सिंचाई हो जायगी। रूस के दक्षिण पूर्वी हिस्से के किसान अब सूखे और अकाल के शिकार न होंगे। विज्ञान के जानकार लोगो का कहना है कि अब वहाँ कपास और धान जैसी चीजे भी पैदा की जा सकती है, जिनका वहाँ होना पहले असम्भव माना जाता था।

वोल्गा को वस में करके उससे अधिक से अधिक फायदा उठाने का काम इधर और बढा है। गोर्की शहर मे बाँध बनाकर वोल्गा के पानी की सतह को लगभग ७० गज ऊँचा किया गया है, और वहाँ एक बडा पनबिजलीघर बनाया गया है। इसी तरह जिगुली पहाडी के पास कुइबिशेव नगर मे भी वोल्गा पर बाँध बनाकर उसके पानी की सतह को २७गज १फुट ऊँचा किया गया है, और वहाँ एक बहुत बडा जलागार बनाया गया है, जिसे 'जिगुलेवु कोये सागर' भी कहते है। उसकी लम्बाई ३१२½ मील है और चौड़ाई करीब २५ मील। उसमें ६७½ अरब घन गज पानी आता है, और उससे २४¾ लाख एकड जमीन सींची जा सकती है। कुइबिशेव का पनबिजलीघर फी घटा २१ लाख किलोवाट बिजली तैयार कर सकता है। वहाँ तैयार होनेवाली बिजली को मास्को तक पहुँचाने के लिए ५६२½ मील तार और हजारो खम्भे लगाए गए है।

वोल्गा का महान बाँध





वोल्गा पर बना संसार का सबसे बड़ा पनबिजलीघर

स्तालिनग्राद में भी एक विशाल बाँध और पनबिजलीघर बन रहा है। वहाँ वोल्गा से पूरब की ओर एक नहर निकाली गई है, जो ३७५ मील लम्बी है। स्तालिनग्राद में जो पनबिजलीघर बन रहा है, उससे फी घंटे १७ लाख किलोवाट बिजली तैयार होगी।

कुइबिशेव और स्तालिनग्राद के जलागार कितने बड़े हैं, इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि उनसे सींची जानेवाली जमीन का रकबा हालैण्ड, बेलजियम, डेनमार्क, स्विट्जरलैंड को मिलाकर उनके कुल रकबे के बराबर होगा। इसी तरह वहाँ तैयार होने वाली बिजली सन्

१९१७ से पहले पूरे रूस मे तैयार होने वाली विजली का दस गुना होगी।

कुइविशेव और स्तालिनग्राद के पनबिजलीघर वोल्गा के पनविजलीघरों की लड़ी मे सवसे वड़े हैं। कुइविशेव के वारे मे तो रूसवालों का दावा है कि वह दुनिया का सवसे वडा पनविजलीघर है।

(२)

हूवर बाँध

हूवर बांध अमरीका की प्रसिद्ध नदी कोलेरेडो पर बना हुआ है। वह एरिजोना और नेवादा राज्यो के बीच मे है। वह ७२७ फुट ऊँचा है और कंक्रीट का बना हुआ है। उसकी शक्ल कमान जैसी है।

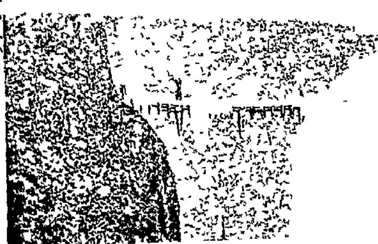
कोलेरेडो नदी बर्फ़ीले पहाड़ो से निकलती है। उसके ऊपरी भाग में मूसलाधार वर्षा होती है। बाँध बनने से पहले वह कैलीफ़ोर्निया की खाड़ी तक फ़सले बरबाद कर देती थी। मामूली तौर पर उस नदी मे फ़ी सेकेंड लगभग २,००० घनफ़ुट पानी वहता है, जो बाढ़ के ज़माने में २,००,००० घनफुट फ़ी सेकेंड हो जाता है।

इसलिए कोलेरेडो के पानी को सिचाई के लिए ज्यादा से ज्यादा

उपयोगी बनाने के लिए दिसम्बर सन् १९२८ में अमरीकी कांग्रेस ने एक कानून बनाया। उस कानून द्वारा यह तै किया गया कि ८५ करोड़ रुपए के खर्च से उस नदी पर एक बाँध बनाया जाए। कानून बनने के बाद बाँध की योजना और नक्शे वगैरह तैयार करने मे लगभग दो साल लग गए, और १९३० मे बाँध बनाने का काम शुरू हुआ। पूरे पाँच साल की मेहनत के बाद सन् १९३५ मे वह बाँध बना।

जिस जगह बाँध बनाना तै हुआ वहाँ नदी का पाट २६० फ़ुट से ५०० फ़ुट तक चौड़ा था, और उसके दोनो किनारो पर १,००० फ़ुट से ५०० फ़ुट तक ऊँचे पहाड़ थे। ऐसे बाँधो के बनाने का काम शुरू करना भी बहुत कठिन होता है। आने जाने और माल लाने ले जाने के लिए पहले रेले और सड़के वगैरह बनाई गई। काम करनेवालों के रहने के लिए मकान आदि बनाए गए। इस तरह वहाँ एक पूरा शहर आबाद हो गया। मगर बाँध बनाने से पहले सबसे जरूरी यह था कि नदी का बहाव दूसरी तरफ़ को मोड़ दिया जाए। उसके लिए नदी के दोनो ओर पचास पचास फुट व्यास की दो दो सुरंगे बनाई गईं, जिनमे से हर एक सुरंग की लम्बाई ४,५०० फ़ुट थी। पथरीली चट्टानों मे इतनी बडी बडी सुरगे खोदना कोई मामूली काम नही था। उसके बाद पत्थर तोडने, बजरी बनाने, रेत छानने, कंक्रीट (रोडी) आदि बनाने के लिए बडी बडी मशीने तैयार

हूवर बाँध जहाँ बनाया गया है, वहाँ केवल खडे नगे पहाडों से घिरा बियावान ही था, कोई बस्ती नहीं थी। जब बाँध का कार्य आरंभ हुआ तो वहाँ सरकार को ५,००० मजदूरो और उनके परिवारो के लिए एक नगर बसाना पडा।



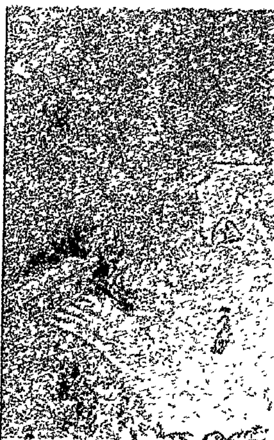


की गई। शुरू के उन कामो मे दो साल और लगभग सत्रह करोड रुपए खर्च हुए।

नदी का बहाव मोड देने के बाद नवम्बर १९३२ मे नीव की खुदाई शुरू हुई। कुल लगभग १६ लाख घन गज मिट्टी खोदी गई, जिस पर लगभग ढाई करोड़ रुपए खर्च हुए। खुदाई का काम रात दिन होता था और वह तखमीने से २८ महीने पहले, जून १९३३ मे पूरा हो गया। उसके बाद जून १९३३ मे ही रोड़ी डालने का काम शुरू हुआ। पत्थर तोड़ने और रेत छानने से लेकर कंक्रीट को बाँध की जगह ले जाकर डालने तक का सारा काम मशीनों से होता था। बाँध मे जगह जगह कंक्रीट डालने के लिए बड़ी बड़ी बाल्टियाँ थी, जिन्हें लोहे के रस्सों पर चलनेवाली ट्रालियाँ ऊपर ले जाती थी। हर बाल्टी मे ७ घन गज कंक्रीट आता था, जिसका वजन ३५० मन होता था।

बाँध के पास ही नीचे की ओर २०० फुट ऊँचा और १५०० फुट लम्बा बिजलीघर बनाया गया, उसमे १७ मशीने लगी है, जिनमे से पन्द्रह तो एक लाख पन्द्रह हजार हार्स पावर की, और दो ५५,००० हार्स पावर की है। बिजलीघर तक पानी पहुँचाने के लिए बाँध मे तीस तीस फुट व्यास के चार पाइप भी लगाए गए है। तब के अमरीकी राष्ट्रपति हूवर ने ३० सितम्बर १९३५ को उस बाँध का उद्‌घाटन किया। उन्ही के नाम पर उसे हूवर बाँध कहते है।

सुप्रसिद्ध हूवर बाँध के पानी के निर्गत का दृश्य बाँध की मुख्य दीवार चित्र में नहीं दिखाई पड़ रही

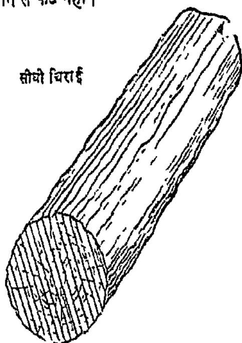




लकड़ी का काम

इमारत आदि के लिए लकड़ी का चुनाव करते समय यह देखना चाहिए कि लकडी भारी और टिकाऊ हो, और मौसम के असर से न सिकुडे न टेढी हो। उसमे रेशे कम हो ताकि वरमा या रुखानी लगाने से फटे नही।

कटाई और चिराई के लिए हमेशा पक्की लकड़ी का प्रयोग करना चाहिए। चिराई दो तरह से होती है। एक तो लकडी की सीधी चिराई दूसरी किरनों के अनुसार चिराई। पक्की लकड़ी के कटे हुए गोल सिरे के वीचोवीच लकड़ी का कुछ भाग काला सा दिखाई देता है। यह काला भाग लकड़ी की लम्बाई में आर पार पाया जाता है। इसे रेत या लकड़ी की मज्जा कहते है। गौर से देखने पर रेत से छाल की ओर वहुत सी सीधी धारियाँ जाती हुई दिखाई देगी। इनको ही लकड़ी


सीधी चिराई

किरनो के अनुसार चिराई

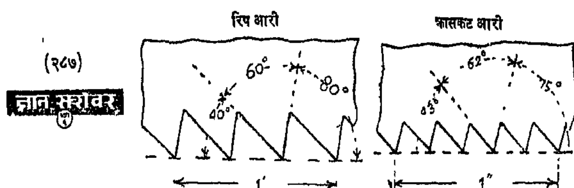


को किरन कहते हैं। इन्ही धारियों पर चीरने को किरनो के अनुसार चिराई करना कहते हैं। इस चिराई मे बहुत सी लकडी बेकार जाती है और समय भी काफी लगता है, परन्तु लकड़ी के सिकुडने या फैलने का डर नही रहता।

लकड़ी दो तरह से सुखाई जाती है। सुखाने का एक ढंग तो यह है कि लकड़ी को खुली हवा में, या १५ दिन पानी मे डालकर, तब हवा मे सुखाते है। दूसरा ढग यह है कि खास तरह के बने हुए कमरों मे लकडी को रख देते है, और वैज्ञानिक ढग से बनाए नलों द्वारा कमरे मे भाप छोडते है। भाप की नमी कमरे स बाहर निकल जाती है, लेकिन उसकी गरमी कमरे में ही बनी रहती है। उस गरमी से लकड़ी सूख जाती है। लकड़ी सुखाने का यह वैज्ञानिक तरीका बहुत महँगा पड़ता है, पर लकडी बहुत जल्दी काम मे आने लायक हो जाती है और उससे बढिया और कीमती चीजे बन सकती है। हवा द्वारा सुखाने के लिए जमीन पर दो इंच मोटी राख की तह बिछाकर उस पर लकड़ी का चट्टा लगा दिया जाता है। चट्टा लगाने मे इस बात का ध्यान रक्खा जाता है कि हवा सब लकडियो मे बराबर लगती रहे। धूप और वर्षा से बचाने के लिए चट्टे के ऊपर टीन या छप्पर छा देते है।

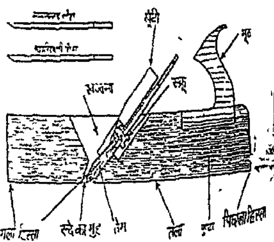
लकडी का काम दस तरह के औजारो से होगा (१) काटने के, (२) खुरचने के, (३) रन्दने के, (४) कतरने के, (५) जाँच करने के (६) सूराख करने के, (७) ढकेलने तथा खीचने के, (८) कसकर दबाए रखने के, (९) सहयोग देने के, और (१०) सफाई करने के।

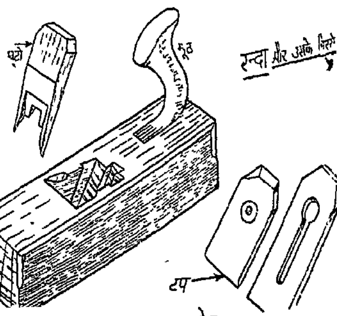
काटने के औजारों में दो तरह की आरियाँ होती है। एक सीध मे काटनेवाली, दूसरी गोलाई मे काटनेवाली। सीधे मे काटनेवाली आरियोंमे 'रिप' आरी २४से २८इंच तक और 'क्रासकट' २०से २६इंच तक

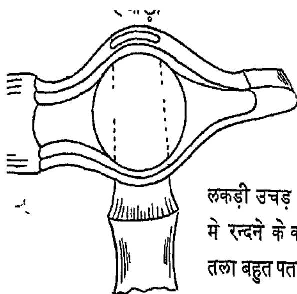


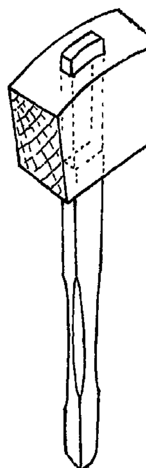
लम्बी होती है। लकडी को गोलाई मे काटने या उसमे घुमावदार नमूना वनाने के लिए गोलाई मे काटनेवाली आरी का प्रयोग होता है। वे छोटी बडी हर किस्म की होती है। उनमे से कुछ के नाम ये है, (क) धनुषाकार आरी, (ख) गोलाई मे काटनेवाली आरी, (कम्पास-सा), (ग) सूराख वनानेवाली आरी (होल सा), (घ) प्लाई काटने की आरी।

रन्दने के औजारो को रन्दा कहते है। रन्दे का प्रयोग लकडी को छीलने, चिकनाने और उसकी सतह को जरूरत भर नीची करने के लिए किया जाता है। रन्दे से लकडी पर मामूली खुदाई के नमूने भी बना सकते है। रन्दे आम तौर से कई तरह के होते है। वडे रन्दो की चौडाई और मोटाई सवा दो इच और लम्बाई १४ से १८ इच तक होती है। उनका काम लकड़ी की खुरदरी सतह को छीलकर उसको कुछ समतल और चिकना कर देना होता है। छोटे रन्दे साढे सात इच से लेकर ९ इच तक लम्बे, २ इच मोटे और दो इच चौडे होते हैं। बडे रन्दे के इस्तेमाल के वाद उसी लकडी को छोटे रन्दे से चिकनी और नाप के अनुसार समतल करते है। दूसरे किस्म के रन्दे वे होते है जिनसे लकडी के गोल या घुमावदार हिस्से रन्दे जाते है। उनकी भी दो खास किस्मे, स्पोक शेव और कम्पास प्लेन है। स्पोक शेव रन्दा हमेशा उस ओर चलाया जाता है जिधर लकड़ी के

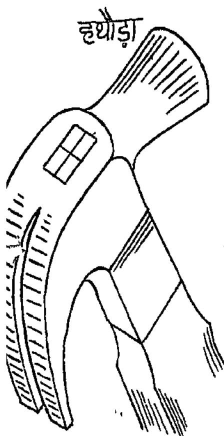




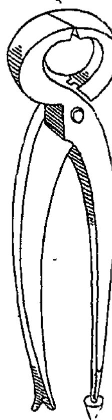




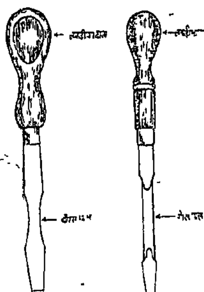
रेशों के रुख होते हैं, क्योंकि उसे उल्टा चलाया जाए तो लकड़ी उचड़ जाती है। कम्पास प्लेन गोलाई मे रन्दने के काम आता है। कम्पास प्लेन का तला बहुत पतला होता है और कमान की तरह इधर उधर घूम भी सकता है। तीसरी तरह के रन्दे वे होते हैं, जिनसे कारनिसों के नमूने बनाए जाते हैं। उनमे पताम रन्दा, गलता रन्दा, गुरुजखाप रन्दा, झिरी रन्दा आदि मुख्य हैं।



लकड़ी के जोड़ बैठाने के लिए, पेच या कील को फँसाने या अलग करने के लिए मुगरी, हथौडा, पेचकस और जम्बूर का प्रयोग किया जाता है। वे औजार छोटे बडे दोनो तरह के होते हैं।

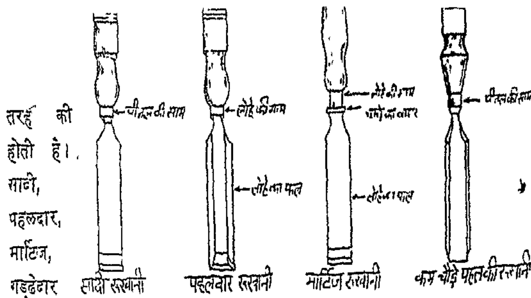


रुखानी, गोल्ची और बसूला काटने और कतरने के औजार हैं। गोल्ची से गोल या गहरी नाली सी बना सकते हैं। वे दो तरह की होती हैं। साधारण और स्क्राइविग गोल्ची नक्काशी के काम आती है। रुखानियाँ कई

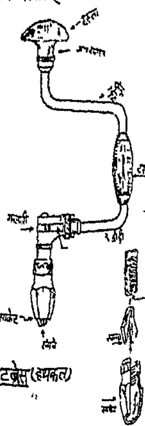




तरह की होती है। सादी, पहलदार, मार्टिज, गड्ढेदार और तिरछी धारवाली रुखानियाँ। वसूला काटने और छीलने के काम आता है।

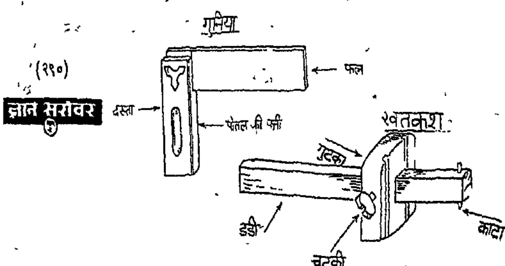


ब्रेस दो तरह के होते है, (१) सादा ब्रेस और (२) रैचेट ब्रेस। सादा ब्रेस उल्टा नही घूमता, जबकि रैचेट ब्रेस दोनो ओर घुमाया जा सकता है। उससे बडे बडे सूराख किए जा सकते है। छोटे सूराख के लिए बरमा होता है। बहुत छोटे छोटे पेच लगाने के लिए ब्राडल नामक एक चपटे, गोल और तेज धार के औजार का प्रयोग किया जाता है।


रैचेटब्रेस (हथकल)

गुनिया, बेविल, खतकश और विंग परकार से लकडी पर निशान बनाने का काम लिया जाता है। गुनिया और उसकी एक किस्म माइटर स्क्वायर से ठीक निशान लगाकर लकडी पर चौकोर कोने बनाते है। बेविल के फल की दस्ती घुमाई जा सकती। गुनिया की दस्ती कसी रहती है। बेविल द्वारा हर एक कोण पर समानान्तर रेखाएँ खीची जा सकती है। खतकश भी दो तरह के होते है। एक काटने वाले, दूसरे निशान लगाने वाले। एक साथ दो निशान लगानेवाले खतकश को

गुनिया



दोहरा खतकश कहते है। गोल निशान लगानवाल औजार को विग परकार कहते है। लकड़ी को मनचाहे कोण पर काटनेवाले यत्र को गेरिग-टूल कहते है।

लकड़ी के सामान की मजबूती असल मे जोड़ों पर निर्भर होती है। इसलिए जोड़ बहुत ही सावधानी से लगाने चाहिए। जोड़ तीन तरह से लगाए जाते है कील या पेच द्वारा, सरेस द्वारा और लकडी मे लकडी फँसा कर। दो लकडियों के आखिरी सिरो को मिलानेवाले जोड़ को टक्कर लगानेवाले जोड कहते है। उसकी खास क़िस्मे तीन है —

कोनो के जोड़

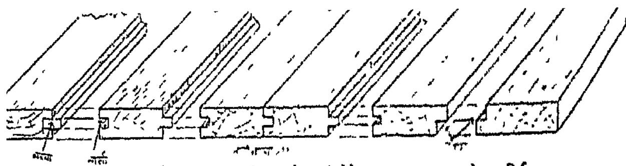
टक्करी जोड़

साधारण बट जोड़ | खांचे वाला जोड | नाली व चेका जोड़ | किनारे वाला जोड़ | चीप वाला जोड़ | चीप

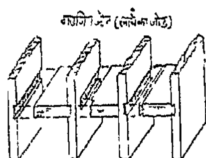
(क) साधारण बट जोड़—दो लकड़ियों को कील या सरेस से जोडने को कहते है। उसे टकरी जोड़ भी कहते है।

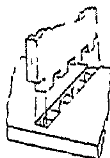
(ख) पताम जोड़—एक लकड़ी मे दूसरी लकडी की मोटाई के बराबर पताम बनाकर कील, पेच या सरेस से जोडने को पताम जोड़ कहते है। दोनो लकड़ियो मे पताम बनाकर जोडने को दोहरा पताम जोड़ कहते है। (चित्र पृ० २९२ पर)

(ग) डैडोवट जोड़—एक लकडी मे सामने की ओर झिरी, और दूसरी मे बच्चा बनाकर जोडने को डैडोवट जोड या नली बच्चा जोड़ कहते है। (चित्र पृ० २९२ पर)

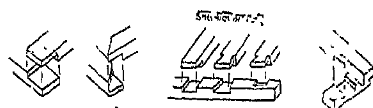


इनके अलावा हाउजिंग जोड़, रिबेटेड मास्टर बट जोड़, निकिल जोड़, खुला और अधखुला जोड़, बीम जोड़, बाक्स डवटेल जोड़ आदि टक्कर मिलानेवाले जोड़ की ही किस्में है।





साधारण हाउजिंग जोड़—एक लकड़ी में दूसरी लकड़ी की मोटाई के बराबर गड्ढा बनाकर बैठाने को साधारण हाउजिंग जोड़ कहते हैं।

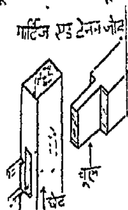


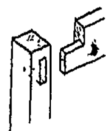
डमरूनुमा जोड़—एक टुकड़े की टक्कर को डमरूनुमा और दूसरे में वैसा ही खाँचा बनाकर जोड़ने को डमरूनुमा जोड़ कहते हैं।

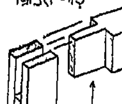
लैप्ड जोड़—दोनो लकड़ियो मे गड्ढा बनाकर जोडने को लैप्ड जोड कहते हैं।

ब्रिडिल जोड—टक्कर की तरफ लकडी मे तीन भाग करके बीच का हिस्सा निकालकर और दूसरी लकडी की टक्कर में भी तीन भाग करके उधर उधर के दो हिस्से निकालकर जोड़ देने को ब्रिडिल जोड़ कहते हैं।

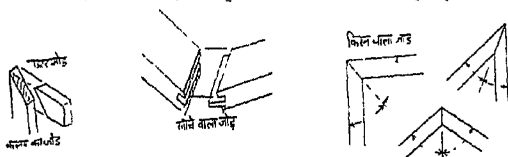
मार्टिज़ और टेनन जोड—एक लकडी मे चूल और दूसरी मे उसके बराबर छेद बनाकर जोडने को मार्टिज़ और टेनन जोड़ कहते है। ये भी कई तरह के होते है.



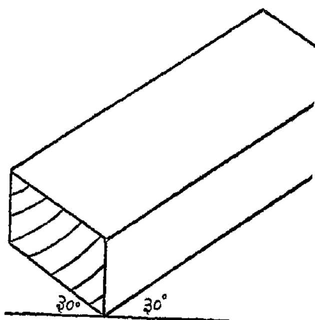




माइटर जोड़—तस्वीरों के चौखटे आदि बनाने के लिए लकड़ी के टुकड़े को ४५ के कोण पर काटा जाता है। फिर उन्हें अलग अलग कई तरह से जोड़ते हैं। उसे माइटर या कलम जोड़ कहते हैं।

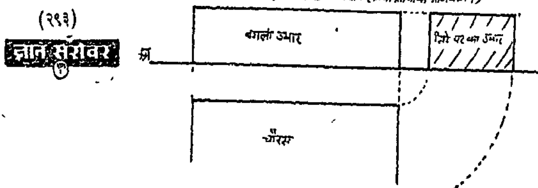


रंगों या लकीरों द्वारा किसी दृश्य या वस्तु का ऐसा आकार बनाना जिसे देखते ही असली चीज का ठीक ठीक अनुमान हो जाए उस दृश्य या वस्तु की ड्राइंग कहलाता है। ड्राइंग दो तरह की होती है, सुविक्षोप-द्रेखीय विक्षेप और समितीय विक्षेप। जब किसी वस्तु के भाग समतल, उभार या अलग अलग हिस्से अलग अलग दिखाए जाते हैं तो उसे सुविक्षोपद्रेखीय विक्षेप कहते हैं; और जब किसी वस्तु के तीनो भाग समतल, उभार या भिन्न भिन्न हिस्से साथ साथ दिखाए जाते हैं, तो उस स्थिति को समितीय विक्षेप कहते हैं। ड्राइंग के दोनों तरीके यहाँ दिए हुए चित्रों द्वारा भली भाँति समझे जा सकते हैं।



समितीय विक्षेप (आइसोमेट्रिक प्रोजेक्शन)

सुविक्षोपद्रेखीय विक्षेप (आर्थोग्राफिक प्रोजेक्शन)



जोड की तरह लकडी के सामान की मजबूती बहुत कुछ मुनासिब कील, स्क्रू और बोल्ट के इस्तेमाल पर निर्भर होती है।

स्क्रू की नोक तेज होनी चाहिए। उसकी चूडियाँ ठीक होनी चाहिए, ताकि लगाए जाते समय वे लकडी मे आसानी से अपना रास्ता बना सके। बोझिल या मोटी लकडियाँ जोडने मे नट-बोल्ट का उपयोग किया जाता है। बोल्ट की फुलिया जितनी ही चौडी होगी, बोल्ट की पकड उतनी ही मजबूत होगी। बोल्ट की डाँडी की मोटाई सूराख के अनुसार ही होनी चाहिए। डाँडी अगर पतली होगी तो उसकी पकड कमजोर होगी। बोल्ट को दूसरी ओर से ढिबरी द्वारा खूब कस देना चाहिए। यदि ढिबरी फिट न बैठती हो तो वाशर लगाकर ढिबरी को कस देना चाहिए।

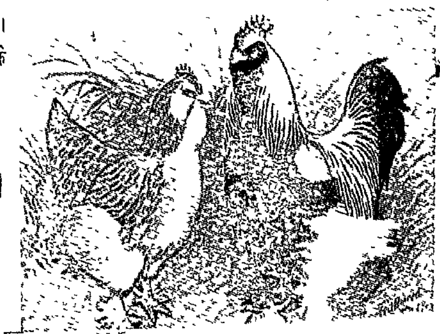
घरेलू उद्योग धधे

(२) मुर्गीखाना

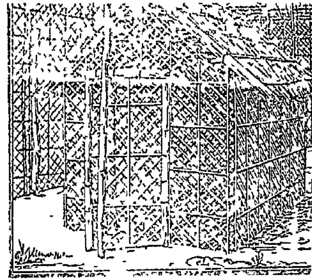
मुर्गी पालने का काम अब एक घरेलू धधा बन गया है। उसे सफलता से चलाने के लिए कुछ बातो का जानना जरूरी है।

प्रति मुर्गी तीन वर्ग फुट जगह की आवश्यकता होती है। थोड़ी जगह मे बहुत सी मुर्गियाँ भर देने से गंदगी बढती है और मुर्गियो मे तरह तरह की बीमारियाँ पैदा हो जाती है।

मुर्गियो के

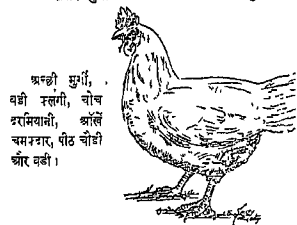


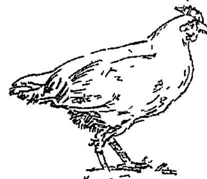
आराम करने की जगह को दरबा कहते है। सबसे अच्छा दरबा वह समझा जाता है जिसके ऊपर फूस का छप्पर हो और जिसमे चारों ओर जाली लगी हो। दीवारो की जगह लोहे के पोल गाड़कर उनके चारो ओर महीन छेद की जाली लगा दी जाए तो और अच्छा रहता है। तेज वर्षा, लू और कडी सर्दी से बचत के लिए जाली पर टाट के पर्दे डाल दिए जाते है। दरबे के बाहर मुर्गियों के घूमने फिरने के लिए एक-बाडा होना चाहिए। बाड़े की चारदीवारी छे फुट ऊँची होनी चाहिए। दरबे और बाडे की लम्बाई चौडाई मुर्गियो की संख्या पर निर्भर है। अगर मुर्गियाँ भारी नस्ल की न हो तो बाडे की चार-दीवारी ऊँची रखनी चाहिए।


मुर्गियो का दरबा

अच्छी नस्ल के अडे और बच्चे प्राप्त करने के लिए अच्छी नस्ल की मुर्गियाँ पालना जरूरी है। अच्छी अंग्रेजी नस्ल की मुर्गियों में लेग हार्न, न्यू हैम्पशायर, लाइट ससेक्स, रोड आइलैड इत्यादि मशहूर है। मुर्गी पालने का धधा कम से कम अच्छी नस्ल की दस मुर्गियो से शुरू करना चाहिए, जिनमे नौ मादा और एक नर हो। उन दस के अलावा चार पाँच देशी मुर्गियाँ रखना भी


खराब मुर्गी   अच्छी मुर्गी


अच्छी मुर्गी, बडी कलगी, चोच दरमियानी, आँखें चमकदार, पीठ चौडी और बडी।


खराब मुर्गी
कलगी छोटी, चं
लम्बी और पत
आँखे धँसी हुई प
पीठ तंग।


लाइट ससेक्स नस्ल की मुर्गियाँ

जरूरी है। देसी मुर्गियों को अंडों पर बिठाकर अच्छी नस्ल की मुर्गियों की संख्या बढ़ाते रहना चाहिए।

अंडों पर बिठाने के लिए किसी जान पहचान की जगह से ऐसी पठोर मुर्गियाँ खरीदनी चाहिए, जिन्हें कोई बीमारी न हो। देसी मुर्गियों को दरबे में रखने से पहले उनके परों और बाजुओं में नीम का तेल जरूर मल देना चाहिए, क्योंकि खुद अंडे देने के बाद वही मुर्गियाँ कुडक होकर अच्छी नस्ल की मुर्गियों के अंडे सेती हैं। यदि वे रोगी हुई तो उनकी बीमारी दूसरी मुर्गियों और उनके बच्चों को भी लग जाएगी।

मुर्गियों को अंडे देने के वास्ते शांति और एकान्त की जरूरत होती है। इसके लिए बालू से आधी भरी हुई, कम ऊँची और चौड़े मुँह की मिट्टी की एक नाँद रख देना चाहिए, ताकि उसमें दो तीन मुर्गियाँ एक साथ आराम से बैठकर अंडे से सकें।

आजकल अपने आप बंद होनेवाला एक दरबा भी बाजार में मिलता है। बड़े पैमाने पर मुर्गी पालनेवालों के लिए वह अच्छी चीज़ है। अंडे से बच्चे निकालने की एक मशीन भी आती है। वह दो प्रकार की होती है। एक मिट्टी के तेल से चलनेवाली और



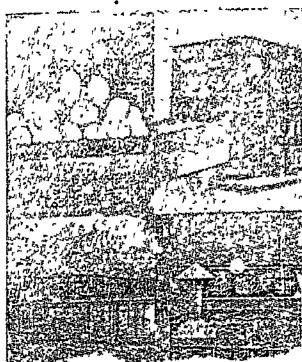
दूसरी बिजली से चलनेवाली। उस मशीन को 'सेनी' कहते है। उससे एक साथ ५० अंडे सेये जा सकते है।

कुड़क मुर्गी के नीचे ९ से १२ तक अंडे रखे जा सकते है। अंडे सेते समय मुर्गी को ठोस भोजन देना चाहिए, ताकि वह अधिक से अधिक देर तक अपने परों मे अंडों को छिपाए बैठी रहे। तीसरे पहर दस पन्द्रह मिनट के वास्ते मुर्गी को बाहर निकाल देना चाहिए। मुर्गी के नीचे अंडे रखने का समय जुलाई से मार्च तक होता है। परन्तु सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर तथा मार्च के महीने सबसे अच्छे माने जाते है। बडी नस्ल के बच्चे ९ महीने और छोटी नस्ल के छे महीने की उम्र मे अंडा देना शुरू कर देते है।

अंडों मे से निकले हुए बच्चे चूजे कहलाते है। अंडे से निकलने के बाद ३६ से ४८ घंटे तक उन्हे कुछ खाने पीने को नही देना चाहिए। उसके बाद उन्हे पानी, मक्खन निकला हुआ दूध और बारीक चुगा देना चाहिए। ६ छटांक मका के आटे मे ३ छटाक ज्वार का आटा, ४ छटांक मूंगफली की खली और २ छटांक गेहूँ का चोकर मिलाकर चुगा बना लेना चाहिए। उसमे थोडा सा नमक भी डाला जा सकता है। डबल रोटी का चूरा, गेहूँ और चावल का दलिया भी उचित भोजन है।

लकडी या मिट्टी के किसी छिछले बर्तन मे चूजो के लिए दाना पानी रख देना चाहिए, ताकि अपनी इच्छा के अनुसार वे जब चाहे खा पी सके। डेढ महीने के हो जाने पर चूजो को हैजा, चेचक आदि छूत की बीमारियों के टीके लगवा देना चाहिए। छे महीने

एक मुर्गीखाने में ताजे निकाले हुए अंडे



लाहा पाना क साथ मिला रहता है। उस पानी को पीने से मुर्गी के पर जल्दी नहीं झडते और वह अंडे अधिक देने लगती है।

मुर्गियो को आम तौर से तीन तरह के रोग होते है—

(१) हैजा और चेचक आदि छूत की बीमारियां।

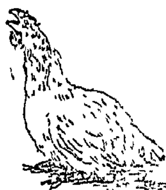
(२) अपच, और पेचिश जैसी पेट की बीमारिया।



मुर्गियो के कुछ रोगों की पहिचान







हवा की नाली में सूजन —मुर्गी अक्सर बैठ जाती है और जोर २ से हांफने लगती है।



चेचक



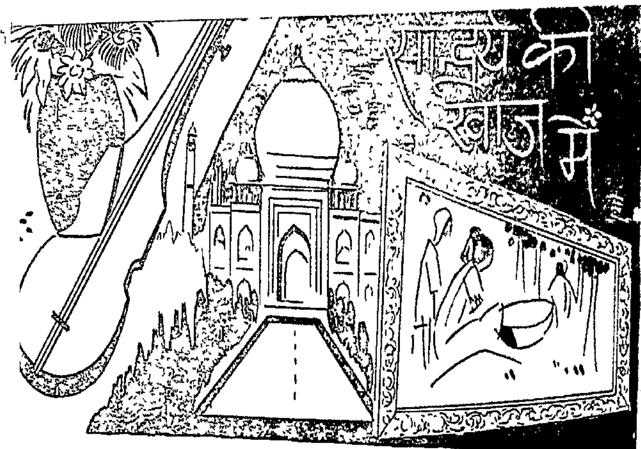
पैर के तलवे

(३) और बाहरी बीमारियाँ, जैसे चोट लगना, अडे खाने लगना और खपरा हो जाना इत्यादि।

छूत की बीमारियो से बचाव के लिए सबसे अच्छा इलाज टीका लगवाना है। जो मुर्गियाँ पेट के रोगो की शिकार हों उनको दरबे से अलग कर देना चाहिए। बाहरी बीमारियों का मामूली इलाज करना चाहिए। उन बीमारियों का असर बच्चो पर नही पड़ता।

मुर्गीखाने की ठीक देख भाल करते रहने से मुर्गियाँ रोग से बची रहती हैं। उन्हे रोग से बचाने के लिए यह जरूरी है कि कौए आदि उनके खाना पानी को गदा न करने पाएँ। किसी भी बीमार मुर्गी को बाड़े मे रहने या आने न दे। मौसम की सख्ती से मुर्गियो को बचाते रहे और मुर्गीखाने मे रत्ती भर भी गदगी न रहने दे। किसी मुर्गी को अनमनी देखते ही उसे तुरंत बाडे से बाहर निकाल दे। कीड़े मकोड़ो से बचाने के लिए महीने मे दो बार दरबे मे गैमक्सीन जरूर छिड़किए। इन सब बातो पर ध्यान रखने से मुर्गियों को बीमार पड़ने से काफी हद तक बचाया जा सकता है।

भारत के हर राज्य मे सरकारी मुर्गीखाने है। और उनकी शाखाएँ पूरे राज्य में फैली होती है। सरकारी आदमी गाँव गाँव जाकर मुफ्त सलाह देते है और सस्ते अडे मुर्गियाँ भी पहुँचाते है। सरकारी मुर्गीखानो का मेम्बर बन जाना चाहिए। मुर्गीखानो के अधिकारियो से खुद भी मिलकर जानकारी प्राप्त की जा सकती है। उनसे यह भी मालूम किया जा सकता है कि लाभ उठाने के लिए मुर्गीखाने को किस तरह चलाना चाहिए। देहली मे किंग्सवे कैंप पर 'जगत् पोल्ट्री फार्म' एक अच्छा लाभदायक फार्म है। इसी तरह एटा मे एक अच्छा फार्म 'मिशन पोल्ट्री फार्म' है।



अजन्ता और एलोरा

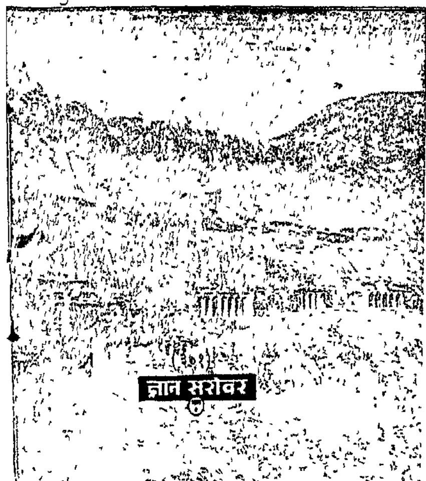
हजारो साल पहले हमारे देश मे पहाड काटकर मदिर बनाने की प्रथा चल पड़ी थी। तब से सैकडो गिरि-मदिर भाँजा, कार्ले, कन्हेरी, नासिर, वरार आदि मे बनते रहे। मनुष्य की बनाई भारतीय गुफाओ मे अजन्ता की गुफाएँ शायद


अजन्ता के गुफा मन्दिरो

सबसे पुरानी है। एलोरा एलिफेंटा आदि की गुफाएँ सबसे बाद की है।

बम्बई और हैदराबाद के बीच नगे पहाड़ो की एक माला उत्तर से दक्षिण तक चली गई है। उसे सह्याद्रि पर्वतमाला कहते है। अजन्ता के गुफा मदिर उसी पर्वतमाला मे है। उनके पास ही थोड़ी दूर पर वाघुर नदी पहाडो के पैर मे साँप सी लिपटकर कमान की तरह मुड़ गई है। वहाँ सह्याद्रि पर्वतमाला यकायक आधे चाँद जैसी बन गई है। वहाँ ऊँचाई कोई ढाई सौ फुट है। हरे भरे बन के बीच एक पर एक सजाए गए मच की तरह ऊँची उठती हुइ वह पर्वतमाला हमारे पुरखो को भा गई। उन्होंने पहाड काटकर खोखले किए फिर उनमे सुदर भवन बनाए और उन भवनों के खभो पर विहँसती हुई मूर्तियाँ उभारी। इतना ही नही, भवनो के भीतर की दीवारे और छते भी रगड कर चिकनी की और उनकी सतह पर चित्रो की एक दुनिया बसा दी। दूर दूर तक उन चित्रो की सुदरता की धूम मच गई। पर समय ने पलटा खाया। अजन्ता और उसको जीवन देनेवालो का युग खत्म हो गया। जगल ने गुफाओ को चारो ओर से ढक लिया। पास रहनेवाले भी भूल गए कि वे एक महान् कलामडप के निकट बसते है।

१ सिलसिले का दृश्य



आज से कोई अस्सी साल पहले पुराने हैदराबाद राज्य मे अजन्ता के पास अंग्रेजी सेना की एक टुकडी ठहरी थी। एक दिन उसका एक कप्तान शिकार के पीछे घोडा दौड़ाता उधर निकला, तो सहसा उसकी नजर सीढियो के एक सिलसिले के ऊपर चित्रो से भरे भवनों की पाँति पर टिकी। वह घोडे से उतरकर एक भवन मे घुसा। बरामदे और हाल की दीवारो पर छाई हुई छटा को देखकर वह ठगा सा रह गया। उसी कप्तान की बदौलत ससार ने अजन्ता की गुफाओ को फिर से पाया।

अजन्ता की गुफाओ की दीवारो पर गुमनाम कलाकारो ने जीवन की सारी भिन्नताएँ दिखलाकर कूची और छेनी की जबानी जीवन के समूचेपन की कहानी पेश की है। कही बदरो की कहानी है, तो कही हाथियो और हिरनो की। कही क्रूरता और भय की कहानी है, तो कही दया और त्याग की। जहाँ पाप दरसाया गया है, वहाँ क्षमा का सोता भी फूट रहा है। कलाकारो ने राजा और कगाल, विलासी और भिक्षु, नर और नारी, मनुज और पशु, सभी के चित्रो से गुफाओ को सजाया है। उन चित्रो मे महात्मा बुद्ध का जीवन हजार धाराओ मे होकर बहता है।

बुद्ध कही हाथ मे कमल लिए खड़े है और उनके उभरे नयनो की ज्योति मन्द मन्द धारा की तरह आगे को फैलती जा रही है। और पास ही उसी तरह कमलनाल धारण किए यशोधरा त्रिभग मे खडी है।

लडते हुए हाथी



फिर यशोधरा और राहुल के चित्र है--भिन्न भिन्न अवस्थाओं के, अलग अलग भावनाओं के। उनमें से एक है 'महाभिनिष्क्रमण' का चित्र। उस समय का चित्र जब गौतम सदा के लिए ससार की माया से नाता तोड़कर घर छोड़ रहे हैं। यशोधरा और राहुल नीद मे खोए हुए भी गौतम के गृहत्याग पर जैसे अपने धडकते हुए हृदयों को सँभाले हुए हैं। बालक राहुल के साथ यशोधरा का एक और चित्र वह है, जब बुद्ध पति की तरह नही भिखारी की तरह यशोधरा के दर्वाजे पर आते है और भिक्षा-पात्र को आगे बढ़ा देते है। यशोधरा का जीवनधन भिखारी बन कर आया है। वह क्या दे, क्या न दे? वह महाभिक्षु तो सोना-चाँदी, मणि-माणिक्य, हीरा-मोती को मिट्टी के मोल भी नही गिनता। पर नही, उसके पास कुछ है, जो हीरा-मोती से भी कही अधिक मूल्यवान है। उसका एक मात्र लाल, उसके कलेजे का टुकड़ा राहुल। और वह झट राहुल को बुद्ध की ओर बढा देती है। चित्रकार ने जैसे उस घड़ी मे यशोधरा के खुशी से मगन रूप को अपनी रेखाओं मे बाँध लिया है।

महाभिक्षु को यशोधरा की भिक्षा

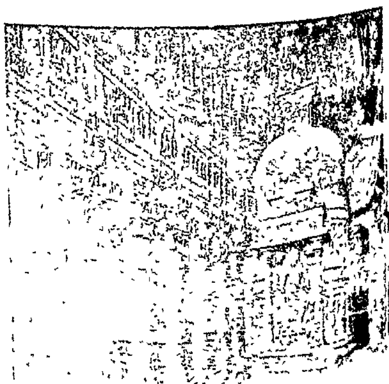


अजन्ता के गुफा मंदिरो मे बुद्ध के पिछले जन्मों की कथाओ के भी ढेरो चित्र मौजूद है। बुद्ध के पिछले जन्म की कथाओं को "जातक" कहते है।

जातक कथाएँ कुल ५५५ है, और जिस पुस्तक मे उन्हे संग्रह किया गया है, उसे भी 'जातक' ही कहते है। जातको का बौद्धो मे बडा मान है। जातको के अनुसार बुद्ध अपने पिछले जन्मो मे हाथी, बदर, हिरन आदि के रूप मे कई योनियो मे पैदा हुए थे और ससार के कल्याण के लिए दया और त्याग का आदर्श कायम करके बलिदान हो गए थे। बुद्ध के पूर्व जन्म के चित्रो मे यह बडी खूबसूरती के साथ दिखाया गया है कि उस समय पशुओ तक ने उचित राह पर चलने मे किस प्रकार कष्ट सहे और त्याग किए।

अजन्ता मे लगभग २९ गुफाएँ है, जो २५० फुट ऊँचे सीधे खड़े पहाड को हाथ से काटकर बनाई गई है। उनके बनाने मे कितना समय, कितनी मेहनत, कितना धन लगा होगा इसका कुछ अनुमान उन गुफाओ को देखकर किया जा सकता है, जो पूरी नही बन पाई है। शायद किसी राजनीतिक उथल पुथल के कारण कला के उस अद्भुत ससार की रचना बद हो गई होगी और कुछ गुफाओ को अधूरी ही छोड़कर उनके सिरजनहार अपनी राह चल दिए होंगे। कुल २९ गुफाओ मे से २४ विहार और ५ चैत्य है। विहार एक प्रकार के मठ होते थे, जिनमे बौद्ध भिक्षु रहा करते थे। चैत्य एक प्रकार के मदिर थे, जिनमे पूजा के लिए स्तूप या बुद्ध की मूर्ति स्थापित होती थी।

एक चैत्य का भीतरी भाग



अजन्ता के गुफा मदिरो के बाहर बरामदे की दीवारो मे मेहराबनुमा खिडकियाँ है, जो भीतर रोशनी पहुँचाने के

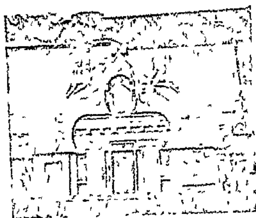
लिए बनाई गई थी। उन खिड़कियों की बनावट लकड़ी की खिड़कियों जैसी है, और उनके बाहर और भीतर बुद्ध की अनेक मूर्तियाँ बनी हुई हैं। वे मूर्तियाँ असाधारण रूप से सुघर हैं। फिर भी उनकी सुघरता उभर नही पाती। चित्रों की सुदरता उसे दबा लेती है, क्योकि अधिकतर गुफा मदिरों की दीवारों पर और छतो पर भी एक से एक सुदर चित्र छाए हुए हैं।

अजन्ता की गुफाओं का निर्माण ईसा से करीब दो सौ साल पहले शुरू हो गया था, और कोई नौ सौ साल तक चलता रहा। यानी सातवी सदी तक वे गुफाएँ बनकर तैयार हो चुकी थी। एक दो गुफाओं मे करीब दो हजार साल पुराने चित्र भी सुरक्षित हैं। पर अधिकतर चित्र पाँचवी और सातवी सदी के बीच के ही बने हैं। पहली गुफाओं और पहले चित्रो के बनने के समय अजन्ता और दक्षिण भारत मे आध्र-सातवाहनो का राज्य था और आखिरी गुफाओ और चित्रो के समय चालुक्यो का। चालुक्यो के दरबार मे ईरान के बादशाह खुसरू दूसरे ने राजदूत भेजे थे। फलत अजन्ता मे ईरानी लोगो का भी चित्र आँक दिया गया। उतने पुराने युग मे जितने अधिक और जैसे जीते जागते, चलते फिरते से चित्र अजन्ता मे बने वैसे और कही नही बने।

एलोरा अजन्ता से लगभग ७५ मील दूर औरगाबाद जिले मे है। जैसे अजन्ता के चित्रो की खूबसूरती बेमिसाल है, वैसे ही एलोरा की मूर्तियो की कारीगरी बेजोड है। पर इसका यह अर्थ नही है कि एलोरा की दीवारो पर चित्रकारी है ही नहीं, जैसे अजन्ता मे मूर्तियो के होते हुए भी प्रधानता चित्रो की है, वैसे ही चित्रो के बावजूद

ईरानी राजकुमार और राजकुमारी





लोरा के एक गुफा मदिर के ऊपरी तले का बाहरी भाग

एलोरा मे प्रधानता मूर्तियो और बेलबूटों की है।

एलोरा के मदिरो की संख्या तीस से ऊपर है। वे मदिर लगभग बारादरी के नमूने पर दो दो तीन तीन मजिलो मे कटे हुए है, जबकि अजन्ता की गुफाएँ एक ही तल की है और एक ही नजर मे वहाँ की सारी खूबसूरती समेटी जा सकती है। यो तो ठोस पहाड को काटकर एक मजिल के भवन बनाना भी कुछ आसान काम नही है, पर उसे काटकर उसमे दो और तीन मजिल की इमारते बनाना तो बहुत ही बिरते का काम है।

अजन्ता के चैत्य और विहार बौद्धो के है, पर एलोरा मे बौद्ध, हिन्दू और जैन तीनो धर्मों के विहार और मदिर मौजूद है। उनमें एक चैत्य और ग्यारह विहार बौद्धो के है, सत्रह हिन्दू मदिर है और बाकी जैन। भारत मे धर्मों और सप्रदायो की विविधता हमेशा रही है, पर कलाकारो ने कला के सृजन मे हिन्दू, बौद्ध आदि के भेद कभी नही किए। एक ही कला-रूप का विकास होता रहा, और बौद्ध, हिन्दू, जैन सभी कलाकार उसका समान रूप से व्यवहार करते रहे। उनके अधिकतर देवता भी समान है। यही कारण है कि एलोरा मे तीनो सप्रदायो के मदिरो की रचना मे एक ही कला-रूप अपनाया गया है। उनमे एक ही प्रकार के कटाव अपने भिन्न भिन्न रूपो मे बरते गए है।

एलोरा में एक जैन देवी की मूर्ति



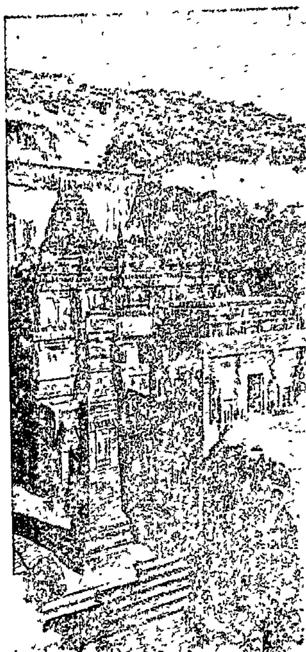
मोटे, चिकने, चमकते हुए खंभो पर इतने सुदर ग्रौर अनन्त वेलवूटे काटे गए है कि देखकर अचरज होता है। ऐसे सुदर खभे भारत के दूसरे गुफा मदिरो मे ग्रौर कही देखने मे नही आते।



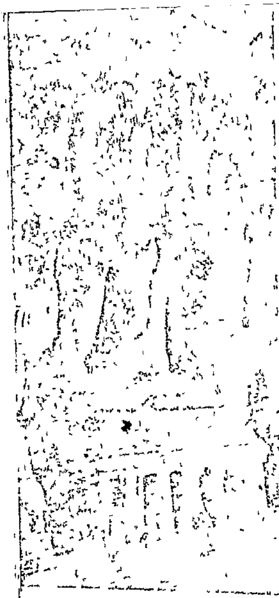
एलोरा के चिकने चमकते हुए खभ

एलोरा के मदिर लगभग तीन सौ वर्ष मे राष्ट्रकूट राजाग्रो के समय मे वने थे, जिन्होने छठी सदी से लेकर लगभग नवी सदी तक राज्य किया था। अकेले कैलाश मंदिर लगभग १०० साल मे बना। दगावतार मदिर सगतरागी का अद्भुत नमूना है, जिसमें विष्णु के दसों अवतारों की अत्यन्त सुंदर मूर्तियाँ बनी हुई है।

कैलाश मदिर



परंतु एलोरा के मदिरों का मुकुटमणि तो कैलाश मंदिर ही है, जिसमे शिव की भव्य मूर्ति विराज रही है। ससार मे चट्टान काटकर सैकडों मदिर वनाए गए है, पर कैलाश के जोड का मदिर कही नहीं बना। पहाड की कोख से तीस लाख हाथ पत्थर निकालकर एक इतनी विशाल दुमजिली इमारत गढ दी गई है, जिसमे मय अपने हाते के समूचा ताजमहल रख दिया जा सकता है। आदमी के पौरुष का इतना वडा सबूत ग्रौर कही देखने मे नही



कैलाश मन्दिर में महायोगी शिव की मूर्ति

आना। शिव के मदिरो में आमतौर मे सूराखदार घडे लटका दिए जाते है, ताकि शिवलिग पर निरतर जल की बूंदे टपकती रहे। पर कैलाश के कलाकारो को ऐसी मामूली कल्पना नही भाई। उन्होने इजीनियरी का ऐसा चमत्कार दिखाया कि आज के बडे बडे इजीनियर भी उसे देखकर दातो तले उँगली दबा लेते है। कैलाश मदिर गढनेवालों ने दूर बहती एक नदी की धारा को मोड दिया और पहाडो के अदर ही अदर उसे इस प्रकार शिवलिग पर सरका लाए कि आज हजारो साल बीतने के बाद भी मूर्ति पर निरतर जल टपकता रहता है। उस मदिर मे चट्टानो से काटकर समूचे के समूचे हाथी खड कर दिए गए है। इसी प्रकार काल भैरव, काली और शिवजी के भिन्न भिन्न गणो की भयानक और डरावनी मूर्तियाँ भी गढी गई है, जो एक से एक सजीव और जीती जागती दिखाई देती है।

एलोरा के हिन्दू गुफा मदिरो मे दो और मदिर बहुत महत्व के है। एक मे शकर का ताण्डव नृत्य और दूसरे में रावण के कैलाश पर्वत



रावण का कैलाश उठाना

उठाने का दृश्य बडी सुदरता से उभारा गया है। शिव के ताण्डव नृत्य मे असाधारण वेग दिखलाकर जैसे पत्थर मे प्राण फूंक दिए गए है। उसी प्रकार असीम शक्ति और महान् परिश्रम के सयोग से रावण के रूप मे से जैसे एक अद्भुत तेज फूट रहा है। लगता है कि जैसे कैलाश पर्वत की चूले ढीली हो गई है, और सृष्टि उलट पलट होनेवाली है।

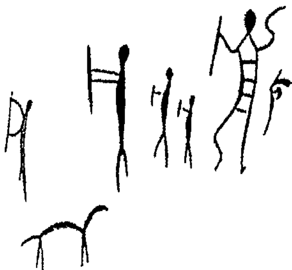
तांडव करते हुए शिव



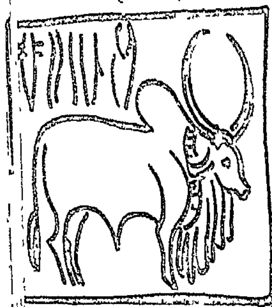
अजन्ता और एलोरा के मदिर ससार के गुफा मदिरो मे बेमिसाल है।

(२) भारतीय चित्रकला

भारतीय चित्रकला के सबसे पुराने नमूने सिंहनपुर और मिर्जापुर की गुफाओं में मिलते हैं, जो कम से कम दस और अधिक से अधिक पचीस हजार साल पुराने कहे जाते हैं। उन गुफाओं की दीवारों पर हाथियों, जंगली सांडों, बारहसिंघों और आदमियों की भी शक्लें लकीरों से बनाई गई हैं। उनमें शिकार के दृश्य भी हैं, जिनमें उत्साह और फुर्ती की झलक बहुत साफ है।



आदि चित्रों का नमूना

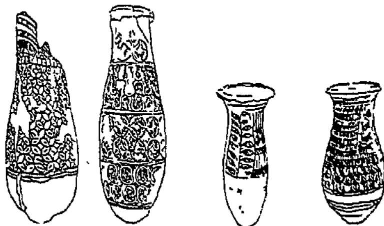


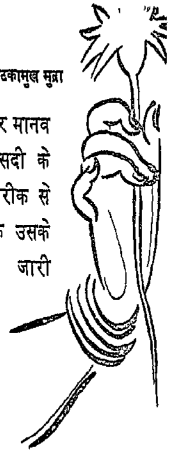
सांड का चित्र (मोहनजोदडो)

उसके बाद के जो चित्र मिलते हैं, वे लगभग पांच हज़ार साल पुरानी सिंधु घाटी की सभ्यता के जमाने के हैं। वे मोहनजोदडो, हडप्पा और नाल में पाए गए हैं। उस जमाने में आदमी ने अभी कागज़ का इस्तेमाल नहीं सीखा था। इसलिए वह अपने बर्तनों और मटकों को चटक रंगों से रंगता था और उन पर जानवरों आदि की शक्लें बनाता था।

उसके बाद के लगभग ३,००० साल में भारतीय चित्रकला में क्या कुछ हुआ इसका पता नहीं चलता। उस जमाने के चित्रों के नमूने हमें नहीं मिलते। पर संस्कृत साहित्य

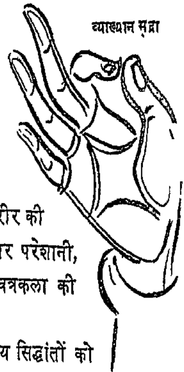
हडप्पा में पाए गए बर्तन, जिन पर चित्रकारी की हुई है





कटकामुख मुद्रा

में चित्रों से सजे बड़े बड़े कमरों, चलती फिरती नुमाइशो और मानव चित्र बनाने का अनेक बार जिक्र आया है। तीसरी ई० सदी के वात्स्यायन के प्रसिद्ध ग्रंथ कामसूत्र मे चित्रकला के बारीक से बारीक सिद्धान्त बताए गए है, जिससे यह साफ प्रगट है कि उसके सदियो पहले से चित्रकला का नियमित अभ्यास जारी था। उससे यह भी पता चलता है कि चित्रकार के लिए नृत्यकला की जानकारी एकदम जरूरी समझी जाती थी। इसमे शक नही कि भारतीय चित्रकला की जो अपनी निजी खूबियाँ है--- यानी शरीर की, खासकर हाथ की, 'मुद्राएँ' और 'भग' यानी उठने, बैठने, चलने, फिरने आदि हर प्रकार के अग सचालन मे एक लय और ताल का होना--उनसे यह साफ मालूम होता है कि गति की वह सारी सुदरता नृत्यकला से सीखी गई थी। प्राचीन भारत की चित्रकला की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि आदमी के शरीर की नसे उभरी हुई नही मिलेगी, और न चेहरे पर परेशानी, चिता या कष्ट के भाव मिलेंगे। भारतीय चित्रकला की यह विशेषता उसकी बिल्कुल अपनी है।

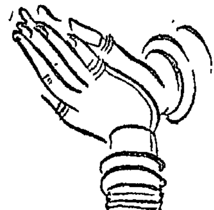


व्याख्यान मुद्रा



त्रिभग

असल मे चित्रकला के उन्ही भारतीय सिद्धांतों को अजन्ता के चित्रकारो ने अमली जामा पहनाया था। अजन्ता



के चित्रो का युग भारतीय इतिहास का सुनहरा युग था। अजन्ता की दीवारो पर जो चित्र मिले है, उनमे सबसे प्राचीन शुंग और कुषाण राजाओ के समय के है। शुग राजाओ का काल मौर्यो के बाद यानी आज से कोई बाइस सौ साल पहले शुरू हुआ। उन चित्रो मे सबसे पुराने चित्र अजन्ता की नवी और दसवी गुफाओ मे है। उन चित्रो मे बनी पगड़ियो की शक्ल सामने से गॉठदार है, जैसा कि शुग राजाओ के समय मे रिवाज था।

गुप्त राजाओ का जमाना तीसरी चौथी सदी से छठी सदी तक रहा बाद मे वह हूणो के हमलो से टूट गया। पर देश की चित्रकला पर उस युग के चित्रों के चमत्कार का असर करीब करीब सौ साल और रहा। उसके बाद चालुक्य राजाओ का युग शुरू हुआ, और सातवी सदी मे उनका यश सबसे अधिक बढा। उसी जमाने मे अजन्ता के सबसे सुदर चित्र बने थे।

गुफाओ की दीवारो पर चित्र खास ढंग से बनाए जाते थे गुफाएँ खोदने के बाद पहले उनकी दीवारो को हमवार किया जाता था। फिर उन्हे लीपकर उन पर गोबर मिले पत्थर के पाउडर का लेप चढाया जाता था। बाद मे उन पर चूने का हल्का पलस्तर चढाकर दीवार की सतह को अलग अलग नाप के टुकडो मे बॉट लिया जाता था। फिर उन टुकडो मे रेखाओ द्वारा शक्ले उभारी जाती थी, और उन पर रग चढा दिए जाते थे।

गुफाओ की दीवारें और खंभे पलस्तर करके चि ऑकन योग्य बनाए जाते थ।









काबुलीवाला

मेरी छोटी लड़की मिन्नी पाँच बरस की है। वह घड़ी भर भी बोले विना नही रह सकती। चुप रहना वह जानती ही नही। पैदा होने के वाद बोलना सीखने मे उसे केवल एक साल लगा था। उसके बाद से हालत यह है कि वह जब तक जागती रहती है, जब तक सो नही जाती, तब तक जवान वंद रखकर एक मिनट भी नही गँवाती। उसकी माँ अक्सर डाँटकर उसका मुँह वंद कर देती है। लेकिन मुझसे यह नही होता। मिन्नी का चुप रहना मुझे बहुत अस्वाभाविक लगता है। इसलिए मुझसे उसका मौन देर तक नही सहा जाता। यही कारण है कि मुझ से वह बड़े उत्साह के साथ बात करती है।

सुबह को मैंने अपने उपन्यास का सत्रहवाँ अध्याय लिखना शुरू ही किया था कि मिन्नी आ गई। उसने आते ही शुरू कर दिया, "बापू ! हमारा दरबान रामलाल काग को कौआ कहता है। वह कुछ नही जानता। क्यों न बापू ?"

मै जब तक उसे वतलाऊँ कि हर प्रान्त या देश की भाषा में अन्तर होता है, मिन्नी ने एक दूसरा ही किस्सा छेड़ दिया। बोली, "देखो बापू, भोला कहता था कि हाथी अपनी सूंड से आकाश में पानी फेंकते है। बस बकता रहता है, दिन रात बकता है। उसका मुँह भी नही पिराता।"

उसके बाद मिन्नी मेरी लिखने की छोटी मेज के साथ मेरे पैरों के पास

गई। बैठकर वह "अगडम बगड़म" खेलने लगी। अपने दोनो घुटनों पर बारी बारी से थपकी मार मारकर वह जल्दी जल्दी कहने लगी। "अगडम बगड़म, अगडम बगडम"। उस समय मेरे उपन्यास के सत्रहवे अध्याय मे कथा का नायक प्रतापसिह नायिका कचनमाला को लेकर जेलखाने की ऊँची खिड़की से कूदने को तैयार था। वह अँधेरी रात मे नीचे वहनेवाली नदी मे कूद पडने को एक पैर आगे बढा चुका था।

मेरा घर सडक के किनारे है। एकाएक मिन्नी 'अगड़म बगड़म' खेलना छोडकर दौडी हुई खिडकी के पास गई और चिल्ला चिल्ला कर जोर से पुकारने लगी, "काबुलीवाला! ओ काबुलीवाला!"

एक लम्बा तडगा काबुली पठान सडक पर धीरे धीरे चल रहा था। वह एक मैला और ढीला ढाला लम्बा कुर्ता पहने था, सिर पर साफा था, पीठ पर एक झोली थी और हाथ मे दो चार अगूर के गुच्छे। कहना कठिन है कि उसे देखकर मेरी रतन जैसी बिटिया के मन मे क्या भाव पैदा हुए। वह काबुली को ताबडतोड पुकारने लगी। मैने सोचा अभी आकर वह मुसीबत की तरह सिर पर सवार हो जाएगा और मेरे उपन्यास का सत्रहवाँ अध्याय पूरा न हो पाएगा।

मिन्नी के बार बार जोर से पुकारने पर काबुली ने मुँह फेरकर हँसते हुए देखा और हमारे घर की ओर बढा। मिन्नी एकदम दौड़कर घर के भीतर भागी और लापता हो गई। उसके मन मे यह बात अन्धविश्वास की तरह समाई हुई थी की काबुली अपनी झोली मे उसके जैसे दो चार बच्चे बद रखता है।

"काबुलीवाला! ओ काबुलीवाला!"



उधर काबुलीवाला आया और हँसते हुए मुझे सलाम करके खडा हो गया। मैंने सोचा कि मेरे उपन्यास के पात्र प्रतापसिंह और कंचनमाला, दोनो ही बड़े संकट मे पड़े है, फिर भी इस आदमी को घर मे बुलाकर कुछ न खरीदना अच्छा न होगा। इसलिए कुछ खरीदा गया। उसके बाद सौदे के साथ साथ और भी दस तरह की बाते हुई।

अन्त मे जाते समय उसने पूछा, "बाबू, आपकी लडकी कहाँ गई ?"

काबुली के बारे मे मिन्नी के मन में जो भ्रम था,उसे दूर करने के विचार से मैंने उसे अन्दर से बुला भेजा। वह आई और मुझसे सटकर खड़ी हो गई। वह काबुली अपनी झोली के भीतर से कुछ किशमिश और खुबानी निकालकर उसे देने लगा मगर मिन्नी ने नहीं लिया। वह दूने सन्देह के साथ मेरे घुटनो से और भी सट गई। पहला परिचय इस तरह हुआ।

कुछ दिन बाद, सुबह किसी काम से बाहर जाते समय मैंने देखा कि मेरी सुपुत्री दर्वाजे की बेंच पर बैठी धडल्ले से बाते कर रही है और वही काबुली उसके पैरो के पास बैठा हँस हँसकर उसकी बाते सुन रहा है, बीच बीच मे टूटी फूटी हिन्दुस्तानी में अपनी राय भी देता जा रहा है। मिन्नी ने अपने पाँच साल के जीवन मे जितने लोगों से परिचय किया था, उनमें पिता के सिवा उसकी बात को इतने धीरज से सुननेवाला अभी तक और कोई नहीं मिला था। मैंने यह भी देखा कि मिन्नी का छोटा सा आँचल किशमिश बादाम से भरा हुआ है। मैंने काबुली से कहा, "तुमने उसे यह सब क्यो दिया ? अब कभी इस तरह न देना।" यह कहकर मैंने जेब से एक अठन्नी निकालकर उसे दी। उसने बिना संकोच के अठन्नी झोली मे डाल ली।

" काबुली हँस हँसकर बातें कर रहा था "



घर लौटा तो देखा कि उस आठ आने के कारण घर में सोलह आने गडबड मची हुई है। मिन्नी की माँ एक सफेद चमकती हुई गोल गोल चीज हाथ मे लिए मिन्नी को डाँट रही है, "यह अठन्नी तूने कहाँ से पाई ?" मिन्नी कह रही थी, "काबुलीवाले ने दी है।" माँ ने पूछा, "काबुलीवाले से तूने क्यो ली ?" मिन्नी ने रुँआसी आवाज मे कहा, "मैने नही माँगी। उसने आप ही दे दी।" मै मिन्नी को उस विपत्ति से उबार कर अपने साथ बाहर ले गया।

मुझे मालूम हुआ कि काबुली के साथ मिन्नी की वह दूसरी ही भेट नही थी। उस बीच लगभग रोज ही आकर और घूस मे पिस्ता, बादाम और किशमिश देकर उसने मिन्नी के छोटे से लोभी हृदय पर बहुत कुछ अधिकार जमा लिया है।

मैने देखा कि दोनो मित्रो मे कुछ बँधी टकी बाते और हँसी मजाक भी होता था। रहमत (काबुली का नाम) को देखते ही मिन्नी हँसकर पूछती थी, "काबुलीवाले, ओ काबुलीवाले, तुम्हारी इस झोली मे क्या है ?"

रहमत हँसते हुए जवाब देता, "हाँथी"।

झोली मे हाथी होना असम्भव बात थी। यही उसकी हँसी का सूक्ष्म भेद है। बहुत सूक्ष्म है, यह तो नही कहा जा सकता। फिर भी इस मजाक मे दोनो को खूब मजा आता था। और सर्दियो की सुबह मे एक जवान और एक नाबालिग बच्ची की सरल हँसी मुझे भी बहुत अच्छी लगती थी।

उन दोनो मे एक और बात होती थी। रहमत मिन्नी से कहता, "खोखी (मुन्नी) तुम ससुराल न जाना।"

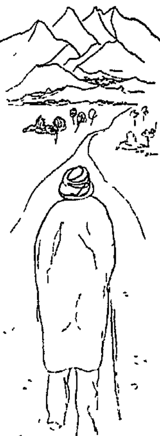
बगाली की लड़की जन्म से ही शशुर वाडी (ससुराल) शब्द से परिचित

होती है। लेकिन हम लोग कुछ आजकल के ढंग के आदमी थे, इस कारण हमने अपनी बच्ची को ससुराल की जानकारी नही कराई थी। इसलिए रहमत के अनुरोध को वह ठीक से समझ नही पाती थी। मगर किसी बात का कोई जवाब न देकर चुप रहना उसके स्वभाव के खिलाफ था। वह पलटकर रहमत से प्रश्न करती, "तुम ससुराल जाओगे ?" रहमत घूँसा तानकर कहता, "हम ससुर को मारेगा।" मिन्नी यह सोचकर कि ससुर नाम के किसी एक अनजाने जीव की पिटाई होगी, खिलखिलाकर हँस पड़ती।

सर्दियो के साफ सुथरे दिन है। पुराने समय मे राजा महाराजा लोग इन्ही दिनो दिग्विजय करने निकला करते थे। मै कभी कलकत्ता छोडकर कही नही जाता, इसलिए मेरा मन सारे संसार मे चक्कर काटता रहता है।

अपने घर के कोने मे बैठा हुआ भी जैसे मै सदा परदेश मे ही रहता हूँ। बाहर की दुनिया के लिए मेरा मन जाने कितना लालायित रहता है। पर मै ऐसा अचल हूँ, बिल्कुल पेड पौधो के स्वभाव वाला, कि घर का कोना छोड़कर कभी बाहर निकलने का प्रसग आने पर मेरे सिर पर गाज सी गिर पड़ती है। इसलिए सुबह को अपने छोटे से कमरे मे मेज के सामने बैठकर इस काबुली से गपशप करके मेरी घूमने की इच्छा बहुत कुछ पूरी हो जाती है। काबुली रहमत खॉ अपने बादल जैसे गभीर स्वर मे टूटी फूटी बंगला में कहता था, "दोनो तरफ़ ऊबड़ खाबड़, नीचे ऊँचे पहाड़ों की पाँत, ऊँचे पहाड़, बहुत दुर्गम। जले हुए काले या लाल रग के पत्थरो की शिलाएँ, एक के ऊपर एक, बेतरतीब, जिन पर चढना या चलना आसान नही। बीच मे तग रेगिस्तानी रास्ता, मरुभूमि। सामान से लदे ऊँट, कतार बाँधकर उस पर चल रहे

"नीचे ऊँचे पहाडो की पाँत"



है। सिर पर साफा लपेटे सौदागर, बैपारी और राहगीर, कोई ऊँट पर कोई पैदल। किसी के हाथ मे बर्छा, किसी के हाथ मे पुराने जमाने की बदूक। ।" काबुली की इसी तरह की अपने देश की बातों से तस्वीरो की तरह ये सब दृश्य घूम जाते थे।

मिन्नी की माँ बहुत ही शक्की स्वभाव की औरत है। उनके मन मे हमेशा शक बना रहता है कि दुनिया भर के शराबी खास तौर से हमारे घर को ताक कर दौडे आते है। इतने दिन (बहुत दिन नही, क्योकि अभी उनकी उम्र अधिक नही हुई) इस दुनिया मे रहकर भी यह भय-उनके मन से दूर नही हुआ कि इस दुनिया मे हर जगह चोर, डाकू, उठाईगीरे, शराबी, साँप, बाघ, भालू, मलेरिया, बिच्छू, चमगादड और गोरे भरे पड़े है।

रहमत खाँ काबुली के बारे मे उन्हे पूरी तरह से इतमीनान नही था। उनके मन का सन्देह अच्छी तरह नही मिटा था। वे मुझसे काबुली पर खास नजर रखने के लिए बार बार ताकीद कर चुकी थी। पर मै जब उनकी बातों को हँसकर उड़ा देने की कोशिश करने लगा, तो उन्होंने मुझसे बहुत से प्रश्न कर डाले। "क्या कभी किसी का बच्चा उडाया नही जाता? क्या काबुल देश मे गुलाम बनाने का दस्तूर नही है? क्या एक सयाने भारी भरकम काबुली के लिए एक छोटी सी बच्ची को चुरा ले जाना बिल्कुल असंभव है?"

मुझे मानना ही पडा कि बात असम्भव नही है, लेकिन विश्वास के लायक भी नही है। पर विश्वास करने की शक्ति सबमे बराबर नही होती। इसलिए मेरी स्त्री के मन मे भय बना ही रहा। फिर भी मै रहमत खाँ को अपने घर मे आने से न रोक सका।

"क्या बच्चा उडाया नहीं जाता?"



रहमत हर साल माघ के महीने के बीचोबीच अपने देश चला जाता है। वह उन दिनों अपना सारा पावना वसूल करने में बहुत व्यस्त रहता है। कर्जदारों के पास घर घर घूमना पड़ता है। फिर भी वह रोज एक बार मिन्नी को दर्शन दे जाता है या यों कहो कि उसे देख जाता है। देखने में ऐसा लगता है, जैसे दोनों के बीच एक षड्यन्त्र चल रहा है। जिस दिन वह सवेरे नहीं आ पाता, उस दिन शाम को आता है। अँधेरे कोठे के कोने में ढीला ढाला कुर्ता पाजामा पहने, उस लम्बे तड़ंगे आदमी को एकाएक देखकर सचमुच मन के भीतर एक आशंका उत्पन्न हो जाती है।

लेकिन मिन्नी, "काबुलीवाला, ओ काबुलीवाला!" पुकारती हँसती हुई दौड़ी आती है और दोनों अनमेल उम्र के मित्रों में वही हँसी मजाक होने लगते हैं। यह दृश्य देखकर मन प्रसन्न हो उठता है।

मेरी पुस्तक छप रही थी। एक दिन सुबह अपनी छोटी कोठरी में बैठा हुआ मैं उसी पुस्तक के प्रूफ पढ़ रहा था। जाड़ा विदा होनेवाला था, पर दो तीन दिन से सर्दी चमक उठी थी। लोगों के दाँत बजने लगे थे। खिड़की की राह से सुबह की धूप मेज के नीचे मेरे पैरों पर पड़ रही है। उसकी गरमी बहुत भली लग रही है, शायद आठ बजे का समय होगा। लोग हवाखोरी के बाद ठिठुरे ठिठुराए अपने घरों को लौट रहे हैं। इसी समय खिड़की के बाहर भारी शोर गुल सुनाई पड़ा।

आँख उठाकर देखा, हमारे रहमत खाँ को दो सिपाही बाँधे लिए आ रहे हैं, पीछे नटखट लड़कों का झुंड हुल्लड़ मचाता चला आ रहा है। रहमत खाँ के कपड़ों में खून के दाग हैं, और एक सिपाही

"दो सिपाही बाँधे लिए आ रहे हैं"



के हाथ मे खून से भरा एक छुरा है। मैंने दर्वाजे के बाहर जाकर सिपाहियो को रोका वे खडे हो गए। मैंने पूछा, "मामला क्या है ? . "

कुछ सिपाहियो से और कुछ रहमत खाँ से सुनकर मुझे मालूम हुआ कि किसी ने रहमत खाँ से एक रामपुरी चादर ली थी। उसके कुछ दाम उस आदमी पर बाकी थे। रहमत के तगादे करने पर वह आदमी झूठ बोला और दाम देने से मुकर गया। इसी बात पर कहा सुनी हो गई, रहमत को गुस्सा आ गया, और उसने उस आदमी को छुरा मार दिया।

रहमत उस झूठे बेईमान को ऐसी ऐसी गालियाँ दे रहा था जो न सुनने लायक थी न सुनाने लायक। इतने मे "काबुलीवाला, ओ काबुलीवाला"! पुकारती हुई मिन्नी घर के बाहर निकल आई।

रहमत का चेहरा फौरन खिल उठा। आज उसके कन्धे पर झोली नही थी। इसलिए झोली के बारे मे हमेशा होनेवाले उनके सवाल जवाब आज नही हो सके। मिन्नी जिस तरह हँसी मे हमेशा पूछा करती थी उसी तरह छूटते ही पूछ बैठी, "तुम ससुराल जाओगे ?"

रहमत ने हँसकर कहा, "वही तो जा रहा हूँ।"

उसने देखा, इस उत्तर से मिन्नी को हँसी नही आई। तब वह हाथ दिखाकर बोला, "ससुरे को मारता, पर क्या करूँ हाथ बँधे है।"

घातक चोट पहुँचाने के अपराध मे रहमत को कई साल की सजा हो गई।

इसके बाद कुछ दिन मे उस पठान को मैं बिल्कुल भूल गया। मुझे इस बात का ख्याल भी नही आता था कि जब हम लोग घर मे बैठकर रोज काम काज करते हुए दिन बिता रहे थे, तब एक स्वाधीन जाति का वह पहाड़ी आदमी जेलखाने की ऊँची दीवारो के भीतर किस तरह वर्ष काट रहा होगा।

मिन्नी का रवैया और भी लज्जाजनक था। उसने खुशी से अपने पुराने मित्र को भुलाकर पहले एक साईस से दोस्ती की। फिर जैसे जैसे उसकी उम्र बढती गई वैसे वैसे सखाओ के बदले धीरे धीरे एक पर एक सखियाँ जुड़ने लगी। यहाँ तक कि अब वह अपने बाप के लिखने पढने की कोठरी मे भी नही दिखाई देती। मैने तो उसके साथ एक तरह से कुट्टी ही कर ली है।

कई साल बाद, एक बार सर्दियो की बात है। मेरी मिन्नी का ब्याह ठीक हो गया है। 'पूजा' की छुट्टियो में उसका ब्याह होगा। कैलाश पर्वत पर वास करनेवाली भगवती (दुर्गा) के साथ साथ मेरे घर की आनन्दमयी मूर्ति भी पिता का घर अँधेरा करके पति के घर चली जाएगी।

सवेरा बहुत सुहावना और सुन्दर था। बरसात के बाद सर्दियो की नई धुली हुई धूप का रग सोहागे से गलाए गए खरे सोने जैसा हो रहा था। यहाँ तक कि गली के भीतर गदे और एक मे एक सटे घरो के ऊपर भी इस धूप की चमक ने एक अपूर्व शोभा बिखेर दी थी। आज मेरे घर मे रात बीतने से पहले ही शहनाई बजने लगी। उस शहनाई की वशी मेरी छाती की हड्डियो मे जैसे रो रोकर गूंज उठती है। मेरे मन मे समाई हुई, बेटी के वियोग की व्यथा को करुण भैरवी रागिनी शरत् की धूप के साथ जैसे सारे संसार मे फैला रही है। आज मेरी मिन्नी का ब्याह है।

सवेरे से ही शोर हो रहा था। लोगो का आना जाना जारी था। आंगन मे बाँस गाडकर पाल ताना गया था। घर के कमरे, कोठे और बरामदे मे झाड फानूस टाँगे जा रहे थे, उससे ठूँ ठाँ की आवाजे निकल रही थी।

मै अपने लिखने की कोठरी मे बैठा हिसाब देख रहा था। इसी समय रहमत खाँ आ टपका और सलाम करके खड़ा हो गया।

पहले तो मै उसे पहचान ही न सका। न उसके कन्धे पर वह झोली थी, न गर्दन तक लटकते हुए उसके लम्बे पट्ठे। उसके शरीर में भी पहले जैसा तेज नही था। अन्त मे उसके चेहरे पर पुरानी मुस्कान देखकर मैंने उसे पहचाना। मैंने कहा, "क्यो रे रहमत, कब आया तू ?"

उसने कहा, "कल शाम को ही जेल से छूटा हूं, बाबू।"

उसकी यह बात कानो मे जैसे खटक गई। किसी खूनी को मैंने कभी प्रत्यक्ष नही देखा था। इसे देखकर मेरा पूरा हृदय जैसे सिमट गया। मेरी इच्छा हुई कि आज काम के दिन यह काबुली यहाँ से चला जाता तो अच्छा होता।

मैंने उससे कहा, "आज हमारे घर मे एक काम है, मैं फँसा हूँ। आज तुम जाओ।"

मेरी बात सुनकर वह फौरन जाने के लिए तैयार हो गया। लेकिन दरवाजे के पास पहुँचकर कुछ हिचकिचाते हुए उसने कहा, "क्या मैं खोखी को एक दफा देख नही सकता ?"

वह शायद यह समझता था कि मिन्नी अभी वैसी ही, उतनी ही बड़ी होगी। पहले की ही तरह "काबुलीवाला, ओ काबुलीवाला," कहती हुई दौड़ी आएगी, और कुतूहल जगानेवाले उनके पुराने हँसी खेल मे किसी तरह का अन्तर नही पड़ेगा। यहाँ तक कि पहले की मित्रता को ध्यान मे रखकर ही रहमत खाँ एक पिटारी अंगूर और कागज की पुड़ियों मे कुछ किशमिश बादाम शायद अपने किसी देसावरी दोस्त से माँग कर लाया था। उसकी अपनी झोली तो अब थी नही।

मैंने कहा, "आज घर मे काम है। आज किसी से भेंट नही हो सकेगी।"

वह जैसे दुखी हो उठा। वह उस सन्नाटे मे दमभर खड़ा रहा,

फिर एक बार निगाह जमाकर उसनें मेरे मुंह की ओर देखा। उसके बाद "बाबू सलाम" कहकर दर्वाजे के बाहर हो गया।

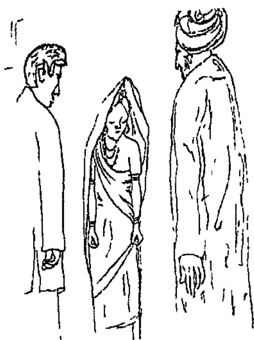
मेरे मन मे कुछ व्यथा का अनुभव हुआ। मै उसे पुकारने की सोच ही रहा था कि देखा वह खुद ही लौटा आ रहा है। पास आकर उसने कहा, ये "अंगूर, किशमिश और बादाम खोंखी के लिए लाया था, उसे दे दीजिएगा।"

उन्हे लेकर मै दाम देने लगा। उसने एकाएक मेरा हाथ पकड़कर कहा, "आपकी मुझ पर बड़ी मेहरबानी है। आपकी यह दया मुझे हमेशा याद रहेगी। मगर मुझे पैसे न दीजिएगा। बाबू, जैसे आपकी एक लड़की है, वैसे वतन में मेरी भी एक लड़की है। मै उसी के चेहरे को याद करके आपकी खोंखी के लिए थोड़ी मेवा लेकर आता हूँ। मै सौदा बेचने तो आता नही।"

इतना कहकर उसने बहुत ढीले ढाले कुर्ते के भीतर हाथ डालकर कहीं छाती के पास से मैले कागज का एक टुकड़ा निकाला। सँभालकर उसकी तहें खोली और कागज को मेरी मेज के ऊपर फैला दिया।

मैंने देखा, कागज के ऊपर एक छोटे से हाथ की छाप है। फ़ोटो नही है, तैलचित्र नही है, हाथ के पजे मे जरा सी राख मलकर उसकी छाप इस कागज़ पर ली गई है, जैसे अगूठे की निशानी ली जाती है। बेटी की इस यादगार को कलेजे से लगाए रहमत खाँ हर साल कलकत्ते के रास्तों मे मेवा बेचने आता था।

उस छाप को देखकर मेरी आँखों मे आँसू भर आए। तब मै यह भूल गया कि वह एक काबुली मेवेवाला है और मै एक इज्जतदार घराने का बंगाली हूँ। तब मैंने समझ लिया कि जो वह है, वही मैं हूँ। वह भी बाप है, मै भी बाप हूँ। बहुत दूर किसी पहाड़ी घर मे रहनेवाली उसकी बच्ची के नन्हे से हाथ



दुल्हन के वेश में मिन्नी को देखकर काबुली वाला सिटपिटा गया।

की छाप उसे मेरी मिन्नी की याद दिलाती है।

औरतो ने तरह तरह की आपत्ति की। लेकिन मैंने एक नही सुनी। दुल्हन के वेश में मिन्नी लजाती हुई मेरे पास आकर खड़ी हो गई।

उसे देखकर काबुलीवाला पहले तो सिटपिटाया। वह पहले की तरह अपनी बातचीत का सिलसिला नही जमा सका। अत मे हँसकर बोला, "खोखी, तुम ससुरबाडी (ससुराल) जाएगा।"

मिन्नी अब ससुराल का अर्थ समझती थी। वह पहले की तरह उत्तर नही दे सकी। रहमत का प्रश्न सुनकर लज्जा से लाल हो गई और मुँह फेरकर खडी हो गई। जिस दिन काबुलीवाला से मिन्नी की भेट पहले पहल हुई थी, वह दिन मुझे याद आ गया। मन न जाने क्यों व्यथित हो उठा।

मिन्नी के चले जाने पर एक गहरी साँस छोड़कर रहमत चुपचाप सहमा हुआ सा ज़मीन पर बैठ गया। एकाएक उसकी समझ मे आया कि उसकी लड़की भी अब इतनी ही बडी हो गई होगी। उसके साथ भी फिर नए सिरे से उसको जान पहचान करना होगी। वह उसे पहले की ही तरह नन्ही मुन्नी सी गुडिया नही पावेगा। और यह कौन जानता है कि इन आठ वर्षों मे उसका क्या हुआ?

मैंने उसे नोट देकर कहा, "रहमत, तुम अपनी लडकी के पास अपने देश लौट जाओ। तुम दोनो के मिलने का सुख मेरी मिन्नी का कल्याण करेगा। यह रुपया दान करने से मुझे दो एक खर्च काट देने पड़े। औरतों ने बहुत असन्तोष प्रकट किया। लेकिन मगल के आलोक से मेरा उत्सव चमक उठा।

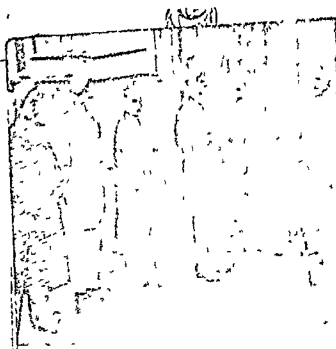
सन् १९०८ मे केसरी के कुछ लेखों को लेकर तिलक पर फिर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। उन्होंने अपने को निर्दोष बताते हुए अदालत मे कुल मिलाकर २५ घंटे तक भाषण दिया। उस भाषण से देश मे एक नया जीवन आया और अंग्रेजों की अदालतों मे जनता का विश्वास भी घटा, पर तिलक को सजा मिले बिना न रही। ५२ बरस की उम्र मे उन्हें छे साल की कड़ी क़ैद और १,००० रुपए जुर्माने की सजा दे दी गई। जिसके विरोध मे देश ने कई दिन तक हड़ताल मनाई। विद्यार्थी स्कूल कालिज नही गए और बम्बई की सूती मिलो के मजदूर लगातार छे दिन तक काम पर नही गए।

तिलक को सजा काटने के लिए बर्मा के मॉडले नगर की एक जेल में भेज दिया गया। वही उन्होंने गीता पर वह अनमोल पुस्तक लिखी, जिसका नाम "गीता-रहस्य" है। गीता-रहस्य मे श्री कृष्ण के उपदेश कर्मयोग की प्रेरणात्मक व्याख्या की गई है। सजा काटकर मॉडले जेल से छूटने पर ५८ बरस की उम्र मे उन्होने 'होमरूल' आदोलन शुरू किया। फल यह हुआ कि सन् १९१६ में उन पर फिर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। पर अपील मे हाई कोर्ट ने उन्हे बरी कर दिया। उसी साल लखनऊ मे काग्रेस अधिवेशन हुआ, जिसमें गरम और नरम दलों मे एक समझौता हो गया, और तिलक फिर काग्रेस में आ गए।

जब तिलक जेल मे थे, उस समय वेलंटाइन शिरौल नाम के एक अग्रेज़ ने "इडियन अनरेस्ट" (भारत मे अशाति) नाम की एक पुस्तक लिखी।

लंदन में तिलक १० हौलिप्लेस में ठहरे थे





लंदन में होमरूल लीग के शिष्ट मंडल में तिलक (बाएँ से तीसरे)

जिसमें तिलक को हिन्दू मुसलमानों का शत्रु, आदि कहा गया था। तिलक ने इंग्लैंड जाकर पुस्तक के लेखक पर मानहानि का मुकदमा चलाया। भारत सरकार ने उस मामले में शिरोल की खूब मदद की। तिलक मुकदमा हार गए। पर इस हार से अंग्रेजी अदालतो की साख को बडा धक्का पहुँचा। इंग्लैंड में रहते हुए तिलक ने वहाँ भी भारत के लिए "होमरूल आंदोलन" का खूब प्रचार किया।

भारत लौटने पर १९१८ मे उनकी साठवीं वर्षगांठ देशभर में धूमधाम से मनाई गई। उस अवसर पर जनता ने उन्हे एक लाख रुपए की थैली भेंट की। तिलक ने वह सब रुपए होमरूल लीग को दे दिए। उसके बाद ही देश मे १९१९ का वह कानून लागू हुआ जिसके अनुसार विलायत की पार्लमेंट ने भारत के लोगो को स्वराज्य के नाम पर कुछ थोथे अधिकार देकर टालना चाहा। १९१९ के दिसम्बर में कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन मे भाषण करते हुए तिलक ने उन अधिकारो को 'अधूरा, असतोष-प्रद और निराशाजनक' बताया। उसके बाद ही सन् १९२० की पहली अगस्त को बम्बई मे उनका देहान्त हो गया। सारा देश रो पड़ा। लाखों रोते बिलखते लोगो के साथ तिलक की अर्थी निकली। गाधी जी, नेहरू जी, लाला लाजपतराय और मौलाना शौकतअली आदि ने अर्थी को कधा दिया। उनके साथ मीलो लम्बा जलूस था। देश के करोड़ो लोगों ने दस दिन तक तिलक का मृत्युशोक मनाया।



लोकमान्य तिलक

बाल गंगाधर तिलक का जन्म २३ जुलाई सन् १८५६ को भारत के पश्चिमी समुद्र तट के एक कस्बे रत्नगिरि मे हुआ था। उनके पिता ने उन्हे बचपन से ही संस्कृत, गणित और मराठी की शिक्षा देना शुरू की, और १० वर्ष की उम्र मे वे संस्कृत समझने बोलने लगे। बाद मे उन्होने पूना हाई स्कूल से इन्ट्रेंस परीक्षा पास की और दकन कालिज मे भरती हो गए। वहाँ से उन्होने सन् १८७६ मे पहली श्रेणी मे बी० ए० पास किया। सन् १८७९ मे उन्होने कानून पढ़ना शुरू किया। कानून पढ़ते समय ही आगरकर से उनकी मित्रता हुई। आगरकर तिलक के साथ पढ़ते थे। दोनों ने मिलकर प्रतिज्ञा की कि हम अपना जीवन देश की सेवा मे लगा देंगे। सन् १८८० के शुरू मे दोनों मित्रों ने पूना मे एक स्कूल खोला, और जगह जगह ऐसे स्कूल खोलने की योजना बनाई





श्री आगरकर

जिनमे देश भक्त अध्यापक विद्यार्थियों मे देश प्रेम जगा सके। फलत सन् १८८४ में डकन एजूकेशन सोसाइटी बनी और सन् १८८५ में 'फ़रग्युसन कालिज' खुला।

उन्ही दिनों १ जनवरी सन् १८८१ को तिलक और आगरकर ने मिल कर दो साप्ताहिक पत्र निकाले। मराठी मे "केसरी" और अंग्रेजी में "मराठी"। पर अभी साल भी नहीं बीतने पाया था कि दोनो अखबारो पर एक मुसीबत आ गई। उनमें कोल्हापुर रियासत के बारे मे कोई गलत खबर छपी थी, जिसके छापने पर दोनों अखबारो मे खेद प्रकट कर दिया गया था। फिर भी रियासत ने दोनो पत्रो पर मानहानि का मुकदमा चला दिया और अदालत ने दोनो मित्रो को चार चार मास की कैद की सजा दे दी। जेल से छूटने पर जनता ने दोनो का शानदार स्वागत किया। जेल के फाटक से जलूस बनाकर लोगों ने उन्हे घर तक पहुँचाया।

उन दिनों जनता के बीच खुले आम देश की आजादी की बात करना आसान न था। बाल गगाधर तिलक ने जनता को जगाने और उसमे आजादी की भावना पैदा करने के लिए एक नया तरीका निकाला, उन्होने "गणपति उत्सव" और "शिवाजी जयन्ती" दो नए उत्सव मनाने शुरू किए। महाराष्ट्र मे गणपति उत्सव बहुत पहले से मनाया जाता था। पर बाल गगाधर तिलक ने उसे नए रूप मे ढाला। उसमे देश की हालत पर भाषण और देशभक्ति के गीतों के नए कार्यक्रम जोड़े गए। गणपति या


लाला लाजपत राय

गणेश हिन्दुओं के एक देवता हैं। पर हिन्दू मुसलमान सभी उन उत्सवों मे हिस्सा लेते थे। तिलक सरकार की दृष्टि में पहले ही चढ़ चुके थे। इसलिए अंग्रेज सरकार उन उत्सवों पर भी कड़ी नजर रखने लगी।


श्री बिपिन चन्द्र पाल

कुछ दिनों बाद बाल गंगाधर तिलक पूना की एक आम सभा में कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन के लिए प्रतिनिधि चुन लिए गए। कहा जाता है उस अधिवेशन मे लाला लाजपतराय और बिपिन चन्द्र पाल भी मौजूद थे। तीनों आगे चलकर बाल-पाल-लाल के नाम से देश के गरम दल के नेता मशहूर हुए।

सन् १८९७ मे प्लेग और अकाल के कारण महाराष्ट्र की जनता और खासकर किसान जनता दुखी और बेचैन हो उठी थी। तिलक ने एक बड़े पैमाने पर और संगठित रूप से जनता की सेवा की और प्लेग की रोकथाम का काम शुरू किया। उन्होंने सरकार से जनता की रक्षा करने और लगान में छूट देने की मॉग की और किसानो से निर्भय होकर कहा कि अगर तुम्हारे पास लगान देने को पैसे नही है तो घर का सामान बेचकर लगान मत अदा करो।

सरकार ने प्लेग के बीमारों को घरों से निकाल निकाल कर एक जगह अलग क्वारटीन मे जमा कर देना चाहा। अंग्रेज सिपाही इस काम के लिए नियुक्त किए गए कि वे घर में घुसकर प्लेग के बीमारों को जबरदस्ती

निकाल कर क्वारटीन में ले जावें। उन गोरे सिपाहियों ने अपना काम करने में अत्याचार करना शुरू कर दिया। घर घर में त्राहि त्राहि मच गई। तिलक ने गोरो के अत्याचारों के खिलाफ जोरदार लेख लिखे। एक दिन किसी ने रैंड और आयर्स नाम के दो अंग्रेज अफसरो को मार डाला। अत्याचार कुछ रुक गए। पर दूसरी तरह का दमन शुरू हो गया। उन दो अंग्रेजों की हत्या के लिए लोगो को उभाड़ने का आरोप लगाकर तिलक पर मुकदमा चलाया गया। कहा गया कि उन्होंने 'केसरी' में जोशीले लेख लिख-कर जनता को भड़काया, और उन्हें १८ महीने सख्त कैद की सजा दे दी गई।

अब तिलक केवल महाराष्ट्र के ही नही सारे भारत के नेता बन चुके थे। उनके मुकदमे की पैरवी और उनकी रिहाई का आदोलन भारत में फैल गया। अंग्रेजी पार्लमेंट के कई सदस्य, प्रसिद्ध विद्वान मैक्समूलर और डा० हण्टर जैसे लोग तिलक की योग्यता का लोहा मानते थे। उन्होंने महारानी विक्टोरिया से तिलक को रिहा करने की अपील की। एक वर्ष कैद काटने के बाद वे छोड़ दिए गए। छूटने पर दो दिन के भीतर दस हजार से ऊपर आदमी उनके दर्शन के लिए उनके घर आए। देश विदेश के बधाई पत्रो का ढेर लग गया।

सन् १९०५ में कांग्रेस मे दो दल हो गए थे--नरम दल और गरम दल। गरम दल के नेता बाल-पाल-लाल थे। "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है", तिलक का यह नारा देश के घर घर मे गूंज उठा था। गरम दलवालो ने विदेशी, खासकर अंग्रेजी, माल के बहिष्कार और स्वदेशी के प्रचार का आंदोलन शुरू किया। नरम दलवालो से उनका मतभेद बढ़ा। यहाँ तक कि सन् १९०७ की सूरत-कांग्रेस के बाद गरम दलवालो को कांग्रेस छोड़ना पड़ी, और उन पर जोरो के साथ दमन शुरू हो गया।